

गरुडपुराण

(प्रेतकल्प) हिन्दीटीका



अथ गरुडपुराणं हिन्दीटीकासमेतं प्रारभ्यते

संस्करण : सितंबर २०१९, संवत् २०७६

मूल्य : २५० रुपये मात्र ।

मुद्रक एवं प्रकाशक :
खेमराज श्रीकृष्णदास,
अध्यक्ष : श्रीवेंकटेश्वर प्रेस,
खेमराज श्रीकृष्णदास मार्ग, बम्बई-४०० ००४.

Printers & Publishers :
Khemraj Shrikrishnadass,
Prop: Shri Venkateshwar Press,
Khemraj Shrikrishnadass Marg, 7th Khetwadi,
Mumbai - 400 004.

Web Site : http://www.Khe-shri.com
Email : khemraj@vsnl.com

Printed by Sanjay Bajaj For M/s. Khemraj Shrikrishnadass, Proprietors Shri Venkateshwar Press, Mumbai - 400 004,
at their Shri Venkateshwar Press, 66 Hadapsar Industrial Estate, Pune 411 013.

श्रीगणेशायनमः ॥ धर्म ही जिसका बहुत पुष्ट मूल (तना) है, वेद जिसके स्कन्ध(गुद्दे) हैं, और पुराणरूपी शाखाओं से जो युक्त है, यज्ञ जिसके फूल हैं और मोक्ष जिसका फल है, ऐसा मधुसूदन रूपी वृक्ष सर्वोत्कर्ष अर्थात् सबसे अधिक है, इससे अधिक कोई नहीं ॥१॥ श्री विष्णुके क्षेत्र नैमिषारण्य में शौनकादि ऋषि भगवान् हरि की प्राप्ति के लिये हजार वर्ष में पूरा होने योग्य यज्ञ कर

श्रीर्जयति ॥ धर्मदृढबद्धमूलोवेदस्कन्धः पुराणशाखाढ्यः ॥ क्रतुकुसुमोमोक्षफलोमधुसूदनपादपोजयति ॥१॥
नैमिषेऽनिमिषक्षेत्रेऋषयः शौनकादयः॥ सत्रंस्वर्गायलोकायसहस्रसममासत ॥२॥ त एकदातु मुनयः प्रातर्हुतहु-
ताग्नयः ॥ सत्कृतंसूतमासीनंपप्रच्छुरिदमादरात् ॥३॥ ऋषय ऊचुः ॥ कथितोभवतासम्यग्देवमार्गः सुखप्रदः ॥
इदानीं श्रोतुमिच्छामोयममार्गंभयप्रदम् ॥४॥ तथासंसारदुःखानितत्क्लेशक्षयसाधनम् ॥ ऐहिकामुष्मिकान्क्लेशा-
न्यथावद्वक्तुमर्हसि ॥५॥

रहे थे ॥ २ ॥ एक समय प्रातःकाल में अग्नि होम किये हुये शौनकादि ऋषियोंने सत्कार किये गये बैठे हुये सूतजी से आदर पूर्वक यह पूछा ॥ ३ ॥ ऋषि बोलेः--सुखदेनेवाला देव मार्ग आपने ठीक तरह से कहा है, अब हम भय देनेवाला यम का मार्ग सुनना चाहते हैं ॥ ४ ॥ वैसे ही संसार के दुःख और क्लेशके नाश का उपाय, इहलोक और परलोक के क्लेशोंको आप यथार्थ कहने

योग्य हो ॥५॥ सूतजी बोलेः--पुण्यात्मा मनुष्यों को सुख देनेवाला तथा पापीजनों को दुःख देनेवाला यम का मार्ग है, जिस लोगों के सन्देह को दूर करने लिये कहूँगा॥७॥किसी समय वैकुण्ठ में सुख से बैठे हुये श्री हरि गुरु से विनयसे नम्र होकर गरुड ने

सूत उवाच ॥ श्रुणुध्वंभोविवक्ष्यामियममार्गंसुदुर्गमम् ॥ सुखदंपुण्यशीलानां पापिनां दुःखदायकम् ॥६॥ यथा श्रीविष्णुनाप्रोक्तं वैनतेयायपृच्छते ॥ तथैवकथयिष्यामि संदेहच्छेदनायवः ॥७॥ कदाचित्सुखमासीनंवैकुण्ठे श्रीहरिंगुरुम्॥ विनयावनतोभूत्वापप्रच्छविनतासुतः ॥८॥ गरुड उवाच॥ भक्तिमार्गंबहुविधःकथितोभवता मम ॥ तथाचकथितादेवभक्तानांगतिरुत्तमा ॥९॥ अधुना श्रोतुमिच्छामि यममार्गंभयंकरम् ॥ त्वद्भक्तिविमुखानांचतत्रैव-गमनं श्रुतम् ॥१०॥ सुगमंभगवन्नामजिह्वाच वशवर्तिनी ॥ तथापिनरकंयान्ति धिग्धिगस्तुनराधमान् ॥ ११ ॥

पूछा ॥ ८ ॥ गरुड बोलेः--आपने मुझको भक्ति का मार्ग बहुत प्रकार से कहा है और हे देव ! वैसे ही भक्तों की उत्तम गति कही है ॥९॥ अब भयङ्कर यम मार्ग को सुनना चाहता हूँ आपकी भक्ति से विमुख जन वहीं जाते हैं, ऐसा सुना है ॥१०॥ हे भगवन् ! आपका नाम लेना सुगम है, जीभ अपने वशमें है, फिर भी नरक में जाते हैं इससे अधम नरों को धिक्कार है ! धिक्कार है ॥ ११ ॥

हे भगवन् ! इसलिये पापियों की जो गति होती है, वही मुझ से कहिये और यम के मार्ग के दुःख उन मनुष्यों को जैसे प्राप्त होते हैं, सब कहिये ॥ १२ ॥ श्री भगवान् बोलेः-- हे पक्षियों के राजा ! जिसमें होकर पापी यम के लोक को जाते हैं और जो सुनने वालों के लिये भी भय देनेवाला है उस यम मार्ग को मैं कहूँगा ॥ १३ ॥ हे गरुड ! जो पापही में लगे रहते हैं, दया और धर्म से रहित हैं, जिनकी दुष्ट संगति है, जो उत्तम शास्त्र और सत्संगति से दूर रहते हैं ॥ १४ ॥ जो अपने को प्रतिष्ठित

अतोमेभगवन्ब्रूहिपापिनांयागतिर्भवेत् ॥ यममार्गस्यदुःखानियथातेप्राप्नुवन्तिवै ॥१२॥ श्रीभगवानुवाच वक्ष्येहश्शृणु पक्षीन्द्रायममार्गंचयेनय ॥ नरकेपापिनोयान्तिश्शृण्वतामपिभीतिदम् ॥१३॥ येहिपापरतास्ताक्ष्र्यदयाधर्मविवर्जिताः ॥ दुष्टसंगाश्चसच्छास्त्रसत्सङ्गतिपराङ्मुखाः ॥ १४ ॥ आत्मसम्भाविताः स्तब्धा धनमानमदान्विताः ॥ आसुरंभावमापन्नादैवीसंपद्विवर्जिताः ॥ १५ ॥ अनेकचित्तविभ्रांतामोहजालसमावृताः ॥ प्रसक्ताः कामभोगेषुपतंतिनरकेऽशुचौ ॥ १६ ॥

मानते हैं और किसी से नम्र नहीं होते हैं, धन तथा मान के घमण्ड से भरे हैं, जो असुरों के भाव को प्राप्त हैं और दैवी सम्पत्ति से रहित हैं ॥ १५ ॥ पर स्त्री और परधन को लेने के मनोरथों से विक्षिप्त, मोहजाल में फँसे हुये और काम के भोगों में लगे मनुष्य अपवित्र नरक में गिरते हैं ॥ १६ ॥

जो मनुष्य ज्ञानी हैं, वे मोक्षको प्राप्त होते हैं और जो पापी हैं वे दुःख से यमकी यातनाको प्राप्त होते हैं ॥१७॥ पापियोंको इस लोकमें जैसा दुःख होता है सुनो, उसके बाद मरणको प्राप्त होकर जैसी यातनाको प्राप्त होते हैं, वह सुनो ॥१८॥ पूर्व जन्ममें सञ्चित पुण्य अथवा पापको भोगकर कर्मभोग से उसके कोई रोग उत्पन्न होता है ॥१९॥ आधि (मानसी व्यथा) और

येनराज्ञानशीलाश्चतेयान्तिपरमांगतिम् ॥ पापशीलानरायांतिदुःखेनयमयातनाम् ॥ १७ ॥ पापिनामैहिकंदुःखंयथाभवतितच्छृणु ॥ ततस्तेमरणं प्राप्ययथागच्छन्तियातनाम् ॥ १८ ॥ सुकृतंदुष्कृतंवापिभुक्त्वापूर्वं यथार्जितम् ॥ कर्मयोगात्तदातस्यकश्चिद्व्याधिःप्रजायते ॥ १९ ॥ आधिव्याधिसमायुक्तंजीविताशासमुत्सुकम् ॥ कालोबलीयानहिवदज्ञातः प्रतिपद्यते ॥ २० ॥ तत्राप्यजातनिर्वेदोभ्रियमाणःस्वयंभृतैः जरयोपात्तवैरूप्योमरणाभिमुखोगृहे ॥ २१ ॥ आस्तेवमत्योपन्यस्तंगृहपालइवाहरत ॥ आमयाव्यप्रदीप्ताग्निरल्पाहारोल्पचेष्टितः ॥ २२ ॥

व्याधि (रोग) से युक्त, जीवित रहनेकी आशामें उत्कण्ठित प्राणीको बलवान् काल सर्पके समान विना जाने प्राप्त होता है ॥२०॥ वहाँ अन्त कालमें भी जिसके निर्वेद उत्पन्न नहीं हुआ है वह, स्वयं द्वारा पालन किये गये स्त्री पुत्रादिकोंसे पोषित किया जाता हुआ, बुढापेसे कुरूप बना हुआ, घरमें मरनेके सन्मुख होता है ॥२१॥ अवज्ञासे पासमें रखे हुये आहारको कुत्ते

के समान खाता है और रोग तथा मन्दाग्नि होनेसे आहार घट जाता है,चलने फिरने आदिकी चेष्टाभी कम हो जाती है॥२२॥ कफसे रुके हुये नाडी रूप मार्गसे निकलना चाहते प्राण रूप वायुसे जिसके नेत्र फटे हैं, ऐसे श्वास काससे दबाये गये उस प्राणीके कण्ठमें घुर घुर शब्द होता है ॥२३॥ शोक करते हुये भाई बन्धुओंसे घिरा हुआ वह कालके वशमें होकर बुलाने पर

वायुनोत्क्रमतोत्तारःकफसंरुद्धनाडिकः ॥ कासश्वासकृतायासःकण्ठेघुरघुरायते ॥ २३ ॥ शयानःपरिशो चद्भिः परिवीतः स्वबन्धुभिः॥ वाच्यमानोऽपिनब्रूतेकालपाशवशंगतः ॥२४॥ एवंकुटुम्बभरणेव्यापृतात्मा जितेन्द्रियः ॥ म्रियतेरुदतां स्वानामुरुवेदनयास्तधीः ॥ २५ ॥ तस्मिन्नन्तक्षणेतार्क्ष्यदैवीदृष्टिः प्रजायते ॥ एकीभूतंजगत्सर्वंनकिंचिद्वक्तुमीहते ॥ २६ ॥

भी नहीं बोलता है ॥२४॥इस प्रकार कुटुम्बके पालन पोषणमें लगी आत्माकीही बहुत भारी वेदना (एक साथसी बिच्छुओंके काटनेके समान पीडा) से नष्ट बुद्धि वह प्राणी रोते हुये भाई बन्धुओंके बीचमें मरजाता है ॥ २५ ॥ हे गरुड ! उस अन्त समयमें देवताओंकी सी दृष्टि होजाती है जिस दृष्टिसे यमके दूतोंका प्रत्यक्ष दर्शन होता है, इसी आश्चर्यको देखनेसे कुछ नहीं करता है ॥ २६ ॥ इन्द्रियोंके समूहके व्याकुल होनेपर और चैतन्यके जड़ होजाने पर समीप आये हुये यमके दूतोंके

कारणसे प्राण अपने स्थानसे चलायमान होते हैं ॥२७॥ जब श्वास अपने स्थानसे चलायमान होता है उस समय मरते हुये पापीको एक क्षण कल्पके समान बीतता है और सौ बिच्छुओंके काटने जैसी पीड़ा अनुभवकी जाती है अर्थात् भोगनी पड़ती है ॥२८॥ इसके बाद वह फेन (झाग) उगलता है, मुख लारसे भरजाता है तब पापियोंकी प्राण वायु गुदामें होकर निकलती

विकलेन्द्रियसंघातेचैतन्येजडतांगते ॥ प्रचलन्तिततःप्राणायाम्यैर्निकटवर्तिभिः ॥ २७ ॥ स्वस्थानाच्चलिते श्वासेकल्पाख्योह्यातुरक्षणः ॥ शतवृश्चिकदष्टस्ययापीडासानुभूयते॥२८ ॥ फेनमुद्गिरतेसोथमुखंलालाकुलं भवेत् ॥ अधोद्वारेणगच्छन्तिपापिनां प्राणवायवः ॥२९ ॥ यमदूतौतदाप्राप्तौभीमौसरभसेक्षणौ ॥ पाशदंड धरौनग्नौदन्तैः कटकटायितौ ॥३०॥ ऊर्ध्वकेशौकाककृष्णौवक्रतुण्डौनखायुधौ ॥ तद्दृष्ट्वात्रस्तहृदयःशकृ न्मूत्रंविमुञ्चति ॥३१॥अंगुष्ठमात्रःपुरुषोहाहाकुर्वन्कलेवरात ॥ तदैवगृह्यतेदूतैर्याम्यैःपश्यन्स्वकंगृहम् ॥३२॥

है ॥२९॥ तब प्राण यात्राके समय क्रोधित नेत्रों वाले, भयानक, पाश तथा दण्ड धारी, नग्न, दाँतोंको किट किटाते हुये यमके दूत प्राप्त होते हैं ॥३०॥ जिनके केश ऊपरको उठे हुये हैं, कौवेके समान काला वर्ण तथा जिनका मुख टेढा है, नखही जिनके हथियार हैं ऐसे यमके दूतोंको देखकर ह्रदयमें भयभीत हो विष्ठा तथा मूत्रको छोड़ता है॥३१॥और हाय हाय करता हुआ पुरुष देह से निकलकर अंगूठे की बराबर देहको धारण करता है,तब अपने घरको देखता हुआ वह यमके दूतों द्वारा पकड़ लिया जाता है॥३२॥

यातनाओंके भोगने के प्रारब्ध कर्म से स्वप्न के समान उठे हुये उस शरीरमें घेरकर यमके दूत लम्बे मार्ग में गला बांधकर ऐसे ले जाते हैं जैसे दण्ड देने योग्य पुरुष को राजा के सिपाही ले जाते हैं ॥ ३३॥ इस प्रकार ले जाते हुये प्राणी को यमके दूत धमकाते हैं और नरकों के तीव्र भयको वारम्वार कहते हैं ॥ ३४ ॥ अरे दुष्ट ! शीघ्र चल, तू यमके घरको जायगा

यातनादेहआवृत्यपाशैर्बद्ध्वागलेबलात् ॥ नयतोदीर्घमध्वानंदण्ड्यम्राजभटायथा ॥३३॥ तस्यैवंनीयमानस्यदूताः संतर्जयन्तिच ॥ प्रवदन्तिभयंतीव्रंनरकाणां पुनः पुनः ॥ ३४ ॥ शीघ्रंप्रचलदुष्टात्मन्यास्यसित्वंयमालयम् ॥ कुम्भीपाकादिनरकांस्त्वांनयाम्यद्यमाचिरम् ॥३५ ॥ एवंवाचस्तदाशृण्वन्बन्धूनांरुदितं तथा ॥ उच्चैर्हाहेतिविलपंस्ताड्यतेयमकिंकरैः ॥३६॥ तयोर्निर्भिन्नहृदयस्तर्जनैर्जातवेपथुः॥ पथिश्वभिर्भक्ष्यमाण आर्तोघंस्वमनुस्मरन् ॥ ३७॥

और कुम्भी पाक आदि नरकोंमें हम तुझको अब शीघ्र लिये जाते हैं ॥३५॥ इस प्रकार यमदूतोंके वचन और भाई बन्धुओंके रुदनको सुनता हुआ उच्च स्वर से हाहाकार कर रोता हुआ वह प्राणी यम के दूतों द्वारा ताडित किया जाता है ॥ ३६ ॥ उन यमदूतों के धमकानेसे विदीर्ण हृदय, कांपता हुआ वह प्राणी दुःखी होकर अपने पापोंको स्मरण करता हुआ मार्गमें कुत्तों से खाया जाता है ॥ ३७ ॥ भूख और प्यास से पीडित, सूर्य तथा दावाग्नि की पवन से तपी हुई बालू वाले, विश्राम और जलसे रहित

मार्गमें तपाया गया, भूख और प्यास आदि के कारण चलने में असमर्थ भी प्राणी कोड़ों की मार देकर चलाया जाता है ॥ ३८ ॥ उस मार्ग में गिरता और थका हुआ मूर्च्छित होकर फिर उठा हुआ वह प्राणी अतिपापी तम से यम के लोक में पहुँचाया जाता है ॥ ३९ ॥ दो अथवा तीन मुहूर्त में मनुष्य वहां पहुँचाया जाता है और दूत उसको अति घोर नरक की

क्षुत्तृट्परीतोऽर्कदवानलानिलैः संतप्यमानः पथि तप्तवालुके ॥ कृच्छ्रेणपृष्ठेकशयाचताडितश्चलत्यशक्तोपि निराश्रमोदके ॥३८॥ तत्रतत्रपतञ्छान्तोमूर्च्छितः पुनरुत्थितः ॥ यथापापीयसानीतस्तमसायमसादनम् ॥ ॥ ३९ ॥ त्रिभिर्मुहूर्तैर्द्वाभ्यांवानीयतेतत्रमानवः ॥ प्रदर्शयन्तिदूतास्तान्घोरानरकयातनाः ॥ ४० ॥ मुहूर्तमात्रात्त्वरितंयमंवीक्ष्यभयंपुमान् ॥ यमाज्ञयासमंदूतैः पुनरायातिखेचरः ॥ ४१ ॥ आगम्यवासनाबद्धोदेहमिच्छन्यमानुगैः ॥ धृतः पाशेनरुदतिक्षुत्तृड्भ्यांपरिपीडितः ॥ ४२ ॥

यातना दिखाते हैं ॥ ४० ॥ मुहूर्त मात्र में ही शीघ्र यम को तथा यातनाओं को देखकर वह पुरुष यम की आज्ञा से शीघ्र ही दूतोंके साथ आकाश मार्ग में होकर फिर आता है ॥४१॥ आकर वासना से बँधा हुआ, देह में प्रवेश करनेकी भी इच्छा करता, यम के दूतों द्वारा पाश से बांधा गया वह प्राणी भूख प्यास से पीडित होकर रोता है ॥ ४२ ॥

मृत्यु के स्थान आदिमें पुत्रों द्वारा दिये हुये पिण्ड को और मरने के समय में दिये हुए दान को खाता है, हे गरुड ! उस पर भी वह नास्तिक पापी तृप्ति को प्राप्त नहीं होता है ॥ ४३ ॥ दान श्राद्ध तथा जल की अञ्जलि पापी मनुष्यों को नहीं पहुँचते हैं, इसी से पिण्ड के खाने वाले ये भूख से व्याकुल हो जाते हैं ॥ ४४ ॥ यदि उनका पिण्ड दान नहीं किया जाय तो वे

भुंक्तेपिण्डंसुतैदत्तंदानंचातुरकालिकम् ॥ तथापिनास्तिकस्ताक्ष्र्यतृप्तियातिनपातकी ॥ ४३ ॥ पापिनांनोप तिष्ठन्तिदानंश्राद्धंजलांजलिः ॥ अतः क्षुद्व्याकुलायान्तिपिण्डदानभुजोपिते ॥ ४४ ॥ भवन्तिप्रेतरूपास्ते पिण्डदानविवर्जिताः ॥ आकल्पनिजनारण्येभ्रमन्तिबहुदुःखिता ॥४५॥ नाभुक्तं क्षीयते कर्म कल्पकोटि शतैरपि ॥ अभुक्त्वायातनां जन्तुमानुष्यलभते नहि ॥४६॥ अतोदद्यात्सुतः पिण्डान्दिनेषु दशसुद्विज ॥ प्रत्यहन्तेविभज्यन्तेचतुर्भागैःखगोत्तम ॥ ४७ ॥

कल्प भर प्रेत रूप होते हैं और शून्य वन में बडे दुःखी होकर घूमते हैं ॥ ४५ ॥ करोडों कल्प तक विना भोगे कर्म क्षीण नहीं होता है और यम की यातना भोगे विना मनुष्य रूपको नहीं पाता है ॥ ४६ ॥ हे द्विज ! इसी से पुत्र दश दिन तक पिण्ड दान करते हैं, हे पक्षियों में उत्तम, वे पिण्ड प्रतिदिन चार भागों में बांटे जाते हैं ॥ ४७ ॥

उनमें दो भाग तो पंचभूतों में देह को पुष्टि देते हैं और तीसरा भाग यम के दूतों का होता है तथा चौथे भाग को वह प्रेत खाता हैं ॥ ४८ ॥ नौ रात दिन तक प्रेत पिण्ड को पाता है, उसके बाद दशवें दिन पिण्डों से जिसकी देह उत्पन्न हुई है ऐसा वह जीव बल अर्थात् मार्ग चलनेमें भी सामर्थ्य पाता है ॥४९॥ हे खग ! पहली देह के जल जानेपर पिण्डों से फिर देह उत्पन्न होती है, यह हाथ भर भी होती है, जिस देह से यम के मार्ग में शुभ तथा अशुभ को भोगता है ॥ ५० ॥ पिण्डों से उत्पन्न देह के बनने

भागद्वयंतुदेहस्यपुष्टिदंभूतपञ्चके ॥ तृतीयंयमदूतानांचतुर्थंसोपजीवति ॥ ४८ ॥ अहोरात्रैश्चनवभिःप्रेतः पिण्डमवाप्नुयात् ॥ जन्तुर्निष्पन्नदेहश्चदशमेबलमाप्नुयात् ॥ ४९ ॥ दग्धेदेहेपुनर्देहः पिण्डैरुत्पद्यतेखग ॥ हस्तमात्रःपुमान्येनपथिभुंक्ते शुभाशुभम् ॥५०॥ प्रथमेऽहनि यः पिण्डस्तेनमूर्धाप्रजायते॥ग्रीवास्कन्धौद्वितीयेनतृतीयाद्धृदयं भवेत् ॥५१॥ चतुर्थेनभवेत्पृष्ठंपञ्चमान्नाभिरेवच ॥ षष्ठेनचकटीगुह्यंसप्तमात्सक्थिनीभवेत् ॥ ५२ ॥ जानुपादौ तथाद्वाभ्यांदशमेऽह्निक्षुधातृषा ॥ ५३ ॥

के प्रकारको कहते हैं:--पहले दिन जो पिण्ड दिया जाता है उससे शिर उत्पन्न होता है, दूसरे से गर्दन और कन्धे- तीसरे से हृदय उत्पन्न होता है ॥ ५१ ॥ चौथे से पीठ, पाँचवें से नाभि उत्पन्न होती है, छठवें से कटि और गुह्य (मलमूत्र के स्थान) और सातवें से सक्थिनी (कटि के नीचे दोनों ओर के मांस के पिण्ड) उत्पन्न होते हैं ॥ ५२ ॥ दो पिण्डों से घुटने और पांव

उत्पन्न होते हैं और दशवें दिन भूख प्यास उत्पन्न होती है ॥ ५३ ॥ पिण्डों से उत्पन्न देह का आश्रय लेकर भूख तथा प्यास से पीडित वह प्रेत ग्यारहवें और बारहवें इन दो दिनोंमें भोजन करता है ॥ ५४ ॥ और तेरहवें दिन यम के दूतों द्वारा बांधा गया वह प्रेत उस मार्ग में बांधे हुये बन्दर के समान अकेला जाता है ॥ ५५ ॥ हे गरुड ! वैतरणी को छोड़कर जो यम के

पिण्डजंदेहमाश्रित्यक्षुधाविष्टस्तृषार्दितः ॥ एकादशंद्वादशंचप्रेतोभुंक्तदिनद्वयम् ॥ ५४ ॥त्रयोदशेहनिप्रेतो यन्त्रितोयमकिङ्करैः ॥ तस्मिन्मार्गेव्रजत्येकोगृहीतइवमर्कटः ॥ ५५ ॥ षडशीतिसहस्राणियोजनानांप्रमाणतः ॥ यममार्गस्यविस्तारोविनावैतरणींखग ॥५६॥ अहन्यहनि वैप्रेतोयोजनानांशतद्वयम् ॥ चत्वारिंशत्तथासप्तदिवारात्रेणगच्छति ॥ ५७ ॥ अतीत्यक्रमशोमार्गेपुराणीमानिषोडश ॥ प्रयातिधर्मराजस्यभवनं पातकीजनः ॥ ५८ ॥ सौम्यंसौरिपुरंनगेन्द्रभवनंगन्धर्वशैलागमौक्रौञ्चक्रूरपुरंविचित्रभवनंबह्वापदंदुःखदम्॥ नानाक्रन्दपुरं सुतप्तभवनंरौद्रंपयोवर्षणंशीताढ्यंबहुभीतिधर्मभवनंयाम्यं पुरंचाग्रतः ॥ ५९ ॥

मार्ग का विस्तार है वह प्रमाणमें छियासी हजार योजन है। प्रतिदिन प्रेत दो सौ सैंतालीस योजन रात दिन में चलता है ॥ ५७ ॥ इन सोलह पुरों को मार्ग में क्रम से उल्लंघन करके पातकी मनुष्य धर्मराज के घर को जाता है ॥ ५८ ॥ सोलह पुरों के नाम कहते हैं:--सौम्य, सौरिपुर, नगेन्द्र भवन, गंधर्वशैल, आगम' क्रौंच, क्रूरपुर,विचित्र भवन' बह्वापद, दुःखद, नानाक्रन्द

पुर, सुतप्त भवन, रौद्र पयोवर्षण,शीताढ्य,बहुभीति, धर्मभवन इनके आगे यम का पुर है ॥५९॥ यम के फाशों से बांधा गया वह पापी मार्गमें हाय हाय करके रोता हुआ अपने घर को छोड़ कर यमराज के पुर को जाता है॥६०॥गरुडपुराण सारोद्धार हिन्दी टीकामें प्रथम अध्याय समाप्त हुआ॥१॥ गरुड बोलेः--यम के लोक का मार्ग जैसा दुःख देने वाला होता है? हे केशव! उसमें

याम्यपाशैर्धृतः पापीहाहेतिप्ररुदन्पथि ॥ स्वगृहंतुपरित्यज्यपुरंयाम्यमनुव्रजेत् ॥ ६० ॥ इति श्रीसारोद्धारे गरुडपुराणे पापिनामैहिकामुष्मिकदुःखनिरूपणन्नामप्रथमोध्यायः ॥ १ ॥ गरुडउवाच ॥ कीदृशो यमलोकस्यपन्थाभवतिदुःखदः ॥ यत्रयान्तियथापापा स्तन्मेकथयकेशव ॥ १ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ यममार्गं महद्दुःखप्रदंते कथयाम्यहम् ॥ममभक्तोऽपितच्छ्रुत्वात्वंभविष्यसिकम्पितः ॥२॥ वृक्षच्छायानतत्रास्तियत्र विश्रमतेनरः ॥ यस्मिन्मार्गेनचान्नाद्यंयेनप्राणान्समुद्धरेत् ॥ ३ ॥

जैसे पापी जाते हैं वह मुझको कहिये ॥ १ ॥ श्री भगवान् बोलेः- बहुत दुःख देने वाले यम के मार्ग को मैं तुमसे कहता हूँ, जिसको सुनकर मेरे भक्त भी तुम कम्पायमान हो जाओगे॥२॥ वहाँ वृक्षोंकी छाया नहीं है, जिसमें मनुष्य विश्राम ले सके और उस मार्ग में अन्नादिक नहीं है जिससे प्राणों का उद्धार कर सके ॥ ३ ॥

उस मार्ग में जल कहीं नहीं दिखाई देता है,जिसको बहुत प्यार से प्राणी पी सके हे खग ! बारहों सूर्य ऐसे तपते हैं जैसे प्रलय के अन्त में तपते हैं ॥ ४ ॥ उस मार्ग में पापात्मा पुरूष शीतल वायु से पीडित होता हुआ जाता है,कहीं कांटों से बींधा जाता है और बडे विषधारी सापों द्वारा काटा जाता है ॥ ५ ॥ कहीं बडे घोर सिंह बाघ और कुत्तों से पापी खाया जाता है और

न जलंदृश्यतेक्वापितृषितोऽतीवयत्पिबेत् ।। तपन्तेद्वादशादित्याः प्रलयान्तेयथाखग ॥४॥ तस्मिन्गच्छतिपापात्माशीतवातेनपीडितः ॥कण्टकैर्विध्यतेकापिक्वचित्सर्पैर्महाविषैः ॥५॥ सिंहैर्व्याघ्रैः श्वभिर्घोरैर्भक्ष्यतेक्वापिपापकृत्॥वृश्चिकैर्दश्यतेक्वापिक्वचिद्दह्यतिवह्निना॥६॥ततःक्वचिन्महाघोरमसिपत्रवनंमहत्॥ योजनानां सहस्रेद्वेविस्तारायामतः स्मृतम् ॥७॥ काकोलूकवटगृध्रसरघादंशसंकुलम्॥ सदावाग्निचतत्पत्रैश्छिन्नभिन्नःप्रजायते॥८॥क्वचित्पतत्यन्धकूपेविकटात्पर्वतात्क्वचित्॥गच्छतेक्षुरधारासुशङ्कूनामुपरिक्वचित्॥९॥

बिच्छुओं से काटा जाता है, कहीं अग्नि से जलाया जाता है ॥ ६ ॥ उसके बाद वहाँ कहीं बडा घोर असिपत्र वन है, जिसकी लम्बाई चौड़ाई दो हजार योजन कही है ॥ ७ ॥ कौवे, उलूक, गीध, मधुमक्खी और डांसों से भरा है दावाग्नि युक्त उस वन में पत्रों से छिन्न भिन्न हो जाता है ॥८॥ कहीं अन्धकूप में गिरता है और कहीं विकट पर्वत के ऊपर से गिरता है, कहीं छुरों की

धार पर चलता है, और कहीं कीलोंके ऊपर चलना पडता है॥९॥कहीं गहन अन्धकार में गिरता है,कहीं उग्रजलमेंकहीं जोकोंसे भरेकीचड में और कहीं तपे हुये कीचड में गिरता है, ॥१०॥कहीं तपी हुई बालू से भरे हुये, कहीं तपाये हुये तांबे से बने हुये, कहीं अंगारों के ढेर में और कहीं भयङ्कर धुएँ से भरे हुए मार्गमें गिरता है॥११॥कहीं अंगारों की वर्षा होती है,कहीं वज्रसहित चट्टानों की वर्षा

॥ ९ ॥ स्खलत्यन्धतमस्युग्रेजलेनिपततिक्वचित् ॥ क्वचित्पंकेजलौकाढ्येक्वचित्संतप्तकर्दमे ॥१०॥
संतप्तबालुकाकीर्णेध्याततास्रमयेक्वचित् ॥ क्वचिदंगारराशौचमहाधूमाकुलेक्वचित्॥११॥क्वचिदंगारवृष्टि
श्चशिलावृष्टिः सवज्रका ॥ रक्तवृष्टिः शस्त्रवृष्टिःक्वचिदुष्णाम्बुवर्षणम् ॥ १२ ॥ क्षारकर्दमवृष्टिश्चमहानि
म्नानिचक्वचित् ॥ वप्रप्ररोहणंक्वापिकन्दरेषु प्रवेशनम् ॥ १३ ॥ गाढांधकारस्तत्रास्तिदुःखारोहशिलाः
क्वचित् ॥ पूयशोणितपूर्णाश्चविष्ठापूर्णाह्रदाः क्वचित् ॥ १४ ॥ मार्गमध्यवहात्युग्राघोरावैतरणीनदी ॥
साद्दृष्टादुःखदाकिंवा यस्यावर्त्ताभयावहा ॥ १५ ॥

होती है, कहीं रक्त की वर्षा कहीं शस्त्रोंकी वर्षा तथा कहीं तपे हुये जल की वर्षा होती है॥१२॥कहीं खारे कीचड़ की वर्षा होती है, कहीं बहुत गहरे स्थान हैं, कहीं पर्वतों के शिखर पर चढना पडता है और कहीं गुफाओं में घुसना पडता है ॥१३॥वहां गहन अंधकार है, कहीं कठिनतासे चढने योग्य चट्टानें हैं और कहीं पीव तथा रुधिरसे भरे हुये कहीं विष्ठासे भरे हुये कुण्ड हैं॥१४॥और मार्गके

मध्य में बहने वाली वैतरणी नदी है वह देखने से ही दुःख देनेवाली है, जिसकी बात भी भय देनेवाली है ॥१५॥ सौ योजन चौडी है और उसमें पीव तथा रुधिर बहता है, उसके किनारे हड्डियों के समूह से बने हुये हैं, वह दुःख से जाने योग्य है तथा उसमें मांस और रुधिर का कीचड़ है ॥१६॥ अथाह है, पापी जीवों के दुःख से पार उतरने योग्य है बाल रूपी सिवारों से दुर्गम है, भयङ्कर

शतयोजनविस्तीर्णा पूयशोणितवाहिनी॥अस्थिवृन्दतटादुर्गामांसशोणितकर्दमा॥१६॥अगाधादुस्तरापापैः केशशैवालदुर्गमा ॥ महाग्राहसमाकीर्णाघोरपक्षिशतैर्वृता ॥१७ ॥आगतंपापिनंदृष्ट्वाज्वालाधूमसमाकुला ॥ क्वथतेसानदीताक्ष्र्यकटाहान्तंघृतंयथा ॥१८॥ कृमिभिः सकुसाघोरैः सूचिवक्त्रैः समन्ततः ॥ वज्रतुण्डैर्महागृध्रैर्वायसैः परिवारिता ॥ १९ ॥ शिशुमारैश्चमकरैर्जलौकोमत्स्यकच्छपैः ॥ अन्यैर्जलस्थजीवैश्चपूरितामांसभेदकैः ॥ २० ॥

घडियालों से भरी हुई है और भयानक सैकड़ों पक्षियों से घिरी हुई है ॥१७॥ हे गरुड़ ! पापी को आया हुआ देखकर अग्नि की ज्वाला तथा धुएँ से भरकर वह नदी ऐसे उबलने लगती है जैसे कड़ाह में घी उबलता है ॥ १८॥ सूई के समान मुख वाले घोर कीड़ों से भरी हुई है, वज्रके समान चोंचवाले गीधों तथा कौओं से घिरी हुई है ॥ १९ ॥ शिशुमार, मगर, जोंक, मछली, कछुए

तथा मांसको भेदनेवाले जलके जीवोंसे भरी है ॥२०॥उसकी धारामें गिरे हुये बहुतसे पापी चिल्लाते हैं और हा भाइ ! हा पुत्र ! हा बाप ! ऐसे बार बार कहते हैं ॥२१॥ भूखे प्यासे पापी निश्चय रुधिर को पीते हैं, बहुत से झाग भरी हुई वह नदी रुधिरके प्रवाह से बहती है ॥२२॥ महाभयङ्कर, अत्यन्त गर्जना करती हुई,दुःखसे देखने योग्य, भयावनी उस नदीको देखते ही पापीजन मूर्च्छित हो

पतितास्तत्प्रवाहे च क्रन्दन्तिबहुपापिनः॥ हाभ्रातः पुत्रताततेतिप्रलपन्ति मुहुर्मुहुः ॥२१॥ क्षुधितास्तृषिताः पापा पिबन्ति किल शोणितम् ॥ सासरिद्रुधिरापूर्णंवहन्तीफेनिलंबहु ॥ २२ ॥ महाघोरातिगर्जन्ती दुर्निरीक्ष्यभयावहा ॥ तस्या दर्शनमात्रेण पापाः स्युर्गतचेतनाः ॥ २३ ॥ बहुवृश्चिकसंकीर्णासेविताकृष्णपन्नगैः ॥ तन्मध्येपतितानांचत्राताकोपिनविद्यते॥२४ ॥ आवर्तशतसाहस्रैः पातालेयान्तिपापिनः ॥ क्षणंतिष्ठन्तिपातालेक्षणादुपरिवर्तिनः ॥ २५ ॥ पापिनांपतनायैवनिर्मितासानदीखग ॥ नपारंदृश्यतेतस्यादुस्तराबहुदुःखदा ॥ २६ ॥

जाते हैं ॥२३॥ बहुतसे बिच्छुओंसे भरी हुई काले सर्पोंसे सेवित उस वैतरणी नदीमें गिरे हुये प्राणियों की रक्षा करनेवाला कोई नहीं है॥२४॥लाखों भँवरसे पापी पातालमें चला जाता है,क्षणभर पातालमें ठहर कर फिर ऊपर आजाता है॥२५॥ हेगरुड़ ! पापीजीवों के गिरने के लिये ही वह नदी बनाई गई है, उसका पार दिखाई नहीं देता है, वह दुस्तर है और बहुत दुःख देनेवाली है ॥ २६ ॥

इस प्रकार बहुत दुःख देनेवाले, अनेक प्रकारके क्लेशोंसे भरे हुए यमके मार्गमें चिल्लाते तथा रोते हुए पापी दुःखी होकर जाते हैं ॥२७॥ कोई पाशसे बँधे हैं और अंकुशोंसे खेंचेजाते हैं, शस्त्रोंसे छेदेगये पापियोंको यमके दूत लेजाते हैं ॥२८॥ कोई नाककी नोकमें फांसी डालकर और कोई कानोंमें फांसी डालकर, कोई काल पाशसे तथा कोई बाल पकड़कर खेंचेजाते हैं

एवंबहुविधक्लेशेयममार्गेतिदुःखदे ॥ क्रोशन्तश्चरुदन्तश्चदुःखितायान्तिपापिनः ॥ २७ ॥ पाशेन यंत्रिताः केचित्कृष्यमाणास्तथांकुशैः ॥ शस्त्राग्रैःपृष्ठतःप्रोतैर्नीयमानाश्चपापिनः ॥ २८ ॥ नासाग्रपाशकृष्टाश्चकर्णपाशैस्तथापरे॥ कालपाशैःकृष्यमाणाः काकैःकृष्यास्तथापरे॥२९॥ग्रीवाबाहुषुपादेषुबद्धाःपृष्ठेचशृंखलैः ॥ अयोभारचयंकेचिद्वहन्तःपथियान्तिये ॥ ३० ॥ यमदूतैर्महाघोरैस्ताडचमानाश्चमुद्गरैः ॥ वमन्तोरुधिरं वक्त्रात्तदेवाश्नन्तितेपुनः ॥ ३१ ॥ शोचन्तेस्वानिकर्माणिग्लानिंगच्छन्तिजन्तवः ॥ अतीवदुःखसंपन्नाः प्रयान्तियममन्दिरम् ॥ ३२ ॥

॥२९॥ गर्दन, बाहु, पांव और पीठमें सांकलोंसे बांधे गये कोई लोहके भारको लियेहुये मार्ग में जाते हैं ॥ ३० ॥ महाभयङ्कर यमके दूतों द्वारा मुद्गरोंसे ताडित किये गये पापी मुखसे रुधिर गिराते हैं और उसी रुधिरको फिर खाजाते हैं ॥ ३१ ॥ अपने कर्मों को सोचते हैं और ग्लानिको प्राप्त होते हैं, बहुतही दुःखसे भरे हुये वे पापी यमलोकको जाते हैं ॥३२॥

वह मन्द बुद्धि उस मार्गमें जाता हुआ पुत्र पौत्र ऐसे कहता और हाय हाय करके रोता हुआ बड़े दुःखको प्राप्त होता है ॥३३॥ बड़े पुण्यके भोगसे मनुष्य जन्म मिलता है, उसको प्राप्तकर मैंने धर्म नहीं किया ! यह क्या किया !! ॥३४॥ मैंने न तो दान दिया और न अग्निमें होम किया, न तप किया और न देवताओंको पूजा, न विधानसे तीर्थोंकी सेवाकी, अतः हे

तथापिसव्रजन्मार्गेपुत्रपौत्रइतिब्रुवन् ॥ हाहेतिप्ररुदन्नित्यमनुतप्यतिमन्दधीः ॥ ३३ ॥ महतापुण्ययोगे नमानुषंजन्मलभ्यते ॥ तत्प्राप्यनकृतोधर्मःकीदृशंहिमयाकृतम् ॥ ३४ ॥ मयानदत्तंनहुतंहुताशनेतपोनतप्तं त्रिदशानपूजिताः ॥ नतीर्थसेवाविहिताविधानतोदेहिन्कचिन्निस्तरयत्त्वयाकृतम् ॥ ३५ ॥ नपूजिता विप्रगणा सुरापगानचाश्रितासत्पुरुषानसेविताः ॥ परोपकारो न कृतः कदाचनदेहिन्कचिन्निस्तरयत्त्वया कृतम् ॥ ३६ ॥ जलाशयोनैवकृतोहिनिर्जलेमनुष्यहेतोः पशुपक्षिहेतवे ॥ गोविप्रवृत्त्यर्थमकारिनाण्वपिदे हिन्कचिन्निस्तरयत्त्वयाकृतम् ॥ ३७ ॥

देही ! तूने जो किया है उसको भोग ॥३५॥ ब्राह्मणोंके समूहको नहीं पूजा और गंगाजीका भी आश्रय नहीं लिया, सज्जन पुरुषोंका भी सेवन नहीं किया और परोपकार भी कभी नहीं किया, इससे हे देही ! तूने जो किया है उसको भोग ॥३६॥ जिस स्थानमें जल नहीं है, उस स्थानमें मैंने मनुष्यों तथा पशुपक्षियोंके लिये जलाशय (कुए, बावड़ी, तालाब आदि) नहीं बनवाये

गौतथा ब्राह्मणोंकी जीविकाके लिये कुछभी नहीं किया, इससे हे देही ! तूने जो किया है उसको भोग ॥३७॥ न तो नित्यदान (अन्नादिक) और गवाह्निक (एक गौ के एक दिनकी तृप्ति कराने योग्य तृणादिक) दिया, न वेद और शास्त्रको प्रमाण माना, कभी पुराण नहीं सुने और न कभी उनके ज्ञाताकी पूजाकी, इससे हे देही ! तूने जो किया है उसको भोग ॥३८॥ मैंने अपने स्वामी का हित वचन नहीं किया और न कभी अपने स्वामीका व्रत पालन किया, न गुरुओंका कभी उचित गौरव किया,

ननित्यदानंनगवाह्निकंकृतंनवेदशास्त्रार्थवचः प्रमाणितम् ॥ श्रुतंपुराणंनचपूजितोज्ञोदेहिन्कचिन्निस्तरयत्त्वयाकृतम् ॥ ३८ ॥ भर्तुर्मयानैवकृतंहितंवचःपतिव्रतंनैवकदापिपालितम् ॥ नगौरवंकापिकृतंगुरूचितंदेहिन्कचिन्निस्तरयत्त्वयाकृतम् ॥३९॥नधर्मबुद्धयापतिरेवसेवितोवह्निप्रवेशोनकृतोमृतेपतौ ॥ वैधव्यमासाद्य तपोनसेवितंदेहिन्कचिन्निस्तरयत्त्वयाकृतम् ॥ ४० ॥ मासोपवासैर्नविशोषितंमयाचान्द्रायणैर्वानियमैः सविस्तरैः ॥ नारीशरीरं बहुदुःखभाजनंलब्धंमयापूर्वकृतैर्विकर्मभिः ॥ ४१ ॥

इससे हे देही ! तूने जो किया है उसको भोग ॥३९॥ पतिकी सेवा करनी ही स्त्रियोंका परम धर्म है इस बातको जानकर पति की सेवा नहींकी और पतिके मरने पर सती भी नहीं हुई, विधवा होकर तप भी नहीं किया, इससे हे देही तूने जो किया है उस को भोग॥४०॥महिनेके व्रतोंसे मैंने शरीरको नहीं सुखाया अथवा चान्द्रायणों अथवा विस्तार सहित नियमोंसे नहीं सुखा

या, बहुतसे दुखोंका पात्र यह नारी शरीर मैंने पहले किये हुये निषिद्ध आचरणोंसे पाया है ॥४१॥ इस प्रकार बहुत विलाप करके पहलेकी देहका स्मरण करता हुआ, मेरा वह मनुष्यपन कहाँ ? ऐसे कहता हुआ चलता है ॥४२॥ सत्रह दिन तक अकेला वायुके वेगसे चलता है और हे गरुड़ ! अठारहवें दिन प्रेत सौम्यपुरको जाता है ॥४३॥ उस मनोहर श्रेष्ठ पुरमें प्रेतोंके

एवंविलप्यबहुशःसस्मरन्पूर्वदैहिकम् ॥ मानुषत्वंममकुतइतिक्रोशन्प्रसर्पति ॥ ४२ ॥ दशसप्तदिनान्येको वायुवेगेनगच्छति ॥ अष्टादशेदिनेताक्ष्यंप्रेतः सौम्यपुरंव्रजेत्॥४३॥ तस्मिन्पुरवरेरम्येप्रेतानांचगणोमहान् ॥ पुष्पभद्रानदीतत्रन्यग्रोधः प्रियदर्शनः ॥ ४४ ॥ पुरेतत्रसविश्राममंप्राप्यतेयमकिङ्करैः ॥ दारपुत्रादिकंसौख्यं स्मरतेतत्रदुःखितः ॥ ४५ ॥ धनानिभृत्यमात्राणिसर्वंशोचतिवैयदा ॥ तदाप्रेतांस्तुतत्रत्याः किंकराश्चेदम ब्रुवन् ॥ ४६ ॥ क्वधनंक्वसुताजायाक्वसुहृत्क्वचबान्धवाः ॥ स्वकर्मोपार्जितम्भोक्तामूढयाहिचिरंपथि ॥४७ ॥

गण रहते हैं, वहाँ पुष्पभद्रा नामकी नदी है और प्रिय दर्शन (जिसका दर्शन प्यारा है ऐसा) बड़का पेड़ है ॥४४॥ उस पुरमें यमके दूतों द्वारा वह प्राणी विश्रामको प्राप्त किया जाता है, वहाँ दुःखित वह स्त्री पुत्रादिक के सुखका स्मरण करता है ॥४५॥ जब धन, भृत्यादिकका शोच करता है तब वहाँके निवासी और यमके दूत यह कहते हैं ॥४६॥ धन कहाँ ! पुत्र कहाँ ! स्त्री कहाँ ! मित्र और बान्धव कहाँ ! अपने कर्मोंसे इकट्ठे किये हुयेको प्राणी भोगता है, हे मूढ ! मार्गमें एक वर्ष तक चल ॥४७॥

हे परलोकके पथिक । तू यमराजके बलको नहीं जानता है और यमके मार्गमें तुम जैसे प्राणियोंके साथ जाने वाले हम दूतों के बल को भी नहीं जानता है, यमराज यातना न दे इसके लिये यत्न भी नहीं करता है, तुम्हारा उस मार्ग से चलनानिश्चित है, जिस मार्गमें क्रय विक्रय नहीं है ॥४८॥ इस मार्ग को तो बालक भी जानते हैं हे मनुष्य, तूने नहीं सुना है ? क्या तूने पण्डितों से पुराणों के वचन नहीं सुने हैं ? ॥ ४९ ॥ उसके बाद दूतों से इस प्रकार कहा गया, मुद्गरों से ताडित किया गया

जानासिसंबलबलंबलमध्वगानांनोसंबलाययतसेपरलोकपान्थ ॥ गन्तव्यमस्तितवनिश्चितमेवतेनमार्गेणयत्रभवतःक्रयविक्रयो न ॥ ४८ ॥ आबालख्यातमार्गोयंनैवमर्त्यश्रुतस्त्वया ॥ पुराणसंभवंवाक्यंकिंद्विजेभ्योपिनश्रुतम्॥४९॥एवमुक्तस्ततोदूतैस्ताडयमानश्चमुद्गरैः॥निपतन्नुत्पतन्धावन्पाशैराकृष्यतेबलात्॥५०॥अत्रदत्तंसुतैःपौत्रैःस्नेहाद्वाकृपयाथवा॥मासिकंपिण्डमश्नातिततःसौरिपुरं व्रजेत् ॥५१॥ तत्रनाम्नास्तिराजावैजंगामःकालरूपधृक् ॥ तंदृष्ट्वाभयभीतोसौविश्रामेकुरुतेमतिम् ॥ ५२॥

वह गिरता उठता और दौडता हुआ बलपूर्वक पाशों से खेंचा जाता है ॥५०॥ घर से तेरहवें दिन प्राणी मार्ग में चलता है और अठारहवें दिन सौम्य पुरमें पहुँचता है इस पुर में पुत्र पौत्रों द्वारा स्नेह से अथवा कृपा करके दिये गये मासिक पिण्ड को खाता है, उसके बाद यमके पुर को जाता है ॥ ५१ ॥ उस सौरिपुर में यम के रूप को धारण करने वाला जंगम राजा है,

उसको देख भयभीत होकर वह विश्राममें मति करता है ॥ ५२ ॥ उस पुर में गया हुआ वह अन्न समेत जलका भोजनकरता है। फिर निश्चयसे जो तीनों पक्षमें दिया जाय वह उस पुर को उल्लंघन करता है ॥ ५३ ॥ उसके बाद प्रेत अतिशीघ्रता युक्त बडे २ वृक्षों वाले स्थान में जाता है, फिर उस पुर के मार्गमें भयानक असि पत्र वन को देख दुखी होकर चिल्लाता है ॥५४॥निर्दयी यमके दूतों से बार बार खेंचां गया वह प्राणी रोता है और दो महीने के अन्त में व्यथित हो वह उसपुर में आता

उदकंचान्नसंयुक्तंभुंक्तेतत्रपुरेगतः ॥ त्रैपक्षिकेवैयद्दत्तंसतत्पुरमतिक्रमेत् ॥ ५३ ॥ ततोनगेन्द्रभवनं प्रेतोयातित्वरान्वितः ॥ वनानितत्ररौद्राणिदृष्ट्वाक्रन्दतिदुःखितः ॥ ५४ ॥ निर्घृणः कृष्यमाणस्तुरुदतेचपुनः पुनः ॥ मासद्वयावसानेतुतत्परंव्यथितोव्रजेत् ॥ ५५ ॥ भुक्त्वापिण्डंजलंवस्त्रंदत्तंयद्बान्धवैरिह ॥ कृष्यमाणः पुनः पाशैर्नीयतेऽग्रेचकिंकरैः॥५६॥मासेतृतीयेसंप्राप्तेप्राप्यगंधर्वपत्तनम् ॥ तृतीयमासिकंपिंडंतत्रभुक्त्वाप्रसर्पति ॥ ५७ ॥ शैलागम चतुर्थेचमासिप्राप्नोतिवैपुरम् ॥ पाषाणास्तत्रवर्षन्तिप्रेतस्योपरिभूरिशः ॥ ५८ ॥

है ॥५५॥ वहाँ बांधवों द्वारा दिये गये पिण्ड जल तथा वस्त्रों को भोग कर फिर यमदूतों से फांसी में बांधकर खेंचा गया वह प्राणी आगे पहुँचाया जाता है ॥५६॥ फिर तीसरा महीना आने पर गन्धर्व पत्तन में पहुँच कर वहाँ तीसरे महिने के पिण्ड को खाकर चलता है ॥५७॥ फिर चौथे महिने में शैलागम नाम पुर में पहुँचता है उसमें प्रेत के ऊपर बहुत से पत्थर बरसते हैं ॥५८॥

वहां पर चौथे महीने के पिण्ड को खाकर कुछ सुखी होता है उसके बाद वह प्राणी पांचवें महीने में क्रौंच नामक पुरमें जाता है ॥५९॥ उस समय क्रौंच पुरमें स्थित वह प्रेत हाथमें दिये गये पांचवें महिने के पिण्ड को खाकर निर्दयी पुरुष जिसमें रहते हैं ऐसे क्रूर पुरको चला जाता है ॥६०॥ साढे पांचवें महिने में न्यून षाण्मासिक को जाता है, वहाँ दिये हुये पिण्ड से कुछ तृप्त होकर

चतुर्थमासिकंपिण्डंभुक्त्वाकिंचित्सुखीभवेत्॥ ततोयातिपुरंप्रेतः क्रौंचंमासेऽथपञ्चमे ॥ ५९॥हस्तदत्तंतदाभुक्तेप्रेतःक्रौञ्चपुरेस्थितः ॥ यत्पञ्चमासिकंपिण्डंभुक्त्वाक्रूरपुरंव्रजेत् ॥६०॥ सार्धकैःपञ्चभिर्मासैन्यूनषाण्मासिकंव्रजेत् ॥ तत्रदत्तेनपिण्डेनघटेनाप्यायितः स्थितः॥६१॥मुहूर्तार्धन्तुविश्राम्यकम्पमानः सुदुःखितः॥तत्पुरंतुपरित्यज्यतर्जितोयमकिंकरैः ॥६२॥ प्रयातिचित्रभवनंविचित्रोनामपार्थिवः॥यमस्यैवानुजोभ्रातायत्रराज्यंप्रशास्तिहि ॥६३॥ तंविलोक्यमहाकायंयदाभीतः पलायते ॥तदासंमुखआगत्यकैवर्ताइदमब्रुवन्॥६४॥

स्थित होता है ॥६१॥ और आधे मुहूर्त तक विश्राम लेकर कांपता हुआ अति दुखी वह प्रेत यम के दूतों से धमकाया गया उस पुर को छोड़कर ॥६२॥ चित्र भवन नामक नगरको जाता है, जहाँ यमराज का छोटा भाई विचित्र नामक राजा राज्य करता है ६२ ॥ बडे शरीरवाले उसको देख कर जब भयभीत होकर भागता है तब उसके सामने मल्लाह आकर बोलते हैं, इस बडी वैतरणी नदी को उतरना चाहने वाले तेरे लिये नाव लेकर आये हैं, यदि तेरा इस नाव पर चढने के योग्य पुण्य हो, तो

आकर नाव पर बैठ जा ॥६४॥६५॥ सत्व को देखने वाले मुनीश्वरों ने दान को वितरण कहा है, उस वितरण से जो तरी जाय उसको वैतरणी कहते हैं ॥६६॥ धीवर कहते हैं कि यदि तू ने गोदान किया है तो नाव पास में आवेगी यह अन्यथा नहीं है, उनके इस वचन को सुनकर हा दैव ! ऐसे कहता है, ॥६७॥ उस प्राणी को देखकर वह कहती है और उस को देखकर वह बहुत

वयंतेतर्तुकामायमहावैतरणींनदीम् ॥ नावमादायसम्प्राप्तायदित्ते पुण्यमीदृशम् ॥६५॥ दानंवितरणं प्रोक्तमुनिभिस्तत्त्वदर्शिभिः ॥ इयंसातीर्यतयेस्मात्तस्माद्वैतरणीस्मृता ॥ ६६ ॥ यदित्वयाप्रदत्तागौस्तदानौरुपसर्पति॥नान्यथेतिवचस्तेषां श्रुत्वाहादैवभाषते॥६७॥तंदृष्ट्वाकथ्यतेसातुतांदृष्ट्वासोतिक्रन्दते॥अदत्तदानःपापात्मातस्यामेवनिमज्जति ॥६८॥ तन्मुखेकण्टकंदत्त्वादूतैराकाशसंस्थितैः॥बडिशेनयथामत्स्यस्तथापारंप्रणीयते ॥ ६९ ॥ षाण्मासिकंचयत्पिण्डंतत्रभुक्त्वाप्रसर्पति ॥ मार्गेसविलपन्यातिबुभुक्षापीडितोह्यलम्॥७० ॥

चिल्लाता है, वह पापी जिसने दान नहीं दिया है, उसी में डूब जाता है॥ ६८ ॥ तब आकाश में स्थित दूतोंद्वारा उसके मुख में कांटा डालकर खेंचकर वह पार पहुँचाया जाता है जैसे बंशी से मछलीको खेंचा जाता है ॥ ६९ ॥ वहां छठवें महिने के पिण्ड को खाकर फिर चलता है, मार्ग में भूखसे बहुत ही दुःखी हो वह बहुत विलाप करता हुआ जाता है ॥ ७० ॥

सातवां महिना प्राप्त होनेपर बह्वापद नामक पुर में जाता है, उस पुर में सातवें महिने में पुत्रोंद्वारा दिये हुये पिंडको खाता है ॥७१॥
उस पुर का उल्लंघन कर दुःखद पुरमें पहुँचता है, हे पक्षियों के राजा ! आकाशमें जाता हुआ वह प्राणी बहुत ही दुःख पाता है ॥७२॥
आठवें महिनेमें पुत्रों द्वारा दिये हुये पिंडको खाकर चलता है, फिर नौवें महिने के पूरा होनेपर नानाक्रन्दपुर को जाता है ॥७३॥

सप्तमेमासिसंप्राप्तेपुरंबह्वापदंव्रजेत् ॥ तत्रभुंक्तेप्रदत्तंयत्सप्तमेमासिपुत्रकैः ॥ ७१ ॥ तत्पुरंतुव्यतिक्रम्यदुःखदंपुरमृच्छति ॥ महद्दुःखमवाप्नोतिखेगच्छन्खेचरेश्वर ॥ ७२ ॥ मास्यष्टमेप्रदत्तंयत्पिण्डंभुक्त्वाप्रसर्पति ॥ नवमेमासिसम्पूर्णेनानाक्रन्दपुरंव्रजेत् ॥ ७३ ॥ नानाक्रन्दगणान्दृष्ट्वाक्रन्दमानान्सुदारुणान् ॥ स्वयंचशून्यहृदयः समाक्रन्दतिदुःखितः ॥७४॥ विहायतत्पुरः प्रेतस्तर्जितोयमकिङ्करैः ॥ सुतप्तभवनंगच्छेद्दशमेमासिकृच्छ्रतः ॥७५॥ पिण्डदानंजलंतत्रभुक्त्वापिनसुखीभवेत् ॥ मासिचैकादशेपूर्णेपुरंरौद्रंसगच्छति ॥७६॥ दशैकमासिकंतत्रभुंक्तेदत्तंसुतादिभिः ॥ सार्द्धेचैकादशेमासिपयोवर्षणमृच्छति ॥ ७७ ॥

भयङ्कर क्रन्दन करते हुये आक्रन्द गणोंको देखकर आप भी शून्य हृदय तथा दुःखित होकर चिल्लाता है ॥७४॥ यमके दूतोंसे धमकाया गया वह प्राणी उस पुरको छोड़कर दशवें महिनेमें बडे कष्ट से सुतप्त भवन को जाता है ॥ ॥७५॥ वहां पिण्डदान तथा जल का भोजन करके भी सुखी नहीं होता है और ग्यारह महिने पूरे होने पर रौद्रपुर को जाता है, वहाँ पुत्रों द्वारा दिये हुये ग्यारहवें

महिने के पिण्डको खाता है, फिर साढ़े ग्यारह महिने पूरे होने पर पयोवर्षण में पहुँचता है ॥७६॥७७॥ उस पयोवर्षण पुरमें प्रेतों को दुःख देनेवाले मेघ बरसते हैं, वहाँ न्यूनाब्दिक श्राद्ध को दुःखी होकर खाता है ॥७८॥ उसके बाद वर्ष पूरा होनेपर वह प्रेत शीताढ्यनगर को जाता है,वहाँ हिमालय से सौगुणा अधिक अधिक शीत पडता है ॥७९॥ शीत से पीडित भूखा वह प्रेत दशों दिशाओं को देखता है कि कहीं कोई मेरा बांधव है जो मेरे दुःखको दूर करे ॥८०॥ तब यम के दूत कहते हैं कि कहां तेरा ऐसा पुण्य है, जिससे

मेघास्तत्रप्रवर्षन्तिप्रेतानांदुखदायकाः॥न्यूनाब्दिकंचयच्छ्राद्धंतत्रभुंक्तेसदुःखितः ॥७८॥ संपूर्णे तुततोवर्षेशीताढयन्नगरंव्रजेत्॥हिमाच्छतगुणंतत्रमहाशीतंपतत्यपि ॥७९॥ शीतार्तःक्षुधितःसोपिवीक्षतेहि दिशोदश॥ तिष्ठतेबान्धवः कोपि यो मेदुःखं व्यपोहति ॥८०॥ किंकरास्तेवदन्त्यत्रकिन्तेपुण्यं हिताद्दशम् ॥ भुक्त्वाचवार्षिकंपिंडंधैर्यमालम्बतेपुनः ॥८१॥ ततःसंवत्सरस्यान्ते प्रत्यासन्नेयमालये ॥ बहुभीतिपुरेगत्वाहस्तमात्रंसमुत्सृजेत् ॥८२॥ अंगुष्ठमात्रोवायुश्चकर्मभोगायखेचरः ॥ यातनादेहमासाद्यसहयाम्यैः प्रयातिच ॥८३॥

यह दुःख जाय फिर वार्षिक पिंडको खाकर धीरज धरता है।८१।उसके बाद वर्षके अंतमें यमराजका घर निकट आजाने पर बहुभीति पुर में जाकर हस्तमात्र शरीरको छोड देता है॥८२॥कर्मोंके भोगके लिये अंगुष्ठमात्र, आकाशमें विचरण करनेवाला वह यातनाके देह को प्राप्त कर यमदूतों के साथ जाता है ॥ ८३ ॥

हे काश्यप ! जिन्होंने मरते समय और्ध्व देहिक दान नहीं दिये हैं वे दृढ बन्धनोंसे बांधे हुये इस प्रकार कष्टसे जाते हैं ॥८४॥ हे गरुड़ ! धर्मराजके पुरमें चार द्वार हैं, उनमेंसे यह दक्षिणद्वारका मार्ग तुमको कहा गया है ॥ ८५ ॥ इस महाभयङ्कर मार्ग में भूख प्यास से पीडित प्राणी जिस तरह जाता है वह सब हमने कहा, और अब क्या सुनना चाहते हो ॥८६॥ गरुड़ पुराण

और्ध्वदेहिकदानानियैर्नदत्तानिकाश्यप ॥ एवं कष्टेन ते यान्ति गृहीता दृढ़बन्धनैः ॥ ८४॥ धर्मराजपुरेसन्तिचतुर्द्वाराणि खेचर ॥ तत्रायं दक्षिणद्वारमार्गस्तेपरिकीर्तितः ॥ ८५ ॥ अस्मिन्पथि महाघोरेक्षुतृषाश्रमपीडिताः ॥ यथायान्तितथाप्रोक्तंकिंभूयः श्रोतुमिच्छसि ॥ ८६ ॥ इति श्रीगरुडपुराणेसारोद्धारेयममार्गनिरूपणंनामद्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥ गरुडउवाच ॥ यममार्गमतिक्रम्यगत्वापापीयमालये ॥ कीदृशींयातनांभुंक्तेतन्मेकथयकेशव ॥ १ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ आद्यंतंचप्रवक्ष्यामिशृणुष्वविनतात्मज ॥ कथ्यमानेपिनरकेत्वंभविष्यसिकम्पितः ॥ २ ॥

सारोद्धार हिन्दी टीकामें यम मार्ग निरूपण नामक द्वितीय अध्याय समाप्त हुआ ॥२॥ गरुड़ बोले हे केशव ! यमके मार्गका उल्लङ्घन करके, यमके घरमें जाकर पापी किस तरहकी यातना भोगता है वह मुझसे कहिये ॥१॥ श्री भगवान बोलेः- हे विनताके पुत्र ! मैं प्रारम्भ से अन्त तक कहूँगा, तुम सुनो, नरकका वर्णन करने पर तुम कांप उठोगे ॥२॥

हे काश्यप ! बहुभीति पुरसे आगे चवालीस योजन पर बड़ा यम पुर है ॥३॥ हाहाकार युक्त उस पुरको देखकर पापी चिल्लाता हैं, उस चिल्लानेको सुनकर यमपुरके विचरनेवाले ॥४॥ सब वहाँ जाकर द्वार पालसे कहते हैं, धर्मध्वज नामक द्वारपाल सदा वहाँ रहता है ॥५॥ वह जाकर सब शुभ अशुभ चित्रगुप्तसे कहता है, उसके बाद चित्रगुप्त धर्मराजको निवेदन करते हैं ॥६॥

चत्वारिंशद्योजनानिचतुर्युक्तानिकाश्यप ॥ बहुभीतिपुरादग्रे धर्मराजपुरंमहत् ॥ ३ ॥ हाहाकारसमायुक्तं दृष्ट्वाक्रन्दतिपातकी ॥ तत्क्रन्दितंसमाकर्ण्ययमस्यपुरचारिणः ॥ ४ ॥ गत्वाचतत्रतेसर्वेप्रतीहारंवदन्तिहि ॥ धर्मध्वजः प्रतीहारस्तत्रातिष्ठतिसर्वदा ॥ ५ ॥ सगत्वाचित्रगुप्तायब्रूतेतस्यशुभाशुभम् ॥ ततस्तंचित्रगुप्तो पिधर्मराजंनिवेदयत् ॥ ६ ॥ नास्तिकायेनरास्ताक्ष्र्य महापापरताः सदा ॥ तांश्चसर्वान्यथायोग्यं सम्यग्जा नातिधर्मराट् ॥ ७ ॥ तथापिचित्रगुप्तायतेषांपापंसपृच्छति ॥ चित्रगुप्तोपिसर्वज्ञः श्रवणान्परिपृच्छति ॥८॥ श्रवणाब्रह्मणःपुत्राः स्वर्भूपातालचारिणः ॥ दूरश्रवणविज्ञानदूरदर्शनचक्षुषः ॥ ९ ॥

हे ताक्ष्र्य ! सदैव महापापोंके करनेमें लगे रहने वाले जो नास्तिक पुरुष हैं, उन सभीको धर्मराज यथा योग्य भली भाँति जानते हैं ॥७॥तो भी धर्मराज चित्रगुप्तसे उनके पापोंको पूछते हैं और सर्वज्ञ चित्रगुप्त भी श्रवणोंसे पूछतेहैं ॥८॥स्वर्ग पृथ्वी और पातालमें फिरने वाले श्रवण ब्रह्माके पुत्र हैं, उनको दूरहीसे सुननेका विशेष ज्ञान है और उनके नेत्रभी दूरतक देखनेवाले हैं ॥९॥

उनकी पत्नियाँ भी उन्हीं के समान हैं वे सब श्रवणी हैं परन्तु उनके नाम पृथक् पृथक् हैं, स्त्रियों के सब कामों को वे तत्व से जानती हैं ॥१०॥ मनुष्यों द्वारा प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष जो कहा जाता है और किया जाता है, उस सबको वे श्रवण तथा उनकी पत्नियाँ चित्रगुप्त से कह देते हैं ॥११॥ धर्मराज के वे दूत मनुष्यों के शुभ अशुभ, मन वाणी तथा देह से उत्पन्न कर्म को पूरी तरह से

तेषां पत्न्यस्तथाभूताः श्रवण्यः पृथगाह्वयाः ॥ स्त्रीणां विचेष्टितंसर्वंताविजानन्तितत्त्वतः ॥ १० ॥ नरैःप्रच्छन्नप्रत्यक्षंयत्प्रोक्तंचकृतंचयत् ॥ सर्वमावेदयन्त्येवचित्रगुप्तायतेचताः ॥ ११ ॥ चारास्तेधर्मराजस्य मनुष्याणांशुभाशुभम् ॥ मनोवाक्कायजंकर्मसर्वंजानन्तितत्त्वतः ॥ १२ ॥ एवंतेषांशक्तिरस्तिमर्त्यामर्त्याधि कारिणाम् ॥ कथयन्तिनृणांकर्मश्रवणाः सत्यवादिनः ॥ १३ ॥ व्रतदानैश्चसत्योक्त्यायस्तोषयतितान्नरः ॥ भवन्तितस्यतेसौम्याः स्वर्गमोक्षप्रदायिनः ॥ १४ ॥ पापिनांपापकर्माणिज्ञात्वातेसत्यवादिनः ॥ धर्म राजपुरःप्रोक्ताजायन्तेदुखदायिनः ॥ १५ ॥

जानते हैं ॥ १२ ॥ मनुष्य और देवता सभी के अधिकारी, सत्य बोलने वाले श्रवण मनुष्यों के कर्मों को कह देते हैं ॥१३॥ व्रत, दान तथा सत्य बोलने से जो मनुष्य उनको प्रसन्न करता है, सौम्य वे उसको स्वर्ग और मोक्ष को देने वाले होते हैं ॥ १४ ॥ पापियों के पापकर्मों को जानकर सत्यवादी वे धर्मराज के सामने कहे जाने से दुःखदायी होते हैं ॥ १५ ॥

सूर्य, चंद्रमा, पवन, अग्नि, आकाश, पृथ्वी, जल, हृदय, यम, दिन, रात तथा दोनों संध्या और धर्म ये सब मनुष्य के वृत्तान्त को जानते हैं ॥१६॥ धर्मराज, चित्रगुप्त, श्रवण और भास्कर आदि शरीरमें स्थित पाप पुण्य को सम्पूर्ण रूपसे देखते हैं ॥१७॥ इस प्रकार यमराज पापी मनुष्यों के पापों का अच्छी तरह से निश्चयकर उनको बुलाकर अति भयंकर अपना रूप दिखाते हैं ॥ १८ ॥ वे

आदित्यचंद्रावनिलोनलश्चद्यौर्भूमिरापोहृदयंयमश्च ॥अहश्चरात्रिश्चउभेचसन्ध्येधर्मश्चजानातिनरस्यवृत्तम् ॥१६॥ धर्मराजश्चित्रगुप्तःश्रवणाभास्कारादयः ॥कायस्थंतत्रपश्यन्तिपापंपुण्यंचसर्वशः ॥१७॥ एवंसुनिश्चयं कृत्वापापिनांपातकंयमः ॥ आहूयतान्निजंरूपंदर्शयत्यतिभीषणम् ॥१८॥ पापिष्ठास्तेप्रपश्यन्तियमरूपभयंकरम् ॥ दण्डहस्तमहाकायंमाहिषोपरिसंस्थितम् ॥ १९ ॥ प्रलयाम्बुदनिर्घोषंकज्जलाचलसन्निभम् ॥ विद्युत्प्रभायुधैर्भीमंद्वात्रिंशद्भुजसंयुतम् ॥ २० ॥ योजनत्रयविस्तारंवापीतुल्यविलोचनम् ॥ दंष्ट्राकरालवदनरक्ताक्षंदीर्घनासिकम् ॥ २१ ॥

पापी हाथ में दण्ड धारण किये हुये, बहुत बडे शरीरवाले, भैंसे के ऊपर बैठे हुये यम के भयंकर रूप को देखते हैं ॥ १९ ॥ प्रलय काल के मेघों के सदृश शब्दवाले, कज्जल पर्वत के समान वर्णवाले, बिजली जैसी चमकवाले शस्त्रों से भयानक बत्तीस भुजाओं वाले ॥२०॥ तीन योजन विस्तारवाले, बावडी के समान नेत्रवाले दाढों से भयंकर मुखवाले, लाल आँखें और लम्बी नाकवाले ॥२१॥

मृत्यु तथा ज्वरादिकोंसे युक्त चित्रगुप्त भी भयानक है, उनके समीप यमके समान बहुतसे दूत गर्जते हैं ॥२२॥ उनसे भयभीत होकर वह दुष्ट प्रेत हाय हाय पुकारता है, जिसने दान नहीं दिया है ऐसा वह पापी कांपता है और चिल्लाता है ॥२३॥ उसके बाद चिल्लाते हुये और अपने कर्मोंको सोचते हुये उन पापियोंसे चित्रगुप्त यमकी आज्ञासे कहते हैं ॥२४॥ अरे पापी दुराचा

मृत्युज्वराधिभिर्युक्तश्चित्रगुप्तोपिभीषणः ॥ सर्वेदूताश्चगर्जंतियमतुल्यास्तदंतिके ॥ २२ ॥ तंदृष्ट्वाभयभीतस्तुहाहेतिवदतेखलः ॥ अदत्तदानः पापात्मा कंपते क्रंदते पुनः ॥ २३ ॥ ततोवदंति तान्सर्वांक्रन्दमानांश्चपापिनः॥शोचतः स्वानिकर्माणिचित्रगुप्तोयमाज्ञया ॥२४॥ भोभोःपापादुराचाराअहंकारप्रदूषिताः ॥किमर्थमर्जितंपापंयुष्माभिरविवेकिभिः ॥ २५ ॥ कामक्रोधाद्यदुत्पन्नंसंगमेनचपापिनाम् ॥ तत्पापं दुःखदंमूढाः किमर्थंचरितंजनाः ॥२६॥ कृतवंतः पुरायूयंपापान्यत्यंतहर्षिताः ॥ तथैवयातनाभोग्याः किमिदानींपराङ्मुखाः ॥ २७ ॥ कृतानियानिपापानियुष्माभिः सुबहून्यपि ॥ तानिपापानिदुःखस्यकारणंचनवंचना ॥२८॥

रियो ! अविवेकियो ! तुमने अहंकारसे दूषित होकर क्यों पाप इकट्ठे किये ॥२५॥ काम तथा क्रोधसे और पापियोंकी संगतिसे जो पाप उत्पन्न हुआ है, हे मूढो ! वह पाप दुःख देनेवाला है, हे जनो ! तुमने क्यों किया है ॥२६॥ पहले तुमने बहुत ही हर्षित होकर जैसे पाप किये हैं वैसीही यमकी यातना भोगनी योग्य है, अब मुख क्यों मोड़ते हो ॥२७॥ तुमने जो बहुतसे

पाप किये हैं वे ही पाप दुःखके कारण हैं, कुछ वंचना नहीं है ॥२८॥ मूर्ख, पण्डित, दरिद्री, धनाढ्य, निर्बल तथा सबल सभी में यमराज समान वर्ताव करने वाले हैं ॥२९॥ वे पापी उस समय चित्रगुप्तके ये वचन सुनकर अपने कर्मोंको सोचते हुये चुपचाप निश्चल होकर बैठते हैं ॥३०॥ चोरकी तरह निश्चल बैठे हुये उनको देखकर यमराज भी उनके पापों के यथा योग्य

मूर्खेपिपंण्डितेवापिदरिद्रेवाश्रियान्विते॥सबलेनिर्बलेवापिसमवर्तीयमः स्मृतः ॥ २९ ॥ चित्रगुप्तस्येतिवाक्यंश्रुत्वातेपापिनस्तदा ॥ शोचंतः स्वानिकर्माणितूष्णींतिष्ठंतिनिश्चलाः ॥ ३० ॥ धर्मराजोऽपितांदृष्ट्वाचोरवन्निश्चलांस्थितान् ॥ आज्ञापयतिपापानांशांतिंचैवयथोचिताम् ॥ ३१ ॥ ततस्तेनिर्दयादूतास्ताडयित्वावदंतिच॥गच्छपापिन्महाघोरान्नरकानतिभीषणान् ॥ ३२ ॥ यमाज्ञाकारिणोदूताःप्रचण्डचण्डकादयः ॥ एकपाशेनतान्बध्वानयन्तिनरकान्प्रति ॥ ३३ ॥ तत्रवृक्षोमहानेकोज्वलदग्निसमप्रभः ॥पंचयोजनविस्तीर्ण एकयोजनमूच्छ्रितः ॥ ३४ ॥

दण्डकी आज्ञा देते हैं ॥३१॥उसके बाद वे निर्दयी दूत ताडना देकर कहते हैं कि हे पापी महाभयंकर अति घोर नरक को जा ॥३२॥ यमके आज्ञाकारी वे प्रचण्ड आदि दूत उन सब पापियोंको एक पाशमें बांधकर नकरको लेजाते हैं ॥३३॥ वहाँ एक बड़ा वृक्ष जलती हुई अग्निके समान कान्तिवाला, पांच योजन (बीसकोस) फैलाववाला और एक योजन (चारकोस) ऊँचा है॥३४॥

उस वृक्ष में शृंखलाओं से बांधकर नीचे की ओर मुख किये उस पापी को वे दूत मारते हैं, उस वृक्ष में जलते हुये वे रोते हैं उनकी रक्षा करने वाला कोई नहीं है ॥ ३५ ॥ उस शाल्मली के वृक्ष में अनेक पापी भूख प्यास से पीडित, थके हुये यमके दूतों से ताडना किये गये लटकते हैं ॥ ३६ ॥ आश्रय रहित वे पापी हाथ जोडकर कहते हैं कि, हे दूतो ! हमारा अपराध

तद्वृक्षेशृंखलैर्बद्ध्वाधोमुखंताडयन्तिते॥रुदंतिज्वलितास्तत्रतेषांत्रातानविद्यते ॥३५॥ तस्मिन्वैशाल्मलीवृक्षे लम्बन्तेनेकपापिनः॥क्षुत्पिपासापरिश्रान्तायमदूतैश्चताडिताः॥३६॥क्षमध्वंभोऽपराधंमेकृताञ्जलिपुटा इति॥ विज्ञापयन्तितान्दूतान्पापिष्ठास्तेनिराश्रयाः॥३७॥पुनःपुनश्चतेदूतैर्हन्यन्ते लोहयष्टिभिः॥ मुद्गरैस्तोमरैःकुन्तै-र्गदाभिर्मुसलैर्भृशम् ॥३८॥ ताडनाच्चैवनिश्चेष्टामूर्च्छिताश्चभवन्तिते ॥ तथानिश्चेष्टितान्दृष्ट्वाकिङ्करास्तेवद-न्तिहि॥३९॥भोभोः पापादुराचाराःकिमर्थंदुष्टचेष्टितम्॥सुलभानिनदत्तानिजलान्यन्यान्यपिकचित् ॥४०॥

क्षमा करो ॥३७॥ वे पापी यम के दूतों द्वारा लोहे की लाठियों से, मुद्गर, तोमर, गदा भाले तथा मूसलों से वारम्वार बहुत ही मारे जाते हैं ॥३८॥ मारने से वे चेष्टा रहित और मूर्छित होजाते हैं, तब ऐसे चेष्टा रहित उन पापियों को देखकर दूत कहते हैं ॥ ३९ ॥ हे पापी दुराचारियो ! तुमने दुष्ट काम क्यों किया ! अति सुलभ जल आदि तथा अन्य वस्तु भी कभी नहीं दी॥४०॥

कभी आधा ग्रास भी नहीं दिया और न कौए तथा कुत्तों को बली दी, न कभी अभ्यागतों को नमस्कार किया और न पितरोंका तर्पण किया।।४१।।यमराज तथा चित्रगुप्त का कभी उत्तम ध्यान नहीं किया और न उनका मन्त्र जपा, जिससे यातना न हो ।।४२।। न तो कोई तीर्थ किया और न देवताओं की पूजा की, गृहस्थाश्रम में स्थित होते हुये भी तुमसे हंतकार (अन्न भाग) भी नहीं दिया

ग्रासार्द्धमपिनोदत्तंनश्ववायसयोर्बलिम् ।। नमस्कृतानातिथयोनकृतंपितृतर्पणम् ।। ४१ ।। यमस्यचित्रगुप्तस्यनकृतंध्यानमुत्तमम्।।नजप्तश्चतयोर्मन्त्रो नभवेद्येनयातना।।४२।।नापिकिञ्चित्कृतंतीर्थंपूजितानैवदेवताः।। गृहाश्रमस्थितेनापिहन्तकारोपिनोद्धृतः ।।४३।। शुश्रूषिताश्चनोसन्तोभुंक्ष्वपापफलंस्वकम् ।। यतस्त्वंधर्महीनोसि ततः संताड्यसेऽशुभम् ।।४४।। क्षमापराधं कुरुते भगवान्हरिरीश्वरः।।वयं तु सापराधनां दण्डदाहितदाज्ञया ।।४५।। एवमुक्त्वाचतेदूतानिर्दयंताडयन्तितान्।।ज्वलदङ्गारसदृशाःपतितास्ताडनादधः ।।४६।।

गया ।।४३।। सन्तों की भी सेवा नहीं की, इससे तू अपने पापके फल को भोग तू धर्म से हीन है, इसी कारण बुरी मार से मारा जाता है ।।४४।। भगवान् हरि जो ईश्वर हैं वे अपराधों को क्षमा करते हैं, हम तो उनकी आज्ञा से दण्ड देनेवाले हैं ।। ४ ।। ऐसे कहकर वे दूत निर्दय होकर उनको मारते हैं और जलते हुये अंगारे के समान वे पापी मारने से नीचे गिरते हैं ।। ४६ ।।

गिरनेसे उस वृक्षके पत्तोंसे उनका शरीर कटजाता है, नीचे गिरे हुये उन सबको कुत्ते खाते हैं और वे पापी रोते हैं ॥४७॥ तब रोते हुये उन पापियोंके मुखोंमें दूत धूल भर देते हैं और अनेक तरहके पाशोंसे बांधकर कोई मुद्गरोंसे मारे जाते हैं ॥ ४८ ॥ कोई पापी काठकी तरह आराओंसे चीरकर दो टुकड़े किये जाते हैं कोई पृथ्वी पर डालकर कुल्हाड़ीसे टुकड़े टुकड़े कियेजाते

पतनात्तस्यपत्रस्यगात्रच्छेदोभवेत्ततः ॥ तानधः पतिताञ्छ्वानोभक्षयंति रुदन्तिते ॥४७॥ रुदन्तस्तेततोदूते र्मुखमापूयरेणुभिः॥निबद्ध्यविविधःपाशैर्हन्यन्तेकेऽपिमुदरैः॥४८॥पापिनःकेऽपिभिद्यन्तेक्रकचैःकाष्ठवद्द्विधाः॥ क्षिप्त्वाचान्येधरापृष्ठेकुठारैः खण्डशः कृताः॥४९॥अर्धखात्वावटेकेचिद्भिद्यन्तेमूर्तिसायकैः॥अपरेयन्त्रमध्य स्थाः पीडयन्तेचेक्षुदण्डवत् ॥५०॥केचित्प्रज्वलमानैस्तुसाङ्गारैः परितोभृशम् ॥ उल्मुकैर्वेष्टयित्वाचध्मायन्तेलोहपिण्डवत् ॥५१॥ केचिद्घृतमयेपाकेतैलपाकेतथापरे ॥ कटाहक्षिप्तवटवत्प्रक्षिप्यन्तेयतस्ततः॥५२॥

हैं ॥४९॥ कोई पापी गड्ढेमें आधा गाड़ दिये जाते हैं और उनके शिरमें तीर मारे जाते हैं, कोई कोल्हूमें रखकर ईखकी तरह पेरे जाते हैं ॥५०॥ कोई जलते हुये अंगारों समेत अधजली लकड़ियोंसे चारों तरफसे लपेट कर लोहेके पिण्डके समान धौंके जाते हैं ॥५१॥ कोई घीके पाकमें और कोई तेलके पाकमें, कड़ाहीमें डालेगये बड़ेके समान इधर उधर चलाये जाते हैं ॥५२॥

कोई मार्गमें मतवाले हाथियोंके आगे डाले जाते हैं और किसीके हाथ पांव बांधकर नीचेको मुख किया जाता है ॥५३॥ कोई कुओंमें डाले जाते हैं और कोई पर्वतके ऊपरसे डाले जाते हैं, कोई कीड़ोंके कुण्डमें डूबे हुये कीड़ों द्वारा पीडित किये जाते हैं ॥५४॥ वज्रके समान चोंच वाले बड़े बड़े कौओंसे और मांसको चाहने वाले गीधोंसे शिर नोंचे जाते हैं, और नेत्रों तथा मुख

केचिन्मत्तगजेन्द्राणां क्षिप्यन्तेपुरतः पथि ॥बद्धाहस्तौचपादौचक्रियन्तेकेप्यधोमुखाः॥५३॥क्षिप्यन्तेकेऽपि कूपेषुपात्यन्तेकेऽपिपर्वतात ॥ निमग्नाः कृमिकुण्डेषुतुद्यन्तेकृमिभिः परे ॥५४॥ वज्रतुण्डैर्महाकाकैर्गृध्रैरामि षगृध्नुभिः॥निष्कृष्यन्तेशिरोदेशेनेत्रेवास्येचचञ्चुभिः॥५५॥ऋणंवैप्रार्थयन्त्यन्येदेहिदेहिधनंमम॥ यमलोके मयादृष्टोधनंमेभक्षितंत्वया ॥ ५६ ॥ एवंविवदमानानांपापिनांनरकालये ॥ छित्त्वासंदंशकैर्दूतामांसखण्डा न्ददन्तिच॥५७ ॥ एवंसंताडयतान्दूताःसंकृष्ययमशासनात्॥तामिस्रादिषुघोरेषुक्षिप्यन्तेनरकेषुच ॥५८॥ नरकाद्दुःखबहुलास्तत्रवृक्षसमीपतः ॥ तेष्वस्तियन्महद्दुःखंतद्वाचामप्यगोचरम् ॥ ५९ ॥

में चोंचें मारी जाती हैं ॥५५॥ कोई अपना ऋण मांगता है और कोई कहता है कि मेरा धनदे, मेरा धन खालिया है अब तुझ को मैंने यमलोकमें देखा है ॥५६॥ नरकमें ऐसे झगड़ा करते हुये पापियोंके मांसको सँडसिओंसे काटकर दूत उनको मांसके टुकड़े देते हैं॥५७॥इस प्रकार दूत उनकी ताडना करके यमकी आज्ञासे तामिस्र आदि घोर नरकमें डालदिये जाते हैं॥५८॥नरकोमें तो बहुत दुःख है परन्तु वहाँ उस वृक्षके समीप जो बड़ा दुःख है, वह वचनसे भी नहीं कह जाता है ॥ ५९ ॥

हे गरुड ! चौरासी लाख नरक हैं, जिनमें अत्यन्त भयंकर इक्कीस मुख्य हैं ॥६०॥ उनके नाम कहते हैं:-- तामिस्त्र १ लोह शंकु २ महारौरव ३ शाल्मली ४ रौरव ५ कुड्मल ६ कालसूत्र ७ पूतिमृत्तिक ८॥६१॥ संघात ९ लोहितोद १० सविष ११ संप्रतापन १२ महानिरय १३ काकोल १४ संजीवन १५ महापथ १६ ॥६२॥ अवीचि १७ अंधतामिस्त्र १८ कुम्भी पाक १९ संप्रतापन २० और तपन

चतुरशीतिलक्षाणिनरकाःसन्तिखेचर ॥ तेषांमध्येघोरतमाधौरेयास्त्वेकविंशतिः॥ ६० ॥ तामिस्त्रोलोहशंकुश्चमहारौरवशाल्मली ॥ रौरवः कुड्मलः कालसूत्रकः पूतिमृत्तिकः ॥६१॥ संघातोलोहितोदश्चसविषः संप्रतापनः ॥ महानिरयकाकोलौसंजीवनमहापथा ॥ ६२ ॥ अवीचिरन्धतामिस्त्रः कुम्भीपाकस्तथैवच ॥ संप्रतापननामैकस्तपनस्त्वेकविंशतिः ॥ ६३ ॥ नानापीडामयाः सर्वेनानाभेदैः प्रकल्पिताः ॥ नानापापविपाकाश्चकिङ्करैर्घैरधिष्ठिताः॥६४॥ एतेषुपतितामूढाः पापिष्ठाधर्मवर्जिताः॥ तत्रभुञ्जन्तिकल्पान्तेतास्तानरकयातनाः॥६५॥यास्तामिस्त्रान्धतामिस्त्रारौरवाद्याश्चयातनाः॥भुंक्तेनरोवानारीवा मिथः संगेननिर्मिताः॥६६॥

२१॥६३॥अनेक प्रकारकी यातनावाले, नाना प्रकार के भेदोंसे कल्पना किये गये, अनेक तरहके पापोंका फल देनेवाले और दूतोंके समूह से अधिष्ठित ये नरक हैं ॥६४॥ इनमें पडे हुये धर्मसे रहित मूर्ख पापी कल्पके अन्ततक उन उन नरकोंकी यातनाओं को भोगते हैं ॥६५॥ तामिस्त्र, अन्ध तामिस्त्र और रौरव आदिकी आपसके संगसे प्राप्त हुई यातनाओं को नर और नारी भोगते हैं ॥६६॥

इस प्रकार कुटुम्ब का पालन करनेवाले अथवा अपनाही पेट भरने वाले, अपनी देह और कुटुम्बको छोड़कर परलोकमें जाकर इस तरह के फल भोगते हैं।।६७।।प्राणियोंके द्रोहसे पोषित अपने स्थूल शरीरको यहीं छोड़कर पापको भोगनेवाला कर्ता अकेलाही अन्धतम नरक को जाता है भाग लेनेवाले नहीं जाते हैं ।।६८।। दैव से पहुँचाया हुआ कुटुम्ब को पालने का पाप उसको मिलता है, वह पुरुष उस पापका नरकमें जिसका द्रव्य हर लिया गया है ऐसे आतुरके समान भोग करता है ।।६९।। जो केवल अधर्म से ही कुटुम्ब का

एवंकुटुम्बंबिभ्राणउदरम्भरएववा ।। विसृज्येहोभयंप्रेत्यभुंक्तेतत्फलमीदृशम् ।। ६७ ।। एकःप्रपद्यतेध्वान्तं हित्वेदंस्वंकलेवरम् ।। कुशलेतरपाथेयोभूतद्रोहेणयद्भृतम् ।।६८।। दैवेनासादितंतस्यशमलंनिरयेपुमान् ।। भुंक्तेकुटुम्बपोषस्यंहृतद्रव्यइवातुरः ।। ६९ ।। केवलेनह्यधर्मेणकुटुम्बभरणोत्सुकः ।।यातिजीवोऽन्धतामिस्र ञ्चरमन्तमसःपदम् ।। ७० ।। अधस्तान्नरलोकस्ययावतीर्यातनादयः ।। क्रमशः समनुक्रम्यपुनरत्राव्रजेच्छुचिः ।।७१।। इति श्रीगरुडपुराणेसारोद्धारेयमयातनानिरूपणंनामतृतीयोध्यायः ।। ३।।

पालन करने को उद्यत रहता है वह पुरुष अन्धकार के अन्तिम स्थान अन्ध तामिस्र नामक नरकमें जाता है ।। ७० ।। मनुष्य देह प्राप्ति के पहले जितनी यातनाएँ हैं, उनका क्रम से उल्लंघन कर शुद्ध होकर फिर इस भूलोक में आता है अर्थात् जन्म लेता है ।। ७१ ।। गरुड पुराण सारोद्धार हिन्दीटीका में यमयातना निरूपण नामक तृतीय अध्याय समाप्त हुआ ।। ३ ।।

गरुड़ बोले:--कौनसे पापोंसे महामार्गमें जाते हैं ? कौन २ से पापोंसे वैतरणीमें गिरते हैं और किन २ पापोंसे नरकमें जाते हैं ! हे केशव ! यह मुझसे कहिये ॥१॥ श्री भगवान् बोले:- जो मनुष्य शुभकर्मोंको छोड़कर अशुभ कर्मों ही में सदा लगे रहते हैं वे एक नरकसे दूसरे नरकमें जाते हैं, एक दुःखसे दूसरा दुःख होता है और एक भयसे दूसरा भय होता है ॥२॥ तीनों द्वारोंसे हो

गरुड उवाच॥कैर्गच्छन्तिमहामर्गेवैतरण्यांपतन्तिकैः॥कैःपापैर्नरकेयान्तितन्मेकथयकेशव॥१॥श्रीभगवानुवाच॥सदैवाकर्मनिरताः शुभकर्मपराङ्मुखाः॥ नरकान्नरकंयान्तिदुःखाद्दुःखंभयाद्भयम् ॥२॥ धर्मराजपुरेयान्तित्रिभिर्द्वारैस्तुधार्मिकाः॥पापास्तुदक्षिणद्वारमार्गेणैवव्रजन्तितम्॥३॥ अस्मिन्नेवमहादुःखेमार्गेवैतरणीनदी ॥तत्रयेपापिनोयान्तितानहंकथयामिते ॥४॥ ब्रह्मघ्नाश्चसुरापाश्चगोघ्नावा बालघातकाः॥स्त्रीघातीगर्भपातीचयेचप्रच्छन्नपापिनः ॥५॥ येहरन्तिगुरोर्द्रव्यंदेवद्रव्यंद्विजस्यवा॥ स्त्रीद्रव्यहारिणोयेचबालद्रव्यहराश्चये॥६॥

कर धर्मात्मा यम पुरको जाते हैं और पापीतो दक्षिण द्वारहीके मार्गमें होकर यमपुरमें जाते हैं ॥३॥ इसी महा दुःख देने वाले मार्गमें वैतरणी नदी है, उसमें जो पापी जाते हैं उनको मैं तुमसे कहता हूं ॥४॥ ब्रह्म हत्यारे, मदिरा पीनेवाले, गौहत्या करने वाले, बालक तथा स्त्री को मारने वाले, गर्भको गिराने वाले, और जो छिपे हुये पापको करने वाले हैं ॥ ५ ॥ जो गुरुका धन

हरण करलेते हैं, देवता अथवा ब्राह्मणका धन हरलेते हैं और स्त्री तथा बालकका धन हरलेते हैं ॥६॥ जो ऋणको नहीं लौटाते हैं, धरोहरको पचालेते हैं, जो विश्वास घाती हैं और अन्तमें विष पिलाकर मारदेते हैं ॥७॥ दोषको ग्रहण करनेवाले, गुणोंकी निन्दा करनेवाले, गुणवानोंमें ईर्षा करनेवाले, नीच जनोंसे प्रीति करनेवाले मूर्ख और सत्संगतिसे दूर रहनेवाले ॥८॥ तीर्थोंकी

येऋणंनप्रयच्छन्तियेवैन्यासापहारकाः ॥ विश्वासघातकायेचसविषान्नेनमारकाः ॥ ७ ॥ दोषग्राहीगुणाश्लाघीगुणवत्सुसमत्सराः ॥ नीचानुरागिणोमूढाः सत्संगतिपराङ्मुखाः ॥ ८ ॥ तीर्थसज्जनसत्कर्मगुरुदेवविनिन्दकाः ॥ पुराणवेदमीमांसान्यायवेदान्तदूषकाः ॥ ९ ॥ हर्षितादुखितंदृष्ट्वाहर्षितेदुखःदायकाः ॥ दुष्टवाक्यस्यवक्तारोदुष्टचित्ताश्चयेसदा ॥ १०॥ नशृण्वन्तिहितंवाक्यंशास्त्रवार्ताकदापिन ॥ आत्मसंभाविताः स्तब्धा मूढाःपंडितमानिनः ॥ ११ ॥

सज्जनोंकी सत्कर्मोंकी और गुरु तथा देवताओंकी निन्दा करनेवाले, पुराण वेद मीमांसा न्याय तथा वेदान्तको दूषित करनेवाले ॥९॥ दुःखीको देखकर प्रसन्न होनेवाले, प्रसन्नको दुःख देनेवाले, दुष्ट वचन कहनेवाले, सदा दुष्टचित्तवाले ॥१०॥ जो हितवचन नहीं सुनते हैं, शास्त्रकी बातको कभी नहीं सुनते हैं और जो अपनेको कुछ योग्य समझकर घमण्डमें भरे रहते हैं, जो मूर्ख हैं परन्तु अपने आपको पण्डित मानते हैं ॥ ११ ॥

ये सब तथा और बहुत से धर्म से हीन पापी रात दिन रोते हुये यमके मार्ग में जाते हैं ॥१२॥ यमके दूतों द्वारा ताडित किये गये वे पापी वैतरणीको जाते हैं, उस नदीमें जो पापी गिरते हैं, उनको मैं तुमसे कहता हूँ ॥१३॥ जो माता पिता गुरु आचार्य तथा पूज्य जनका अपमान करते हैं वे पापी वैतरणीमें डूबते हैं ॥१४॥ पतिव्रता, सुशील, कुलीन तथा विनय युक्त स्त्रीको द्वेषसे छोड देते हैं वे

एतेचान्येचबहवःपापिष्ठाधर्मवर्जिताः ॥ गच्छन्तियममार्गेहिरोदमानादिवानिशम् ॥ १२ ॥ यमदूतैस्ताडचमानायान्तिवैतरणींप्रति ॥ तस्यांपतन्तियेपापास्तानहंकथयामिते ॥ १३ ॥ मातरंयेनमन्यन्तेपितरं गुरुमेवच ॥ आचार्यंचापिपूज्यञ्चतस्यांमज्जन्तितेनराः ॥१४॥ पतिव्रतांसाधुशीलांकुलीनांविनयान्विताम्॥ स्त्रियंत्यजन्तियेद्वेषाद्वैतरण्यांपतन्तिते ॥ १५ ॥ सतांगुणसहस्रेषुदोषानारोपयन्तिये ॥ तेष्ववज्ञांचकुर्वन्तिवैतरण्यांपतन्तिते ॥१६॥ ब्राह्मणायप्रतिश्रुत्ययथार्थंनददातियः ॥आहूयनास्तियोब्रूयात्तयोर्वासश्चसंततम्॥ ॥१७॥ स्वयंदत्तापहर्ताचदानंदत्त्वानुतापकः ॥ परवृत्तिहरश्चैवदानेदत्तेनिवारकः ॥ १८ ॥

वैतरणीमें गिरते हैं ॥१५॥ जो सज्जनोंके हजारों गुणोंमें दोषोंका आरोपण करते हैं और उनका अनादर करते हैं वे वैतरणी नदी में गिरते हैं ॥१६॥ जो ब्राह्मणके लिये प्रतिज्ञा करके उचित नहीं देते हैं और जो बुलाकर नहीं कर देते हैं इन दोनोंका सदा उसीमें वास रहता है ॥१७॥ जो दान देकर स्वयं ही छीन लेते हैं, दान देकर बादमें पछताते हैं, जो दूसरेकी जीविकाका हरण करते हैं और दिये

हुये दान को रोकते हैं ॥१८॥ जो यज्ञको विध्वंस करनेवाले हैं जो कथामें विघ्न करते हैं, खेत की सीमा को दबा लेते हैं तथा जो गोचर भूमि को जोतते हैं ॥ १९ ॥ ब्राह्मण होकर रस (घी, दूध आदि) को बेंचने वाले वृषली पति, वेदमें वर्णित यज्ञ के बिना पशु को मारनेवाला, ॥ २० ॥ ब्रह्मकर्म से भ्रष्ट मांस खानेवाला, मदिरा पीनेवाला, निरंकुश (स्वभाववाला) शास्त्र का

यज्ञविध्वंसकश्चैवकथाभङ्करश्चयः ॥ क्षेत्रसीमाहरश्चैवयश्चगोचरकर्षकः ॥ १९ ॥ ब्राह्मणोरसविक्रेतायदि स्याद्वृषलीपतिः ॥ वेदोक्तयज्ञादन्यत्रस्वात्मार्थपशुमारकः ॥२०॥ ब्रह्मकर्मपरिभ्रष्टोमांसभोक्ताचमद्यपः ॥ उच्छृंखलस्वभावोयः शास्त्राध्ययनवर्जितः ॥ २१ ॥ वेदाक्षरंपठेच्छूद्रःकापिलंयःपयः पिबेत् ॥धारयेद्ब्रह्म सूत्रंचभवेद्वाब्राह्मणीपतिः ॥ २२ ॥ राजभार्याभिलाषीचपरदारापहारकः ॥ कन्यायांकामुकश्चैवसतीनां दूषकश्चयः ॥२३॥ एतेचान्येचबहवोनिषिद्धाचरणोत्सुकाः ॥ विहितत्यागिनोमूढावैतरण्यांपतन्तिते॥२४॥

अध्ययन नहीं करनेवाला ॥ २१ ॥ शूद्र होकर वेद पढनेवाला, कपिला गौ का दूध पीनेवाला, यज्ञोपवीत धारण करनेवाला अथवा ब्राह्मणी का पति होनेवाला ॥ २२ ॥ राजाकी स्त्री की इच्छा करनेवाला, कन्यासे भोग करनेवाला, पतिव्रताओं को दूषित करनेवाला ॥२३॥ ये सब तथा और बहुत से निषिद्ध आचरणों को करनेवाले तथा विहित(करणीय आचरण) का त्याग करने वाले वैतरणी में गिरते हैं ॥ २४ ॥

सब मार्गको उलंघन करके पापी यमलोकको जाते हैं, फिर यमकी आंज्ञा पाकर दूत उन पापियोंको उस वैतरणीमें डालते हैं ॥२५॥ हे खगाधिप ! सब नरकोंमें मुख्य इक्कीस नरकोंसेभी अधिक दुःख देनेवाली वैतरणी है, अतः पापियोंको यमदूत उसमें डालते हैं ॥२६॥ यदि कृष्णा गौका दान नहीं किया है और ऊर्ध्वदेहकी क्रिया नहीं की है, तो उसमें महादुःखको भोगकर उसके तट

सर्वंमार्गमतिक्रम्ययान्तिपापायमालये॥पुनर्यमाज्ञयागत्य दूतास्तस्यांक्षिपन्तितान् ॥२५॥ यावैधुरं धरास
र्वधौरेयाणांखगाधिप ॥अतस्तस्यांप्रक्षिपन्तिवैतरण्यांचपापिनः॥२६॥ कृष्णागौर्यदिनोदत्तानोर्ध्वदेहक्रियाः
कृताः ॥ तस्यांभुक्त्वामहद्दुःखंयान्तिवृक्षंतटोद्भवम्॥२७॥कूटसाक्ष्यप्रदातारःकूटधर्मपरायणाः॥ छलेनाजन
संसक्ताश्चौर्यवृत्त्याचजीविनः ॥२८॥ छेदयन्त्यतिवृक्षांश्चवनारामविभञ्जकाः ॥ व्रततीर्थंपरित्यज्यविधवाशी
लनाशकाः ॥२९॥ भर्तारंदूषयेन्नारीपरंमनसिधारयेत ॥ इत्याद्याःशाल्मलीवृक्षेभुञ्जते बहुताडनम् ॥ ३० ॥

पर उत्पन्न वृक्षको प्राप्त होते हैं ॥२७॥ झूठी गवाही देने वाले, झूठे धर्ममें तत्पर और कपटसे धन जोड़नेमें लगे हुये, चोरकी जीविकासे जीनेवाले ॥२८॥ ऊँचे वृक्षोंको काटने वाले, बाग तथा फुलवाड़ीको तोड़ने वाले, व्रत तथा तीर्थको छोड़कर विधवा का शील नष्टकरने वाले ॥२९॥ जो स्त्री अपने पतिको दोष लगाकर दूसरे पुरुषको मनमें धारण करती है, इत्यादिक पापी

शाल्मलीके वृक्षमें बहुतसी ताड़नाको भोगते हैं ॥३०॥ ताड़न करनेसे उसमेंसे गिर पड़ते हैं उनको नरकमें डालते हैं, उनमेंसे जो गिरते हैं उनके पापोंको मैं तुमसे कहता हूँ ॥३१॥ नास्तिक (जो ईश्वरको नहीं मानते हैं, और "पर लोकमें दानका कुछ फल नहीं होता है" ऐसा कहते हैं) और परम्परासे चली आई धर्मकी मर्यादा को नहीं माननेवाले, कदर्य(स्वयम्को, धर्मके काम को, पुत्र, स्त्री, देवता, अतिथि तथा भृत्यको दुःख देनेवाले) संसारके विषयोंमें सदा आसक्त चित्तवाले, दम्भिक (लोकको ठग

ताडनात्पतितान्दूताः क्षिपन्ति नरकेषुतान् ॥ पतन्तितेषुयेपापास्तानहंकथयामिते ॥ ३१ ॥ नास्तिका भिन्नमर्यादाः कदर्याविषयात्मकाः ॥ दांभिकाश्चकृतघ्नाश्चतेवैनरकगामिनः ॥ ३२ ॥ कूपानांचतडागानां वापीनांदेवसद्मनाम् ॥ प्रजागृहाणांभेत्तारस्तेवैनरकगामिनः ॥ ३३ ॥ विसृज्याश्नन्तियेदाराञ्छिशून्भृत्यां स्तथागुरून् ॥ उत्सृज्यपितृदेवेज्यांतेवैनरकगामिनः ॥ ३४ ॥

नेके लिये झूठे जप तप आदि करने वाले) कृतघ्न (किये हुयेका उपकार नहीं माननेवाले) ये सब नरकगामी हैं ॥३२॥ कुआ, तालाब, बावडी, देवालय तथा प्रजाके घरोंको फोडनेवाले निश्चयपूर्वक नरकमें जाते हैं ॥ ३३ ॥ जो स्त्री, बालक, सेवक तथा गुरुओंको छोड़कर भोजन करते हैं और पितृदेवता तथा वैश्वदेव यज्ञको छोड़कर भोजन करते हैं वे निश्चय नरकमें जाते हैं॥३४॥

कीलों से बांधों से, काष्ठों से, पत्थरों से तथा कांटों से जो मार्ग को रोकते हैं वे निश्चय नरक गामी होते हैं ॥३५॥ शिव, गौरी, विष्णु सूर्य, गणेश, सद्गुरु और पण्डित; इन सब को जो मूर्ख नहीं पूजते हैं वे निश्चय नरक में जानेवाले होते हैं ॥३६॥ दासी को सेज पर सुलाकर ब्राह्मण नरक को प्राप्त होता है और शूद्रा स्त्री में संतान उत्पन्न करके ब्राह्मणत्व से हीन होता है ॥ ३७ ॥ बह अधम

शंकुभिः सेतुभिः काष्ठैः पाषाणैः कण्टकैस्तथा॥येमार्गमुपरुन्धन्तितेवैनरकगामिनः॥३५॥ शिव शिवांहरिं सूर्यं गणेशं सद्गुरुंबुधम्॥नपूजयन्तियेमन्दास्तेवैनरकगामिनः॥३६॥ आरोप्यदासींशयनेविप्रोगच्छेदधोगतिम्॥ प्रजामुत्पाद्यशूद्रायां ब्राह्मण्यादेव हीयते॥ ३७॥ न नमस्कारयोग्योहि स कदापिद्विजाधमः॥ नपूजयन्तितेमूढास्तेवैनरकगामिनः॥ ३८॥ब्राह्मणानांचकलहंगोयुद्धंकलहप्रियाः॥ नवर्जन्त्यनुमोदन्तेते वैनरकगामिनः॥३९॥ अनन्यशरणस्त्रीणामृतुकालव्यतिक्रमम्॥येप्रकुर्वन्तिविद्वेषात्तेवैनरकगामिनः॥४०॥

ब्राह्मण किसी भी तरह नमस्कार के योग्य नहीं है और निश्चय नरक गामी होता है ॥३८॥ जो कलह प्रिय मनुष्य ब्राह्मणों के कलह को और गौओं की लड़ाई को रोकते नहीं है, अपितु बढावा देते हैं वे निश्चय नरक गामी होते हैं ॥३९॥ जिनके एक मात्र पति ही आश्रय है ऐसी स्त्रियों के समीप जो द्वेष से नहीं जाते हैं अर्थात् उनके ऋतुकाल को व्यर्थ खोते हैं वे निश्चय नरकगामी

हैं ॥४०॥ जो कामान्ध होकर रजस्वला स्त्री में गमन करते हैं और पर्वमें, जलमें, दिनमें तथा श्राद्ध के दिन जो स्त्री गमन करते हैं वे निश्चय नरकगामी होते हैं ॥४१॥ जो शरीरके मलको अग्निमें डालते हैं, बगीचेमें तथा गौओंके स्थानमें और पवनके सन्मुख मलमूत्र त्याग करते हैं वे निश्चय नरकगामी होते हैं ॥४२॥ शस्त्र बनानेवाले, धनुषबाण बनानेवाले, तथा इनको बेचनेवाले निश्चय

येपिगच्छन्तिकामान्धानराःनारींरजस्वलाम् ॥ पर्वस्वप्सुदिवाश्राद्धेतेवैनरकगामिनः ॥ ४१ ॥ येशरीरं मलंवह्नौप्रक्षिपन्तिजलेपिच ॥ आरामेप्रतिगोष्ठेवातेवैनरकगामिनः ॥ ४२ ॥ शस्त्राणांयेचकर्तारःशराणां धनुषांतथा ॥ विक्रेतारश्चयेतेषांतेवैनरकगामिनः ॥ ४३ ॥ चर्मविक्रयिणोवैश्याः केशविक्रेयकाः स्त्रियः ॥ विषविक्रयिणः सर्वे तेवैनरकगामिनः ॥ ४४ ॥ अनाथंनानुकम्पन्तियेसतांद्वेषकारकाः ॥ विनापराधंदण्डय न्तितेवैनरकगामिनः॥४५॥आशयासमनुप्राप्तान्ब्राह्मणानर्थिनोगृहे॥नभोजयंतिपाकेऽपितेवैनरकगामिनः ४६॥

नरक में जाते हैं ॥४३॥ चमडा बेचनेवाले वैश्य व्यभिचारिणी स्त्री, विष बेचनेवाले सब निश्चय नरक में जाते हैं ॥४४॥ जो अनाथ पर दया नहीं करते हैं, सज्जनों से द्वेष मानते हैं, अपराध के बिना दण्ड देते हैं वे निश्चय नरकगामी होते हैं ॥ ४५ ॥ आशा लगाकर घर में आये हुये ब्राह्मण को जो रसोई तैयार होनेपर भी भोजन नहीं देते हैं वे निश्चय नरक में जाते हैं ॥४६॥

सब जीवों में विश्वास रहित, तथा उनमें दया से हीन सब प्राणियों के साथ कुटिलता करने वाले निश्चय नरकगामी होतेहैं।।४७।। जो संध्या वन्दना कृच्छचान्द्रायणादिक नियमों को प्रतिज्ञा पूर्वक अंगीकार करके बाद में असंयमी हो छोड देते हैं वे निश्चय नरकगामी होते हैं ।।४८।। अध्यातम विद्या को देने वाले गुरु को जो नहीं मानते हैं वे निश्चय नरकगामी होते हैं ।।४९।। जो मित्र

सर्वभूतेष्वविश्वस्तास्तथातेषुविनिर्दयाः ॥ सर्वभूतेषुजिह्मायेतेवैनरकगामिनः ॥ ४७ ॥ नियमान्समुपादायये पश्चादजितेन्द्रियाः ॥विग्लापयन्तितान्भूयस्तेवैनरकगामिनः ॥ ४८ ॥ अध्यात्मविद्यादातारंनैवमन्यन्तियेगुरुम् ॥ तथापुराणवक्तारंतेवैनरकगामिनः ॥ ४९ ॥ मित्रद्रोहकरायेचप्रीतिच्छेदकाराश्चये ॥ आशाच्छेदकरायेचतेवैनरकगामिनः ॥ ५० ॥ विवाहंदेवयात्रांचतीर्थसार्थान्विलुम्पति ॥सवसेन्नरकेघोरेतस्मान्नावर्तनंपुनः ॥ ५१ ॥ अग्निदद्यान्महापापीगृहेग्रामेतथावने ॥ सनीतोयमदूतैश्चवह्निकुण्डेषुपच्यते ॥ ५२ ॥ अग्निनादग्धगात्रोसौयदाच्छायांप्रयाचते ॥ नीयतेचतदादूतैरसिपत्रवनान्तरे ॥ ५३ ॥

से द्रोह करते हैं, प्रीति भंगकरते हैं और जो आशा को नष्ट करते हैं वे निश्चय नरक में जाने वाले होते हैं ।।५०।। विवाह और देवताओं की यात्राको, तीर्थ के जो सार्थ हैं उनको जो बिगाडता है,वह घोर नरक में बसताहै, वहाँ से फिर लौटना नहीं होता है।।५१।।जो महापापी,घर में गावँ में तथा वनमें अग्नि लगाता है,उसको लेकर यमदूत अग्नि के कुण्डोमें पकाते हैं।।५२।। अग्निसे

जले हुये शरीरवाला वह पापी जब छाया मांगता है तब दूत उसको असिपत्रवन में लेजाते है ॥ ५३ ॥ खड्ग के समान तेजधारदार पत्रों से जब शरीर कट जाताहै तब दूत कहते हैं कि हे पापी ! शीतलछाया में सुख से नींद लेले॥५४॥पानी पीनेकी इच्छा करता हुआ वह पापी जब प्यास से पीडित होकर पानी मांगता है तब दूत उसको पीने केलिये बहुत ही गरम तैल देते हैं ॥५५॥ और तब वे दूत कहते हैं कि पीजिये, खाईये जल तथा अन्न उसके पीते ही उनकी आंतें जल जाती हैं और वे गिर

खड्गतीक्ष्णैश्चतत्पत्रैर्गात्रेच्छेदोयदाभवेत् ॥ तदोचुः शीतलच्छायेसुखंनिद्रांकुरुष्वभोः ॥५४॥ पानीयंपातुमिच्छन्वैतृषार्तोयदियाचते॥पानार्थंतैलमत्युष्णंतदाऽतैःप्रदीयते ॥५५॥पीयतांभुज्यतांपानमन्नमूचुस्तदेतिते॥ पीतमात्रेणतेनैवदग्धान्त्रानिपतन्तिते॥५६॥कथञ्चित्पुनरुत्थायप्रलपन्तिसुदीनवत्॥ विवशाउच्छ्वसन्तश्चते वक्तुमपिनाशकन् ॥ ५७ ॥ इत्येवंबहुशस्तार्क्ष्ययातनाः पापिनांस्मृताः ॥ किमेतैर्विस्तरात्प्रोक्तैः सर्वशास्त्रेषुभाषितैः ॥५८॥ एवंवैक्लिश्यमानास्तेनरानार्यः सहस्रशः ॥ पच्यन्तेनरकेघोरेयावदाभूतसम्प्लवम् ॥५९॥

पडते हैं॥५६॥ बडी कठिनाई से फिर उठकर बडे दीनकी तरह कहते हैं,परवश होरहे हैं और लम्बी श्वासेंलेरहे हैं ऐसे वे कहने को भी समर्थ नहीं है ॥५७॥ हे तार्क्ष्य । इस प्रकार पापियों को बहुत सी यातना कही है, इनको विस्तार सेकहने से कोई प्रयोजन नहीं है, ये सब शास्त्रों में कही गई हैं ॥ हे गरुड । इस प्रकार हजारों नरनारी प्रलय काल तक घोर नरक में पचाये जाते हैं ॥५९॥

उस पाप के अक्षय फल को भोगकर वे पापी फिर उत्पत्ति के समय नरक में ही उत्पन्न होते हैं अथवा यमराज की आज्ञासे पृथ्वीमें आकर वृक्षादिक होते हैं ॥ ६० ॥ वृक्ष, गुल्म, लता, वल्ली, पर्वत और तृण से सब महामोह से घेरे हुये स्थावर नाम से प्रसिद्ध हैं ॥ ६१ ॥ कीट, पशु, पक्षी और जलचर (मगर, मछली आदि) आदि चौरासीलाख देवयोनि कही गई हैं

तस्याक्षयंफलंभुक्त्वातत्रैवोत्पद्यतेपुनः॥ यमाज्ञयामहींप्राप्यभवन्तिस्थावरादयः॥६०॥ वृक्षगुल्मलतावल्लीगिरयश्चतृणानिच ॥ स्थावराइतिविख्यातामहामोहसमावृताः ॥६१॥ कीटाश्चपशवश्चैवपक्षिणश्चजलेचराः ॥ चतुरशीतिलक्षेषुकथितादेवयोनयः ॥६२॥ एताःसर्वाःपरिभ्रम्यततोयान्तिमनुष्यताम् ॥ मानुषेऽपिश्वपाकेषुजायन्तेनरकागताः ॥ तत्रापिपापचिह्नैस्तेभवन्तिबहुदुःखिताः ॥ ६३ ॥ गलत्कुष्ठाश्चजन्मान्धामहारोगसमाकुलाः ॥ भवन्त्येवंनरानार्यः पापचिह्नोपलक्षिताः ॥ ६४ ॥

इन सब योनियों में भ्रमण करने के बाद मनुष्ययोनि को प्राप्त होता है और मनुष्यों में भी नरक से आये हुये जीव चाण्डाल की योनि में उत्पन्न होते हैं, वहां भी पापके चिह्नों से वे बहुत दुःखी होते हैं ॥ ६२ ॥ ६३ ॥ गलते हुये कोढ के रोगी, जन्म के अन्धे, बडे रोग से व्याकुल ऐसे नरनारी पापके चिह्नों से उपलक्षित होते हैं ॥ ६४ ॥

गरुड पुराण सारोद्धार हिन्दी टीका में चतुर्थ अध्याय समाप्त हुआ॥४॥गरुड बोलेः--हे केशव ! जिस जिस पाप से जो जो चिह्न उत्पन्न होत हैं और जिस जिस योनि में जाता है वह मुझ से कहिये॥१॥श्री भगवान् बोलेः--नरक से आये हुये पापी जिन पापोंसे जिस योनि में जन्म लेते हैं और जिस पापसे जो, चिह्न होते हैं वह तुम मुझसे सुनो ॥२॥ ब्रह्महत्यारा क्षय रोगी होता है, गौ का हत्यारा

इति श्रीगरुडपुराणेसारोद्धारेनरकप्रदपापचिह्ननिरूपणोनामचतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥ गरुडउवाच ॥ येनयेन चपापेनयद्यच्चिह्नंप्रजायते ॥ यांयांयोनिंचगच्छन्तितन्मेकथयकेशव ॥ १ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ यैः पापैर्यान्तियांयोनिंपापिनोनरकागताः ॥ येनपापेनयच्चिह्नंजायतेममतच्छृणु ॥२॥ ब्रह्महाक्षयरोगीस्याद्गोघ्नःस्यात्कुब्जकोजडः॥कन्याघातीभवेत्कुष्ठीत्रयश्चाण्डालयोनिषु॥३॥स्त्रीघातीगर्भपातीचपुलिन्दोरोगवान्भवेत् ॥ अगम्यागमनात्षण्ढोदुश्चर्मागुरुतल्पगः ॥ ४ ॥

कुबडा तथा जड होता है कन्या को मारने वाला कोढी होता है और ये तीनों चाण्डाल की योनि में उत्पन्न होते हैं ॥ ३ ॥ स्त्री को मारने वाला तथा गर्भ को गिरानेवाला पुलिन्द म्लेच्छ जाति में रोगी होता है, पुत्री, पुत्रवधू आदि आगम्य स्त्रियों में गमन करने से नपुंसक होता है और गुरु की स्त्री में गमन करने वाला दुश्चर्म रोग से पीडित होता है ॥ ४ ॥

मांस खानेवालेका रंग अति लाल होता है और मद्यपीनेवालेके दांत काले होते हैं, जो ब्राह्मण जीभकी चञ्चलतासे अभक्ष्यको खाता है उसका पेट बढ़ जाता है ॥ ५ ॥ जो दूसरेको न देकर स्वयं ही मिष्टान्न खाता है उसके गलगण्ड रोग होता है और श्राद्धमें जो अशुद्ध अन्न देता है उसके चित्र नामक रोग होता है जिससे शरीर सफेद हो जाता है॥६॥अभिमानसे गुरुका अपमान करनेवाले मिरगी रोगसे पीडित होते हैं वेद तथा शास्त्रकी निन्दा करने वाला निश्चय पाण्डु रोगी होता है ॥७॥ झूठी गवाही

मांसभोक्तातिरक्ताङ्गः श्यावदन्तस्तुमद्यपः ॥ अभक्ष्यभक्षकोलौल्याद्ब्राह्मणः स्यान्महोदरः ॥ ५ ॥ अदत्वामिष्टमश्नातिसभवेद्गलगण्डवान् ॥ श्राद्धेन्नमशुचिदत्त्वाचित्रकुष्ठीप्रजायते ॥ ६ ॥ गुरोर्गर्वेणावमानादपस्मारी भवेन्नरः ॥ निन्दकोवेदशास्त्राणांपाण्डुरोगी भवेद्ध्रुवम् ॥ ७ ॥ कूटसाक्षीभवेन्मूकः काणःस्यात्पंक्तिभेदकः ॥ अनोष्ठः स्याद्विवाहघ्नोजन्मान्धः पुस्तकं हरेत ॥८॥ गोब्राह्मणपदाघातात्खञ्जः पंगुश्चजायते ॥ गद्गदोऽनृतवादीस्यात्तच्छ्रोताबधिरोभवेत् ॥ ९ ॥

देनेवाला गूंगा होता है और पंक्तिमें भेद करने वाला काना होता है विवाहको बिगाड़ने वाला बिना ओठका होता है और जो पुस्तक चुराता है वह जन्मका अंधा होता है ॥ ८ ॥ गौ तथा ब्राह्मणके लात मारनेसे खंज तथा लंगड़ा होता है, मिथ्याभाषी तुतलाकर बोलनेवाला होता है और मिथ्याभाषण सुननेवाला बहिरा होता है ॥ ९ ॥

जहर देनेवाला जड़ तथा उन्मत्त होता है और आग लगानेवाला गंजा होता है, मांस बेचनेवाला दुर्भग होता है तथा पराये मांसको खानेवाला रोगी होता है॥१०॥ हीरा मोती आदि रत्नोंको चुरानेवाला हीन जातिमें उत्पन्न होता है,स्वर्णको चुरानेवाला कुनखी(जिसके नख काले तथा बिगड़े से होते हैं) होता है धातुमात्रको चुरानेवाला निर्धन होता है॥११॥ अन्न चुरानेवाला चूहा होता है, धान्य (धान, जौ, कोदौंआदि) को चुरानेवाला मनुष्य शलभ (टिड्डी) होता है, जलको चुरानेवाला चातक (पपीहा)

गरदःस्याज्जडोन्मत्तः खल्वाटोऽग्निप्रदायकः ॥ दुर्भगःपलविक्रेता रोगवान्परमांसभुक् ॥ १० ॥ हीनजातौप्रजायेतरत्नानामपहारकः॥ कुनखीस्वर्णहर्तास्याद्धातुमात्रहरोऽधनः ॥ ११ ॥ अन्नहर्ताभवेदाखुःशलभोधान्यहारकः ॥ चातकोजलहर्तास्याद्विषहर्ताचवृश्चिकः ॥१२ ॥ शाकंपत्रंशिखीहृत्वागन्धांश्छुच्छुन्दरीशुभान् ॥ मधुदंशः पलंगृध्रोलवणंचपिपीलिका ॥ १३ ॥ ताम्बूलफलपुष्पादिहर्तास्याद्वानरोवने ॥ उपानत्तृणकापासहर्तास्यान्मेषयोनिषु ॥ १४ ॥

होता है, विष चुरानेवाला बिच्छू होता है ॥ १२ ॥ सागपत्ते चुरानेवाला मोर होता है, उत्तम गंधोंको चुरानेवाला छछून्दर होता है, शहद चुरानेवाला मधुमक्खी तथा मांस बेचनेवाला गीध होता है,नमक चुरानेसे चींटीकी योनि प्राप्त होती है ॥१३॥पान फल आदिको चुरानेवाला वनमें वानर होता है, जूता तृण और कपासको चुरानेवाला मेष योनिमें उत्पन्न होता है ॥ १४ ॥

हिंसात्मक कामों से जीविकोपार्जनकरनेवाला व्यापारियों और तीर्थयात्रियों के समूह को मार्ग में लूटनेवाला, आखेट (शिकार) का व्यसनी, ये सब वधिक के घर में बकरे होते हैं ॥ १५ ॥ जो जहर पीकर मरता है वह पर्वत में काला सांप होता है, और जिसका स्वभाव निरंकुश है (योग्य वचन नहीं मानता है) वह निर्जनवन में हाथी होता है ॥ १६ ॥ वैश्वदेव को नहीं करनेवाले और सर्व भक्षी द्विज, लेने योग्य अथवा अयोग्य की परीक्षा किये विना भोजन करनेवाले पुरुष शून्य वन में

यश्चरौद्रोपजीवीचमार्गेसार्थान्विलुम्पति ॥ मृगयाव्यसनीयस्तुछागःस्याद्वधिकगृहे ॥ १५ ॥ योमृतोविषपानेनकृष्णसर्पोभवेद्गिरौ ॥ निरंकुशस्वभावः स्यात्कुंजरोनिर्जनेवने ॥१६॥ वैश्वदेवमकर्तारः सर्वभक्षाश्चये द्विजाः ॥ अपरीक्षितभोक्तारोव्याघ्राः स्युर्निर्जनेवने ॥ १७ ॥ गायत्रींनस्मरेद्यस्तुयोनसंध्यामुपासते॥अन्तर्दुष्टोबहिः साधुः सभवेद्ब्राह्मणो बकः ॥१८॥ अयाज्ययाजकोविप्रःसभवेद्ग्रामसूकरः॥खरोवैबहुयाजित्वात्काकोनिर्मन्त्रभोजनात् ॥ १९ ॥

बाघ होते हैं ॥ १७ ॥ जो गायत्री का स्मरण नहीं करता है, सन्ध्योपासन नहीं करता है, भीतर से दुष्ट तथा बाहर साधु है, ऐसा ब्राह्मण बगुला होता है ॥ १८ ॥ यज्ञ करने के अयोग्य जनों से जो यज्ञ कराता है वह ब्राह्मण गाँव का सूअर होता है, बहुत जनों का पुरोहित गधा होता है और मन्त्र रहित भोजन करने से कौवा होता है ॥१९॥

योग्य जन को विद्या नहीं देनेवाला ब्राह्मण बलवान् बैल होता है, जो शिष्य गुरुकी सेवा नहीं करता वह गोखुर पशु होता है ॥२०॥ गुरु से हुंकार तुंकार करके और ब्राह्मण को वाद में जीतकर निर्जल आरण्य देश में ब्रह्मराक्षस होता है ॥२१॥ प्रतिज्ञाकरके जो ब्राह्मणको दान नहीं देता वह जम्बुक (सियार) होता है, जो सज्जन का सत्कार नहीं करता है अग्नि मुख फेत्कार होता

पात्रेविद्यामदाताचबलीवर्द्दोभवेद्द्विजः॥गुरुसेवामकर्ताचशिष्यः स्याद्गोखरःपशुः॥२०॥गुरुंहुंकृत्यतुंहृत्यविप्रं निर्जित्यवादतः ॥ अरण्येनिर्जलेदेशेजायतेब्रह्मराक्षसः ॥ २१ ॥ प्रतिश्रुतंद्विजेदानमदत्त्वाजम्बुकोभवेत । सतामसत्कारकरः फेत्कारोग्निमुखोभवेत्॥२२॥मित्रध्रुग्गिरिगृध्रःस्यादुलूकःक्रयवञ्चनात् ॥ वर्णाश्रमपरीवादात्कपोतोजायतेवने ॥ २३ ॥ आशाच्छेदकरोयस्तुस्नेहच्छेदकरस्तुयः ॥ योद्वेषात्स्त्रीपरित्यागीचक्रवाकश्चिरंभवेत् ॥ २४ ॥ मातृपितृगुरुद्वेषीभगिनीभ्रातृवैरकृत्॥गर्भेयोनौविनष्टःस्याद्यावद्योनिसहस्रश ॥२५॥

है ॥२२॥ मित्र से द्रोह करनेवाला पहाडी गीध होता है, खरीदने में धोखा देनेवाला उल्लू होता है, वर्णाश्रम की निन्दा करने से वन में कबूतर होता है ॥ २३ ॥ आशा को तोड़ देनेवाला,स्नेह को बिगाड देनेवाला और द्वेष से स्त्री परित्याग करनेवाला बहुत काल तक चक्रवाक पक्षी (चकवा) होता है ॥ २४ ॥ माता पिता गुरु से द्वेष करनेवाला और भाई बहनसे वैर करने वाला जीव हजार योनितक गर्भ ही में नष्ट हो जाता है ॥ २५ ॥

सास श्वसुरको गाली देनेवाली, नित कलह करने वाली और पतिको धिक्कार आदिसे धमकानेवाली स्त्री जोंक तथा जूं होती है ॥२६॥ जो अपने पतिको छोड़कर परपुरुषसे प्रेम करती है वह स्त्री घरकी गोह अथवा दो मुखवाली सर्पिणी होती है ॥२७॥ जो अपने गोत्रकी स्त्रीका सेवन करनेसे अपने गोत्रको बिगाड़ता है वह तरक्षु और सल्लक होकर रीछकी योनिमें उत्पन्न होता है॥२८॥तामसी स्त्रीमें गमन करने वाला कामी पुरुष मरुदेशमें पिशाच होता है, यौवनको प्राप्त नहीं हुई स्त्रीके साथ भोग करने

श्वश्र्वोर्गालिप्रदानारीनित्यंकलहकारिणी ॥साजलौकाचयूकास्याद्भर्तारंभर्त्सतेचया ॥ २६ ॥ स्वपतिंचपरित्यज्यपरपुंसानुवर्तिनी ॥ वल्गुलीगृहगोधास्याद्द्विमुखीवाथसर्पिणी ॥ २७ ॥ यःस्वगोत्रोपघातीचस्वगोत्रस्त्रीनिषेवणात् ॥ तरक्षुः शल्लकोभूत्वाऋक्षयोनिषुजायते ॥२८॥ तामसीगमनात्कामीभवेन्मरुपिशाचकः॥ अप्राप्तयौवनासङ्गाद्भवेदजगरोवने॥२९॥गुरुदाराभिलाषीचकृकलासो भवेन्नरः॥राज्ञींगत्वाभवेद्दुष्टोमित्रपत्नींचगर्दभः॥३०॥गुदगोविड्वराहः स्याद्वृषःस्याद्वृषलीपतिः॥महाकामीभवेद्यस्तुस्यादश्वःकामलम्पटः॥३१॥

वाला अजगर होता है॥२९॥गुरुकी स्त्रीसे भोगकी इच्छा करनेवाला मनुष्य कर्कट होता है,रानीमें गमन करके दुष्ट तथा मित्रकी स्त्रीमें गमन करके गधा होता है ॥ ३० ॥ गुदामें गमन करनेवाला पुरुष विष्ठा खानेवाला सूकर होता है, वृषलीका पति बैल होता है, जो बड़ा कामी होता है वह काममें लम्पट घोड़ा होता है ॥ ३१ ॥

मरनेवालोंके घरपर जो ग्यारहवें दिन खाता है वह कुत्ता होता है, देवलक ब्राह्मण कुक्कुरकी योनिमें उत्पन्न होता है ॥ ३२ ॥ अधम ब्राह्मण द्रव्यके लिये देवताकी पूजा करता है वह देवलकनाम देवता और पितरोंके कर्ममें निन्दित है ॥ ३३ ॥ महा पातकसे प्राप्त घोर नरकोंको प्राप्त होकर कर्मके क्षीण होने पर महापातकी इस संसारमें पैदा होते हैं ॥ ३४ ॥ ब्रह्महत्यारा गधा

मृतस्यैकादशाहंतुभुञ्जानः श्वाविजायते ॥ लभेद्देवलकोविप्रोयोनिकुक्कुटसंज्ञकाम् ॥३२॥ द्रव्यार्थंदेवतापूजांयकरोतिद्विजाधमः ॥ सवैदेवलकोनामहव्यकव्येषुगर्हितः ॥ ३३ ॥ महापातकजान्घोरान्नरकान्प्राप्य दारुणान् ॥ कर्मक्षयेप्रजायन्तेमहापातकिनस्त्विह॥ ३४ ॥ खरोष्ट्रमहिषीणांहिब्रह्महायोनिमृच्छति॥वृकश्वानश्रृंगालानांसुरपायान्तियोनिषु ॥ ३५ ॥ कृमिकीटपतङ्गत्वंस्वर्णस्तेयीसमाप्नुयात् ॥ तृणगुल्मलतात्वंचक्रमशोगुरुतल्पगः ॥३६॥ परस्ययोषितंहृत्वान्यासापहरणेनच ॥ ब्रह्मस्वहरणाच्चैवजायतेब्रह्मराक्षसः॥३७॥

ऊँट, तथा भैंसकी योनि पाता है मदिरा पीनेवाले भेड़िया कुत्ता तथा सियारकी योनि पाते हैं ॥३५॥ स्वर्ण चुरानेवाला कृमि कीट और पतंगोंकी योनि पाता है, गुरुकी शय्यामें जानेवाला क्रमसे तृण गुल्म और लताकी योनि पाता है ॥३६॥ पर स्त्रीका हरण करनेसे किसीकी धरोहर दबालेनेसे और ब्राह्मणका द्रव्य हरलेनेसे ब्रह्मराक्षस होता है ॥ ३७ ॥

कपटपूर्ण स्नेहसे खाया हुआ ब्राह्मणका धन सातपीढीतकके धनको जला देता है और जबरदस्तीसे अथवा चोरीसे खाया हुआ चन्द्रतारा पर्यन्त धनको जला देता है ॥ ३८ ॥ लोहेके चूरेको, पत्थरके चूरेको तथा विषको तो मनुष्य पचा सकता है, किन्तु ब्राह्मणके धनको तीनों लोकोंमें कौन पचा सकता है ? अर्थात् कोई नहीं पचा सकता ॥ ३९ ॥ ब्राह्मणके धनसे पोषित वाहन

ब्रह्मस्वंप्रणयाद्भुक्तंदहत्यासप्तमंकुलम् ॥ बलात्कारेणचौर्येणदहत्याचन्द्रतारकम् ॥ ३८ ॥ लोहचूर्णाश्मचूर्णंचविषंचजरयेन्नरः ॥ ब्रह्मस्वंत्रिषुलोकेषुकः पुमाञ्जरयिष्यति ॥३९॥ ब्रह्मस्वरसपुष्टानिवाहनानिबलानिच॥ युद्धकालेविशीर्यन्तेसैकतः सेतवोयथा ॥ ४० ॥ देवद्रव्योपभोगेनब्रह्मस्वहरणेनच ॥ कुलान्यकुलतांयान्तिब्राह्मणातिक्रमेणच ॥ ४१ ॥ स्वमाश्रितंपरित्यज्यवेदशास्त्रपरायणम् ॥ अन्येभ्योदीयतेदानंकथ्यतेऽयमतिक्रमः ॥४२॥ ब्राह्मणातिक्रमोनास्तिविप्रेवेदविवर्जिते ॥ ज्वलंतमग्निमुत्सृज्यनहिभस्मनिहूयते ॥४३॥

तथा सेना युद्धके समय बालूके बांधकी तरह बिखर जाते हैं ॥४०॥ देवताओंके द्रव्यको भोगनेसे, ब्राह्मणका धन हरलेनेसे तथा ब्राह्मणके अतिक्रमसे कुल नष्ट हो जाते हैं ॥ ४१ ॥ अपने आश्रित देवशालाके ज्ञाता ब्राह्मणको छोड़कर अन्यके लिये जो दान दिया जाता है वह ब्राह्मणका अतिक्रम है ॥४२॥ वेद रहित ब्राह्मणका अतिक्रम नहीं होता, क्योंकि प्रज्वलित अग्निको छोड़कर भस्ममें होम नहीं किया जाता है ॥ ४३ ॥ हे गरुड़ ! अतिक्रम करने पर क्रमसे नरकोंको भोगकर जन्मका अन्धा वह दरिद्री

होता है, देने वाला नहीं होता है किन्तु मांगनेवाला होता है ॥४४॥ अपनी दी हुई अथवा दूसरेकी दी हुई पृथ्वीको जो छीन लेता है वह हजार वर्षतक विष्ठामें कीड़ा होता है ॥४५॥ जो स्वयम् देकर स्व यम् ही छीनलेता है वह पापी प्रलयकाल तक नरकमें वास करता है॥४६॥भूमिका दानदेकर दी हुई जीविकाकी यत्नसे रक्षा करन्नी चाहिये,जो रक्षा नहीं करता है वह पंगु कुत्ता

अतिक्रमेकृतेताक्ष्यंभुक्त्वाचनरकान्क्रमात् ॥ जन्मान्धः सन्दरिद्रः स्यान्नदाताकिंतुयाचकः ॥ ४४ ॥ स्वद त्तांपरदत्तांवायोहरेच्चवसुंधराम् ॥ षष्टिवर्षसहस्राणिविष्ठायांजायतेकृमिः ॥ ४५ ॥ स्वयमेवचयोदत्त्वास्व यमेवापकर्षति ॥ सपापीनरकंयातियावदाभूतसंप्लवम् ॥४६॥ दत्त्वावृत्तिंभूमिदानंयत्नतः परिपालयेत् ॥ नरक्षतिहरेद्यस्तुसपंगुः श्वाभिजायते ॥ ४७ ॥ विप्रस्यवृत्तिकरणेलक्षधेनुफलंभवेत् ॥ विप्रस्यवृत्तिहरणा न्मर्कटः श्वा कपिर्भवेत् ॥ ४८ ॥ एवमादीनिचिह्नानियोनयश्चखगेश्वर ॥ स्वकर्मविहितालोकेदृश्यन्ते त्रशरीरिणाम् ॥ ४९ ॥

होता है ॥४७॥ ब्राह्मणकी जीविका करनेमें लाख गौ देनेका पुण्य होता है, और जीविका हर लेनेसे मर्कट कुत्ता और बन्दर होता है ॥४८॥ हे गरुड़ ! इस प्रकारके चिह्न और योनि देहियोंके अपने कर्मोंद्वार दी हुई दिखाई पड़ती हैं ॥ ४९ ॥

इस प्रकार बुरे कर्म करनेवाले नरकोंकी यातनाओंको भोगकर बाकी रहे पापोंसे इन कही हुई योनियोंमें जन्म लेते हैं ॥ ५० ॥ उसके बाद हजारों जन्ममें पशु पक्षी आदिकी देहको प्राप्त होकर भारको लेचलने योग्य पशु देह (ऊँट गधा आदि) को प्राप्त होते हैं ॥ ५१ ॥ तदनन्तर वर्षा, शीत, गर्मीसे उत्पन्न हुये पक्षियोंके दुःखको भोगकर जब शुभ अशुभ शान्त हो जाते हैं, तो

एवंदुष्कर्मकर्तारोभुक्त्वानिरययातनाम् ॥ जायन्तेपापशेषेणप्रोक्तास्वेतासुयोनिषु ॥५०॥ ततोजन्मसहस्रेषु प्राप्यतिर्यक्छरिताम् ॥ दुःखानिभारवहनोद्भवादीनिलभन्तिते ॥ ५१ ॥ पक्षिदुःखंततोभुक्त्वावृष्टिशीतातपो द्भवम् ॥ मानुषंलभतेपश्चात्समीभूतेशुभाशुभे ॥५२॥ स्त्रीपुंसोस्तुप्रसंगेनभूत्वागर्भेक्रमादसौ ॥ गर्भादिमरणा न्तंचप्राप्यदुःखंम्रियेत्पुनः ॥५३॥ समुत्पत्तिर्विनाशश्चजायतेसर्वदेहिनाम् ॥ एवंप्रवर्तितंचक्रंभूतग्रामेचतुर्विधे ॥ ५४ ॥ घटीयन्त्रंयथामर्त्याभ्रमन्तिममममायया ॥ भूमौकदाचिन्नरकेकर्मपाशसमावृताः ॥ ५५ ॥

मनुष्य देह पाते हैं॥५२॥स्त्री पुरुषके प्रसंगसे गर्भमें क्रमसे होकर गर्भसे लेकर मरण तक दुःख पाकर फिर मर जाते हैं॥५३॥सब शरीरधारियोंकी उत्पत्ति और विनाश होता है, चार प्रकारके भूत ग्राम (अंडज, स्वेदज, उद्भिज और जरायुज)में इस प्रकार का चक्र चल रहा है ॥ ५४ ॥ जीव मेरी मायासे घटी यन्त्रके समान भ्रमण करते हैं, कर्मकी फांसीमें बंधे हुये कभी भूमि पर

और कभी नरकमें जाते हैं ॥ ५५ ॥ दान नहीं देनेसे दरिद्री होता है, दरिद्री होनेसे पाप करता है और पापके प्रभावसे नरकमें जाता है इस तरह बारबार दरिद्री और बारबार पापी होता है॥५६॥ किया हुआ शुभ अशुभ अवश्यही भोगना पड़ता है बिना भोगे लाखों कल्प तक क्षीण नहीं होता है ॥५७॥ गरुड़ पुराण सारोद्धार हिन्दी टीकामें "पाप चिह्न निरूपण" नामक पाँचवां

अदत्तदानाच्चभवेद्दरिद्रोदरिद्रभावाच्चकरोतिपापम्॥पापप्रभावान्नरकंप्रयातिपुनर्दरिद्रः पुनरेव पापी ॥ ५६ ॥ अवश्यमेवभोक्तव्यंकृतंकर्मशुभाशुभम् ॥ नाभुक्तंक्षीयतेकर्मकल्पकोटिशतैरपि ॥ ५७ ॥इति श्रीगरुडपुराणेसारोद्धारेपापचिह्ननिरूपणोनामपञ्चमोध्यायः॥ ५ ॥ गरुड उवाच ॥ कथमुत्पद्यतेमातुर्जठरेनरकागतः ॥ गर्भादिदुःखंयद्भुंक्तेतन्मेकथयकेशव ॥ १ ॥ विष्णुरुवाच ॥ स्त्रीपुंसोस्तुप्रसंगेननिरुद्धेशुक्रशोणिते ॥ यथायं जायतेमर्त्यस्तथावक्ष्याम्यहंतव ॥२॥

अध्याय समाप्त हुआ॥५॥गरुड़ बोलेः-हे केशव! नरकसे आया हुआ प्राणी माताके पेटमें कैसे उत्पन्न होता है और गर्भ आदि के जो दुःख भोगता है, वह मुझसे कहिये ॥ १ ॥ श्री भगवान् बोलेः-स्त्री तथा पुरुषके प्रसंगसे वीर्य और रजके गर्भमें ठहर जाने पर जैसे यह प्राणी उत्पन्न होता है, वह मैं तुमसे कहूँगा ॥ २ ॥

जिस ऋतुके मध्यमें इन्द्रकी ब्रह्म हत्या है, उन्हीं तीन दिनोंमें पापियोंके देहकी उत्पत्ति होती है ॥ ३ ॥ ऋतुदर्शन होने पर पहले दिन तो स्त्री चाण्डाली, दूसरे दिन ब्रह्म हत्यारी तथा तीसरे दिन रजकी अर्थात् धोबिन होती है, नरकसे आये हुये पापियों की ये ही माताएं होती हैं अर्थात् वे इन्हींमें उत्पन्न होते हैं ॥ ४ ॥ ईश्वर जिसका प्रवर्तक है ऐसे पूर्वमें किये हुये कर्मसे जीव

ऋतुमध्येहिपापानांदेहोत्पत्तिः प्रजायते ॥ इन्द्रस्यब्रह्महत्यास्तियस्मिँस्तस्मिन्दिनत्रये ॥ ३ ॥ प्रथमेऽहनि चाण्डाली द्वितीयेब्रह्मघातिनी ॥ तृतीयेरजकीह्येतानरकागतमातरः ॥ ४ ॥ कर्मणादैवनेत्रेणजन्तुर्देहोपपत्तये ॥ स्त्रियाः प्रविष्टउदरंपुंसोरेतःकणाश्रयः॥५॥कललंत्वेकरात्रेणपञ्चरात्रेणबुद्‌बुदम् ॥ दशाहेनतु कर्कन्धूः पेश्यण्डं वा ततःपरम् ॥ ६ ॥

देहकी प्राप्तिके लिये पुरुषके वीर्यकी बून्दका आश्रय होकर स्त्रीके पेटमें प्रविष्ट हो जाता है । यहाँ यह विशेष है कि शुक्र तथा शोणितके संयोगसे पिण्डकी उत्पत्ति होती है, रक्तकी अधिकतासे नारी तथा वीर्यकी अधिकतासे पुरुष होता है यदि दोनों समान हों, तो नपुंसक होता है, बहुधा वीर्यके भाग होने पर कहीं दो भी उत्पन्न होते हैं ॥५॥ एक रात्रिमें कलल, पाँच रात्रिमें बुद्‌बुद (गोल) हो जाता है, दशरात्रिमें बेरके फलके समान कठोर मांसका पिण्ड अथवा दूसरी योनिमें अण्डा हो जाता है ॥ ६ ॥

दूसरे महिनेमें शिर और बाहु आदि अंगोंका विभाग होता है और तीसरे महीनेमें नख,रोम, हड्डी,चाम और लिंग छेद होते हैं॥७॥ चौथे महिनेमें सातों धातुएँ होती हैं,पांचवें महिनेमें भूख प्यासकी उत्पत्ति होती है और छठवे महिनेमें झिल्ली (जरायु)में लिपटा हुआ दाहिनी कोखमें भ्रमण करता है ॥८॥ माता द्वारा खाये हुये अन्न पान आदिसे वर्द्धमान धातु वह जीव, जिसमें जन्तुओं

मासेनतुशिरोद्वाभ्यांबाह्वङ्गाद्यङ्गविग्रहः॥ नखलोमास्थिचर्माणिलिङ्गच्छिद्रोद्भवस्त्रिभिः ॥७॥ चतुर्भिर्धातव स्सप्तपञ्चभिः क्षुत्तृडुद्भवः ॥ षड्भिर्जरायुणावीतः कुक्षौभ्राम्यतिदक्षिणे ॥ ८ ॥ मातुर्जग्धान्नपानाद्यैरेधद्धा तुरसंमते ॥ शेतेविण्मूत्रयोर्गर्तेसजन्तुर्जन्तुसंभवे ॥ ९ ॥ कृमिभिः क्षतसर्वांगः सौकुमार्यात्प्रतिक्षणम् ॥ मूर्च्छामाप्नोत्युरुक्लेशस्तत्रत्यैः क्षुधितैर्मुहुः ॥ १० ॥

का सम्भव है ऐसे दुर्गन्धित मलमूत्रके गड्ढेम सोता है ॥ ९ ॥ कैसे उत्पन्न होता है इस प्रश्नका उत्तर देकर गर्भादि दुःखं यद्भुंक्ते" इसका उत्तर देते हैं कि वहां गर्भमें स्थित भूखे कीड़ों द्वारा सुकुमार होनेसे क्षत हैं सब अंग जिसके ऐसा वह जीव क्षण क्षणमें मूर्छित हो जाता है और वहां स्थित उन भूखे कीड़ों से बारबार (उरु क्लेश) जी मिचलाता है ॥ १० ॥

माता द्वारा खाये हुये कडुए, तीखे, गरम, नमकीन, रूखे और खट्टे आदि पदार्थोंके छुए जानेसे जिसके सारे अंगमें पीडा उठी है ऐसा वह जीव झिल्ली (जेर) से घिरा हुआ और बाहर आंतोंसे लपेटा गया ॥ ११ ॥ शिरको कांखमें करके जिसकी पीठ और गरदन टेढी है ऐसा वह जीव अपने अंगकी चेष्टा करनेमें असमर्थ होकर पिंजरेमें पक्षीके समान रहता है ॥ १२ ॥ वहां

कटुतीक्ष्णोष्णलवणरूक्षाम्लादिभिरुल्बणैः ॥ मातृभुक्तैरुपस्पृष्टः सर्वांगोत्थितवेदनः ॥ उल्बेनसंवृतस्तस्मिन्नन्त्रैश्चबहिरावृतः ॥ ११ ॥ आस्तेकृत्वाशिरः कुक्षौभुग्नपृष्ठशिरोधरः॥ अकल्पःस्वांगचेष्टायां शकुन्तइवपञ्जरे ॥ १२ ॥ तत्रलब्धस्मृतिर्दैवात्कर्मंजन्मशतोद्भवम् ॥ स्मरन्दीर्घमनुच्छ्वासंशर्मंकिंनामविन्दते ॥१३॥ नाथमानऋषिर्भीतः सप्तवध्रिः कृताञ्जलिः ॥ स्तुवीततंविक्लवयावाचायेनोदरेऽर्पितः ॥१४॥ आरभ्यसप्तमान्मासाल्लब्धबोधोपिवेपितः ॥ नैकत्रास्तेसूतिवातैर्विष्ठाभूरिवसोदरः ॥ १५ ॥

पूर्व कर्मके वशसे स्मृति पाकर वह जीव सौ जन्मके पापोंका स्मरण करके दीर्घश्वास लेता हुआ सुखको नहीं पाता है ॥ १३ ॥ याचना किया अथवा उपतप्यमान हुआ वह देहात्मदर्शी जिसकी सातों धातुएँ बन्धनमें है, हाथ जोड़कर व्याकुलवाणीसे उसकी स्तुति करता है, जिसने पेटमें स्थापित किया है ॥ १४ ॥ सातवें महिनेसे बोधको प्राप्त हुआ वह जीव सूति वायुसे कम्पाया गया

समान उदरमें जन्मवाले विष्ठामें उत्पन्न कृमिके समान एक स्थानमें नहीं ठहरता है ॥ १५ ॥ जीव बोलता हैः--श्रीके पति, जगत्के आधार, अशुभको नष्ट करने वाले, शरणागत वत्सल भगवान् विष्णुकी शरणमें मैं जाता हूँ ॥ १६ ॥ आपकी माया से मोहित मैं देहमें तथा स्त्री पुत्रादिकमें "मैं मेरा" इस अभिमानसे हे नाथ ! संसृतिको प्राप्त हुआ हूँ ॥ १७ ॥ कुटुम्बके

जीवउवाच ॥ श्रीपतिंजगदाधारमशुभक्षयकारकम् ॥ व्रजामिशरणंविष्णुंशरणागतवत्सलम्॥१६॥त्वन्माया मोहितोदेहेतथापुत्रकलत्रके ॥ अहंममाभिमानेनगतोऽहंनाथसंसृतिम् ॥ १७ ॥ कृतपरिजनस्यार्थेमयाकर्म शुभाशुभम् ॥ एकाकीतेनदग्धोऽहंगतास्तेफलभागिनः ॥ १८ ॥ यदियोन्याः प्रमुच्येऽहंतत्स्मरिष्येपदंतव ॥ तमुपायंकरिष्यामियेनमुक्तिंव्रजाम्यहम् ॥ १९ ॥ विण्मूत्रकूपेपतितोदग्धोहंजठराग्निना ॥ इच्छन्नितोविवासितुंकदानिर्यास्यतेबहिः ॥ २० ॥

लिये मैंने जो शुभ अशुभ कर्म किये, उनसे मैं अकेला दग्ध हुआ और फलको भोगनेवाले वे गये ॥ १८ ॥ यदि मैं योनिसे छूटा तो आपके चरणोंको स्मरण करूँगा और वह उपाय करूँगा जिससे मुक्तिको प्राप्त होऊँ ॥ १९ ॥ मलमूत्रमें पड़ा हुआ जठराग्निसे जल रहा हूँ, यहांसे निकलनेकी इच्छा करता हुआ कब बाहर निकलूँगा ॥ २० ॥

जिस दीन दयालुने मुझको ऐसा विज्ञान दिया है, उसीकी शरणमें मैं जाता हूँ, मुझको फिर संसृति प्राप्त न हो ॥ २१ ॥ और गर्भ से बाहर मैं कदाचन नहीं निकलना चाहता हूँ जहाँ गये हुये मेरी पापसे दुर्गति हो ॥२२॥ इससे यहाँ बड़े दुःखमें स्थितभी मैं खेदरहित हूँ, आपके चरणोंका आश्रय लेकर मैं संसारसे अपना उद्धार करूँगा ॥ २३ ॥ श्री भगवान् बोलेः--इस प्रकार

येनेदृशंमेविज्ञानंदत्तंदीनदयालुना॥तमेवशरणंयामिपुनर्मेमाऽस्तुसंसृतिः ॥२१॥ नचनिर्गन्तुमिच्छामिबहिर्गर्भात्कदाचन॥यत्रयातस्यमेपापकर्मणादुर्गतिर्भवेत् ॥ २२ ॥ तस्मादत्रमहद्दुःखेस्थितोपिविगतक्लमः ॥ उद्धरिष्यामिसंसारादात्मानंतेपदाश्रयः ॥२३॥ श्रीभगवानुवाच॥ एवंकृतमतिर्गर्भेदशमास्यः स्तुवन्नृषिः॥ सद्यः क्षिपत्यवाचीनंप्रसूत्यैसूतिमारुतः॥२४॥तेनावसृष्टः सहसाकृत्वावाक्शिरआतुरः ॥ विनिष्क्रामतिकृच्छ्रेणनिरुच्छ्वासोहतस्मृतिः॥२५॥पतितोभुविविण्मूत्रेविष्ठाभूरिवचेष्टते॥रोरूयतिगतेज्ञानेविपरीतांगतिंगतः ॥२६॥

गर्भमें कृतनिश्चय दश मासके अधोमुख जीवको सूति वायु शीघ्रही प्रसूतिके लिये प्रेरित करती है ॥२४॥ उस पवन द्वारा प्रेरित वह जीव नीचेको शिर करके उच्छ्वास रहित नष्ट स्मृति हुआ कष्टसे निकलता है ॥२५॥ पृथ्वी पर मलमूत्रमें पड़ा हुआ वह कीड़ेकी तरह चेष्टा करता है, ज्ञान नष्टहो जानेसे विपरीत गतिको प्राप्त होकर बहुत ही रोता है ॥ २६ ॥

गर्भमें रोगमें श्मशानमें मृतकके साथ जानेमें और पुराणके सुननेमें जो मति होती है, यदि वह स्थिर बनी रहे तो कौन बन्धन से नहीं छूट जाय ॥२७॥ कर्मभोगके बाद जब गर्भसे बाहर आता है तभी वैष्णवी माया पुरुषको मोहित करदेती है ॥ २८ ॥ तब माया से स्पर्श किया गया वह परवश हो कुछ नहीं कहता है, बालकपन आदि से हुये दुःखको पराधीनता से भोगता है

गर्भेऽव्याधौश्मशानेचपुराणेयामतिर्भवेत् ॥ सायदिस्थिरतांयातिकोनमुच्येतबन्धनात् ॥ २७ ॥ यदागर्भाद्ब हिर्यातिकर्मभोगादनन्तरम् ॥ तदैववैष्णवीमायामोहयत्येवपूरुषम् ॥२८॥ सतदामाययास्पृष्टोनकिंचिद्वद तेऽवशः ॥ शैशवादिभवंदुःखंपराधीनतयाऽश्नुते ॥ २९ ॥ परच्छन्दंनविदुषापुष्यमाणोजनेन सः ॥ अन भिप्रेतमापन्नःप्रत्याख्यातुमनीश्वरः ॥ ३० ॥ शायितोऽशुचिपर्यङ्केजन्तुस्वेदजदूषिते ॥ नेशःकण्डूयने ङ्गानामासनोत्थानचेष्टने ॥ ३१ ॥

॥ २९ ॥ गर्भके दुःख कहकर अब बाल्यावस्थाके दुःख कहते हैं दूसरेके अभिप्रायको नहीं जानने वाले पुरुष द्वारा पालन किया गया वह अपनेसे प्रतिकूलको पाकर मना करनेमें असमर्थ होता है ॥ ३० ॥ स्वेदज (जूं आदि) जीवोंसे दूषित अशुद्ध शय्या पर सुलाया गया अंगोंको खुजलानेमें समर्थ नहीं होता है, आसनसे उठने तथा चेष्टा करनेमें भी समर्थ नहीं होता है ॥ ३१ ॥

डांस, मच्छर, खटमल आदि रोते हुये ज्ञान रहित उस जीवकी नरम त्वचाको काटते हैं ॥३२॥ इस प्रकार बालकपनके दुःख भोगकर पौगण्डावस्था(यौवनसे पूर्वकी अवस्था) के अध्ययनादिके दुःख भोगनेके बाद युवावस्थाको प्राप्तकर आसुरी सम्पत्ति (दर्प, दम्भ, अभिमानता आदि) को प्राप्त होता है ॥३३॥ तब यौवनमें दुर्व्यसनोंमें आसक्त, नीच पुरुषोंके संगमें लगा हुआ

तुदन्त्यामत्वचंदंशामशकामत्कुणादयः ॥ रुदन्तंविगतज्ञानंकृमयः कृमिकंयथा ॥३२॥ इत्येवंशैशवंभुक्त्वादुःखंपौगण्डमेव च ॥ ततोयौवनमासाद्ययातिसंपदमासुरीम् ॥ ३३ ॥ तदादुर्व्यसनासक्तोनीचसंगपरायणः ॥ शास्त्रसत्पुरुषाणांचद्वेष्टास्यात्कामलम्पटः ॥ ३४ ॥ दृष्ट्वास्त्रियंदेवमायांतद्भावैरजितेन्द्रियः ॥ प्रलोभितःपतत्यन्धेतमस्यग्नौपतंगवत् ॥ ३५ ॥ कुरङ्गमातङ्गपतङ्गभृङ्गमीनाहताः पंचभिरेवपञ्च ॥ एकःप्रमादीसकथंनहन्यते यः सेवते पञ्चभिरेवपञ्च ॥ ३६ ॥

शास्त्र और श्रेष्ठ पुरुषोंसे द्वेष करने वाला काममें लम्पट होता है ॥३४॥ देव माया स्त्रीको देखकर उसके कटाक्ष आदि भावों से लुभाया गया, इन्द्रियोंके वशमें हो अग्निमें पतंगके समान महामोहमें गिरता है ॥३५॥ हरिण, हाथी, पतंग (शलभ जो दीपक में गिरता है) भँवरा और मछली ये पाँचों पांच विषयों(व्यसनों)सेमारे जाते हैं और एक यह प्रमादी पुरुष जो पांच इन्द्रियोंसे पांच विषयों (व्यसनों) का सेवन करता है, वह कैसे नहीं मारा जाय ? अर्थात् अवश्य ही मारा जायेगा ॥३६॥ (दो श्लोकों

से पूर्व विषयको ही कहते हैं) कामिनी आदिका वाञ्छित सुख जिसको प्राप्त नहीं हुआ है तथा अज्ञानसे जिसका क्रोध बढ़ गया है; शोकमें डूबा हुआ वह जीव, देहके साथ ही बढ़ते हुये क्रोधसे ॥ ३७ ॥ अपने नाशके लिये अन्य जार पुरुषोंमें कामिनीके हेतु विरोध करता है, तब वह कामी युवा बलमें अधिक अन्य जनों द्वारा ऐसे मारा जाता है, जैसे अन्य गजों द्वारा गज मारा

अलब्धाभीप्सितोज्ञानादिद्धमन्युः शुचार्पितः ॥ सहदेहेनमानेनवर्धमानेनमन्युना ॥ ३७ ॥ करोतिविग्रहंकामी कामिष्वंतायचात्मनः ॥ बलाधिकः सहन्येतगजैरन्यैर्गजोयथा ॥ ३८ ॥ एवंयोविषयासक्त्यानरत्वमतिदुर्लभम् ॥ वृथानाशयतेमूढस्तस्मात्पापतरोहिकः ॥३९॥ जातीशतेषुलभतेभुविमानुषत्वंतत्रापिदुर्लभतरंखलुभोद्विजत्वम् ॥ यस्तन्नपालयतिलालयतीन्द्रियाणितस्यामृतंक्षरतिहस्तगतंप्रमादात् ॥ ४० ॥

जाता है ॥३८॥ इस प्रकार जो मूढ पुरुष विषयोंकी आसक्तिसे अति दुर्लभ नरत्वको व्यर्थ नष्ट करता है, उससे अधिक पापी कौन है ? अर्थात् कोई नहीं ॥३९॥ पृथ्वी पर असंख्य जातियोंमें मनुष्य शरीर पाना अत्यन्त दुर्लभ है (भगवन्नाम स्मरणके योग्य होनेसे मनुष्य देह दुर्लभ है) मनुष्योंमें भी द्विजत्व तो अत्यन्त दुर्लभ है, इससे हे गरुड़ ! जो द्विज युवावस्थामें (जब कि तप तीर्थ यात्रादि सेवनसे मोक्ष साध्य किया जाने योग्य है) विषयोंको भोगनेमें इन्द्रियोंको आसक्त करता है उस द्विजके

हाथमें आया हुआ अमृत प्रमाद वश (पीनेमें असावधानी करनेसे) व्यर्थ ही गिरता है ॥ ४० ॥ युवावस्थाके बाद वृद्धताको प्राप्त हो महाव्याधियोंसे व्याकुल वह बहुत दुःखवाली मृत्युको प्राप्त हो पहलेकी तरह नरकमें जाता है ॥४१॥ ऐसे गत आगत प्रकारसे अर्थात् कभी नरकमें और नरकसे पृथ्वीमें इस तरह कर्म फांसोंमें बंधे हुये पापी मेरी मायासे मोहित हो कभी वैराग्य

ततस्तांवृद्धतांप्राप्यमहाव्याधिसमाकुलः ॥ मृत्युंप्राप्यमहद्दुःखंनरकंयातिपूर्ववत् ॥४१॥ एवंगतागतैःकर्मपाशैर्बद्धाश्चपापिनः॥कदापिनविरज्यन्तेममममायाविमोहिताः॥४२॥इतितेकथितातार्क्ष्यपापिनांनारकीगतिः॥ अन्त्येष्टिकर्महीनानांकिंभूयः श्रोतुमिच्छसि ॥४३॥ इति श्रीगरुडपुराणेसारोद्धारेपापिजन्मादिदुःखनिरूपणोनामषष्ठोऽध्यायः ॥६॥ सूत उवाच ॥ इतिश्रुत्वातुगरुडःकम्पितोश्वत्थपत्रवत् ॥ जनानामुपकारार्थं पुनः पप्रच्छकेशवम् ॥ १ ॥

को प्राप्त नहीं होते हैं ॥४२॥ हे गरुड़ ! इस प्रकार मैंने तुमसे अन्त्येष्टि कर्मसे हीन पापियोंकी नारकी गति कही, अब क्या सुनना चाहते हो ॥ ४३ ॥ गरुड़ पुराण सारोद्धार हिन्दी टीकामें छठवां अध्याय समाप्त हुआ ॥६॥ सूतजी बोलेः—इस प्रकार सुनकर गरुड़ पीपलके पत्तेकी तरह कांपने लगे और जनोंके उपकारके लिये केशव भगवान्से फिर पूछा ॥ १ ॥ गरुड बोलेः—

मनुष्य जानकर अथवा बिन जाने पापोंको करके किस उपायसे यमयातनाको प्राप्त न हो, वह उपाय कहिये ॥ २ ॥ संसार रूप समुद्रमें डूबे हुये अनिश्चित चित्तवाले, विषयोंसे पीडित आत्मा वाले ॥ ३ ॥ ऐसे पापियोंके उद्धारके लिये हे स्वामिन् ! पुराणके अर्थका जो निश्चय है उसे कहिये, हे माधव ! वह ऐसा उपाय जिससे मनुष्य सद्गतिको प्राप्त हो ॥४॥ श्री भगवान्

गरुडउवाच ॥ कृत्वापापानिमनुजाः प्रमादाद्बुद्धितोपिवा ॥ नयान्तियातनायाम्याः केनोपायेनकथ्यताम् ॥ २ ॥ संसारार्णवमग्नानांनराणांदीनचेतसाम् ॥ पापोपहतबुद्धीनांविषयोपहतात्मनाम् ॥ ३ ॥ उद्धारार्थंवद स्वामिन्पुराणार्थविनिश्चयम् ॥ उपायंयेनमनुजाः सद्गतिंयान्तिमाधव ॥ ४ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ साधुपृष्ट स्त्वयाताक्ष्र्यमानुषाणांहितायवै ॥ शृणुष्वावहितोभूत्वासर्वंतेकथयाम्यहम् ॥ ५॥ दुर्गतिःकथितापूर्वमपुत्रा णांचपापिनाम् ॥ पुत्रिणांधार्मिकाणांतुनकदाचित्खगेश्वर ॥ ६ ॥

बोलेः—तुमने मनुष्योंके हितके लिये बहुत अच्छा प्रश्न किया, अब तुम सावधान चित्त होकर सुनो, मैं तुमसे सब कहूँगा ॥५॥ पहले मैंने पुत्र रहित पापियोंकी दुर्गति कही है, हे खगेश्वर ! पुत्रवाले धर्मात्माओंकी कभी दुर्गति नहीं होती है ॥ ६ ॥

यदि धर्मात्मा जनके किसी कर्मके विरोधसे पुत्रकी उत्पत्ति न हो, तो किसी उपायसे पुत्र उत्पन्न होनेका साधन करे ॥ ७ ॥ हरिवंशकी कथाको सुनकर भक्तिपूर्वक शतचण्डीका विधान करके तथा शिवकी आराधना करके श्रेष्ठबुद्धि वाला पुरुष पुत्र को उत्पन्न करे ॥८॥ "पुम्" नामक नरकसे पिताको बचाता है इससे स्वयम्भूने आपही इसको पुत्र कहा है ॥ ९ ॥ एक भी

पुत्रजन्मनिरोधःस्याद्यदिकेनापिकर्मणा ॥ तदाकश्चिदुपायेनपुत्रोत्पत्तिंप्रसाधयेत् ॥ ७ ॥ हरिवंशकथांश्रुत्वा शतचण्डीविधानतः ॥ भक्त्याश्रीशिवमाराध्यपुत्रमुत्पादयेत्सुधीः ॥ ८ ॥ पुन्नाम्नोनरकाद्यस्मात्पितरंत्रायते सुतः ॥ तस्मात्पुत्रइतिप्रोक्तः स्वयमेवस्वयम्भुवा ॥९॥ एकोपिपुत्रोधर्मात्मा सर्वंतारयतेकुलम् ॥ पुत्रेणलोकाञ्जयति श्रुतिरेषासनातनी ॥ १० ॥ इतिवेदैरपिप्रोक्तंपुत्रमाहात्म्यमुत्तमम् ॥ तस्मात्पुत्रमुखंदृष्ट्वामुच्यतेपैतृकादृणात्॥ ११॥पौत्रस्यस्पर्शनान्मर्त्योमुच्यतेचऋणत्रयात्॥ लोकानन्त्येदिवःप्राप्तिःपुत्रपौत्र प्रपौत्रकैः॥१२॥

धर्मात्मा पुत्र सब कुलको तार देता है, पुत्र द्वारा पुरुष लोकोंको जीतता है यह सनातनी श्रुति है॥१०॥ यह उत्तम पुत्रका माहात्म्य वेदोंने भी कहा है, इससे पुत्रका मुख देखकर पिता पितरोंके ऋणसे मुक्त हो जाता है ॥११॥ पौत्रके स्पर्श करनेसे मनुष्य तीन प्रकारके ऋणसे छूट जाता है, पुत्र, पौत्र, प्रपौत्रोंसे स्वर्गकी प्राप्ति होती है ॥ १२ ॥

ब्राह्म विवाहसे विवाही गई पत्नीसे उत्पन्न पुत्र ब्रह्मोढा होता है, वह पुत्र स्वर्गादि लोकोंमें पहुँचाता है, अविवाहितासे उत्पन्न पुत्र नरकमें पहुँचाता है, यह जानकर मनुष्य हीन जातिके पुत्रोंका त्याग करे ॥१३॥ हे गरुड़ ! सवर्णास्त्रियोंमें सवर्ण पतियों से जो औरस पुत्र उत्पन्न होते हैं, वे ही श्राद्धके दानसे पितरोंको स्वर्गके कारण होते हैं ॥ १४ ॥ पुत्र द्वारा दिये हुये श्राद्धसे

ब्राह्मोढापुत्रोन्नयतिसंगृहीतस्त्वधोनयेत् ॥ एवंज्ञात्वाखगश्रेष्ठहीनजातिसुतांस्त्यजेत् ॥ १३ ॥ सवर्णेभ्यःसवर्णासुयेपुत्राऔरसाःखग ॥ तएवश्राद्धदानेनपितॄणांस्वर्गहेतवः ॥ १४ ॥ श्राद्धेनपुत्रदत्तेनस्वर्यातीतिकिमुच्यते ॥ प्रेतोपिपरदत्तेनगतः स्वर्गमथोश्रृणु ॥१५॥अत्रैवोदाहरिष्येहमितिहासंपुरातनम् ॥ और्ध्वदेहिकदानस्य परंमाहात्म्यसूचकम् ॥ १६ ॥ पुरात्रेतायुगेताक्ष्यर्राजासीद्बभ्रुवाहनः॥महोदयपुरेरम्येधर्मनिष्ठोमहाबलः॥१७॥

मनुष्य स्वर्गको जाता है यही क्या, अपितु दूसरे से दिये हुये श्राद्धसे प्रेत भी स्वर्गको प्राप्त हुआ, यह आख्यान सुनो॥१५॥ यहाँ मैं पुराने इतिहासका उदाहरण दूँगा, जो और्ध्वदेहिक दानके बड़े माहात्म्यको सूचित करने वाला है ॥ १६ ॥ पहले त्रेता युगमें महाबलवान् और धर्ममें निष्ठा रखने वाला बभ्रुवाहन नामक राजा सुन्दर महोदय पुरमें था ॥ १७ ॥

वह यज्ञ करने वाला, दानका पति, लक्ष्मीवान्, ब्राह्मणोंका भक्त, साधुओंमें प्रीति रखने वाला, शील आचार तथा गुणोंसे युक्त दया तथा चतुराईसे युक्त था ॥ १८ ॥ धर्म पूर्वक अपनी प्रजाका औरस पुत्रके समान पालन करता था और दण्ड देने योग्य जनोंको दण्ड देते हुये वह राजा नित्यही क्षत्रिय धर्ममें तत्पर रहता था ॥ १९ ॥ किसी समय महाबाहु वह राजा अपनी सेना

यज्वा दानपतिः श्रीमान्ब्रह्मण्यः साधुवत्सलः ॥ शीलाचारगुणोपेतोदयादाक्षिण्यसंयुतः ॥ १८ ॥ पालयामा सधर्मेणप्रजाः पुत्रानिवौरसान् ॥ क्षत्रधर्मरतोनित्यंसदण्डयान्दण्डयन्नृपः ॥ १९ ॥ सकदाचिन्महाबाहुः स सैन्योमृगयांगतः । वनंविवेशगहनंनानावृक्षसमन्वितम् ॥२०॥ नानामृगगणाकीर्णंनानापक्षिविनादितम् ॥ वनमध्येतदाराजामृगंदूरादपश्यत ॥ २१ ॥ तेनविद्धोमृगोतीवबाणेनसुदृढेनच ॥ बाणमादायतंतस्यवने ऽदर्शनमेयिवान् ॥ २२ ॥

समेत शिकारके लिये गया और अनेक तरहके वृक्षोंसे युक्त घने वनमें प्रवेश कर गया ॥२०॥ (वनका वर्णन करते हैं) वह वन अनेक तरहके मृगोंके झुण्डसे भरा हुआ तथा नाना प्रकारके पक्षियोंसे शब्दायमान था, उस वनके मध्यमें राजाने एक मृगको देखा ॥ २१ ॥ उस राजाके अत्यन्त दृढ बाणसे बेधा गया वह मृग राजाके बाणको लेकर अदृश्य होगया ॥ २२ ॥

तब राजा रुधिरसे गीली घासको देखता हुआ उस हिरणके पीछे पीछे गया, इस तरह हिरणका पीछा करता हुआ वह दूसरे वनमें प्रवेश कर गया ॥२३॥ भूखसे जिसका कण्ठ दुर्बल हो गया है तथा श्रमके संतापसे मूर्च्छित हुआ वह राजा एक तालाबके पास पहुँचा और घोड़े समेत उस तालाबमें स्नान किया ॥ २४ ॥ कमल आदिकी गन्धसे सुगन्धित उस तालाबका जल

कक्षेणरुधिरार्द्रेणसराजानुजगाम तम् ॥ ततोमृगप्रसङ्गेन वनमन्यद्विवेशसः ॥ २३ ॥ क्षुत्क्षामकण्ठोनृपतिः श्रमसंतापमूर्च्छितः ॥ जलाशयंसमासाद्य साश्वएवव्यगाहत ॥ २४ ॥ पपौतदुदकंशीतंपद्मगंधादिवासितम् ॥ ततोवतीर्यसलिलाद्विश्रमोबभ्रुवाहनः ॥ २५ ॥ ददर्शन्यग्रोधतरुंशीतच्छायंमनोहरम्॥महाविटपविस्तीर्णपक्षिसंघविनादितम् ॥ २६ ॥ वनस्यतस्यसर्वस्यमहाकेतुमिवस्थितम् ॥ मूलंतस्यसमासाद्यनिषसादमहीपतिः ॥ २७ ॥

पीया, उसके बाद वह बभ्रुवाहन राजा जलसे निकल कर श्रमरहित होगया ॥ २५ ॥ फिर उसने शीतल छायावाले, बड़ी बड़ी शाखाओंसे युक्त, बहुत ही विस्तार वाले मनोहर वट वृक्षको देखा जो अनेक तरहके पक्षियोंके समूहसे शब्दायमान होरहा था ॥२६॥ सबसे ऊँचा होनेके कारण उस वनकी पताकाके समान स्थित उस वट वृक्षकी जड़में जाकर वह राजा बैठ गया ॥२७॥

उसके बाद उस राजाने भूख प्यासकी पीड़ासे व्याकुल इन्द्रियों वाले, ऊपरकी ओर उठे हुये बालों वाले, मैले रूप, कुबड़े, मांस रहित भयानक सूरत वाले प्रेतको देखा ॥२८॥ उस विकृत और घोर राक्षसको देखकर बभ्रुवाहन बहुत ही विस्मित हुआ और प्रेत भी उस घोर वनमें आये हुये उस राजाको देखकर विस्मित हुआ ॥२९॥ वह प्रेत उत्कंण्ठित मन होकर उस राजाके

अथप्रेतंददर्शासौक्षुत्तृड्भ्यांव्याकुलेन्द्रियम् ॥ उत्कचंमलिनंकुब्जंनिर्मांसंभीमदर्शनम् ॥ २८ ॥ तंदृष्ट्वाविकृतंघोरंविस्मितोबभ्रुवाहनः ॥ प्रेतोपिदृष्ट्वातंघोरामटवीमागतंनृपम् ॥२९॥ समुत्सुकमनाभूत्वातस्यान्तिकमुपागतः ॥ अब्रवीत्सतदाताक्ष्यंप्रेतराजोनृपंवचः ॥ ३० ॥ प्रेतभावोमयात्यक्तः प्राप्तोस्मिपरमांगतिम् ॥ त्वत्संयोगान्महाबाहोजातोधन्यतरोस्म्यहम् ॥ ३१ ॥ राजोवाच ॥ ॥ कृष्णवर्णकरालास्यप्रेतत्वंघोरदर्शनम् ॥ केनकर्मविपाकेनप्राप्तंतेबह्वमंगलम् ॥ ३२ ॥

पास आया और हे तार्क्ष्य ! तब वह प्रेतराज राजासे बोला ॥३०॥ हे महाबाहु ! अब मैंने प्रेत भाव छोड़ दिया और परम गतिको प्राप्त होगया हूँ आज मैं तुम्हारे संयोगसे अति धन्य हुआ हूँ ॥ ३१ ॥ राजा बोलेः—काले वर्ण वाला, भयानक मुख वाला, घोर दर्शन, बहुत ही अमंगल रूप यह प्रेतपन तुमको कौनसे कर्मके परिणामसे प्राप्त हुआ है ॥ ३२ ॥

हे तात ! तुम मुझको सम्पूर्ण प्रेतपनका कारण कहो, तुम कौन हो ? कौनसे दानसे तुम्हारा प्रेतपन दूर होगा ॥ ३३ ॥ प्रेत बोलाः—हे राजाओंमें श्रेष्ठ ! मैं तुमको प्रारम्भसे सब कहूँगा, मेरे प्रेतपनके कारणको सुनकर तुम दया करने योग्य हो ॥३४॥ सब तरहकी सम्पत्तियोंसे भरा हुआ "वैदेश" नामक एक नगर है, वह अनेक तरहके मनुष्यों और रत्नोंसे परिपूर्ण होरहा है ॥३५॥ राजाओंके महलों और धनवानोंके भवनोंकी शोभासे युक्त है, नाना प्रकारके श्रौत स्मार्त आदि धर्मोंसे युक्त है, हे तात !

प्रेतत्वकारणंतातब्रूहिसर्वमशेषतः ॥ कोसित्वंकेनदानेनप्रेतत्वंतेविनश्यति ॥ ३३ ॥ प्रेतउवाच ॥ कथयामि नृपश्रेष्ठसर्वमेवादितस्तव ॥ प्रेतत्वकारणंश्रुत्वादयांकर्तुंत्वमर्हसि ॥ ३४ ॥ वैदेशंनामनगरंसर्वसंपत्समन्वितम् ॥ नानाजनपदाकीर्णं नानारत्नसमाकुलम् ॥३५॥हर्म्यप्रासादशोभाढ्यंनानाधर्मसमन्वितम् ॥ तत्राहंन्यवसंतातदेवार्चनरतः सदा ॥ ३६ ॥ वैश्योजात्यासुदेवोहंनाम्नाविदितमस्तुते ॥ हव्येनतर्पितादेवाः कव्येन पितरस्तथा ॥ ३७ ॥

उस पुरमें मैं हमेशा देवताओंका पूजन करता हुआ वास करता था ॥ ३६ ॥ मेरी जाति वैश्य और नाम "सुदेव" यह आपको विदित हो, हव्य (देवताओंको दिया जानेवाला अन्न) से देवताओंको तथा कव्य (पितरोंको दिया जाने वाला अन्न) से पितरोंको मैंने सन्तुष्ट किया ॥ ३७ ॥

अनेक प्रकारके दानोंके योगसे मैंने ब्राह्मणोंको सन्तुष्ट किया और दीन, अन्धे तथा कृपण मनुष्योंको अनेक प्रकारसे अन्न दान दिया ॥ ३८ ॥ हे राजन् ! मेरा वह सब दैव योगसे निष्फल होगया, जिस कारणसे मेरा सुकृत निष्फल होगया वह मैं तुमसे कहता हूँ ॥३९॥ मेरे कोई सन्तति नहीं, बन्धु बान्धव नहीं और ऐसा कोई मित्र नहीं जो और्ध्वदेहिक (पर लोककी क्रिया) करे ॥४०॥ हे महाराज ! जिनका षोडश मासिक श्राद्ध नहीं होता है, सैकड़ों श्राद्ध करने पर भी उनका प्रेतत्व स्थिरही रहता

विविधैर्दानयोगैश्चविप्राः संतर्पितामया ॥ दीनान्धकृपणेभ्यश्चदत्तमन्नमनेकधा ॥ ३८ ॥ तत्सर्वंनिष्फलंरा जन्ममदैवादुपागतम्॥यथामेनिष्फलंजातंसुकृतंतद्वदामिते ॥ ३९ ॥ ममवैसंततिर्नास्तिनसुहृन्नचबान्धवः॥ नचमित्रंहिमेतादृग्यःकुर्यादौर्ध्वदेहिकम् ॥ ४० ॥ यस्य नस्यान्महाराजश्राद्धमासिकषोडशम् ॥ प्रेतत्वंसु स्थिरंतस्यदत्तैःश्राद्धशतैरपि ॥ ४१ ॥ त्वमौर्ध्वदेहिकंकृत्वामामुद्धरमहीपते ॥ वर्णानांचैवसर्वेषांराजाबन्धु रिहोच्यते ॥ ४२ ॥ तन्मांतारयराजेन्द्रमणिरत्नंददामिते ॥ यथामेसद्गतिर्भूयात्प्रेतयोनिश्चगच्छति ॥ ४३ ॥

है अर्थात् जाता नहीं है ॥४१॥ हे महीपते ! आप और्ध्वदेहिक करके मेरा उद्धार करिये, इस लोकमें राजा सब वर्णोंका बन्धु कहा जाता है ॥ ४२ ॥ हे राजन् ! इसलिये मेरा उद्धार करिये, मैं आपको मणिरत्न दूँगा। जिससे मेरी सद्गति हो प्रेतकी योनि छूट जाय वह प्रयत्न करिये ॥ ४३ ॥

हे महाराज ! यदि मेरा भला करना चाहते हो तो वैसा करना चाहिये, भूख प्यास आदि दुःखोंसे प्रेतपन मेरे लिये दुःसह है ॥४४॥ इस वनमें सुन्दर स्वादिष्ट शीतल जल तथा फल हैं, किन्तु भूखसे पीड़ित मैं उन फलोंको नहीं पाता हूँ और प्यासा होकर कहीं जलभी नहीं पाता हूँ॥४५॥हे राजन्!यदिमेरी बड़ी नारायण विधि हो और उसके आगेकी सब विधि वेदके मन्त्रों

तथाकार्यंत्वयावीरममचेदिच्छसिप्रियम् ॥ क्षुधातृषादिभिर्दुःखैःप्रेतत्वंदुःसहंमम ॥ ४४ ॥ स्वादूदकंफलंचास्तिवनेऽस्मिञ्छीतलंशिवम् ॥ न प्राप्नोमिक्षुधार्तोऽहंतृषार्तोनजलंक्वचित ॥ ४५ ॥ यदिमेहिभवेद्राजन्विधिनारायणोमहान् ॥ तदग्रेवेदमंत्रैश्चक्रियासर्वौर्ध्वदेहिकी ॥ ४६ ॥ तदानश्यतिमेनूनंप्रेतत्वंनात्रसंशयः ॥ वेदामंत्रास्तपोदानंदयासर्वत्र जन्तुषु ॥४७॥ सच्छास्त्रश्रवणंविष्णोःपूजासज्जनसंगतिः ॥ प्रेतयोनिविनाशाय भवन्तीतिमयाश्रुतम् ॥ ४८ ॥ अतोवक्ष्यामितेविष्णुपूजांप्रेतत्वनाशिनीम् ॥ सुवर्णद्वयमानीयसुवर्णंन्यायसञ्चितम् ॥ तस्यनारायणस्यैकांप्रतिमांभूपकल्पयेत् ॥ ४९ ॥

से की जाय ॥ ४६ ॥ तो निश्चय मेरा प्रेतपन नष्ट हो जाय इसमें सन्देह नहीं है, वेद, मन्त्र, तप, दान तथा सब जीवों पर दया ॥ ४७ ॥ उत्तम शास्त्रोंको सुनना, विष्णु भगवान्‌की पूजा, सज्जनोंकी संगति, ये सब बातें प्रेत योनिके नाशके लिये होते है, यह मैंने सुना है ॥ ४८ ॥ इस लिये प्रेतत्वका नाश करने वाली विष्णुकी पूजाको आपसे कहता हूँ, हे राजन् ! न्यायसे

जोड़े हुये स्वर्णमें से दो सुवर्ण (३२ मासे) स्वर्ण लेकर उसकी नारायणकीं एक प्रतिमा बनावे ॥ ४९ ॥ उस प्रतिमाको पीले कपड़ोंके जोड़ोंसे आच्छादित करे और सब आभूषणोंसे शोभित कर, अनेक तरहके जलसे स्नान कराकर सिंहासन पर स्थापित कर पूजन करे ॥ ५० ॥ उस स्वर्णमयी प्रतिमाके पूर्व भागमें श्रीधर, दक्षिणमें मधुसूदन, पश्चिममें वामन देव और उत्तरमें

पीतवस्त्रयुगच्छन्नांसर्वाभरणभूषिताम् ॥ स्नापितांविविधैस्तोयैरधिवास्ययजेत्ततः ॥ ५० ॥ पूर्वेतुश्रीधरंतस्यदक्षिणेमधुसूदनम् ॥ पश्चिमेवामनंदेवमुत्तरेचगदाधरम् ॥ ५१ ॥ मध्येपितामहंचैवतथादेवंमहेश्वरम् ॥ पूजयेच्चविधानेनगन्धपुष्पादिभिःपृथक् ॥ ५२ ॥ ततः प्रदक्षिणीकृत्य वह्नौ संतर्प्यदेवताः ॥ घृतेनदध्नाक्षीरेण विश्वेदेवांश्चतर्पयेत् ॥ ५३ ॥ ततः स्नातोविनीतात्मायजमानःसमाहितः ॥ नारायणाग्रेविधिवत्स्वांक्रियामौर्ध्वदेहिकीम् ॥ ५४ ॥

गदाधरकी स्थापना करे ॥५१॥ मध्यमें पितामह (ब्रह्मा) तथा महेश्वर देवकी विधान पूर्वक गन्ध पुष्प आदिसे पृथक् पृथक् पूजा करे ॥ ५२ ॥ उसके बाद प्रदक्षिणा करके और अग्निमें देवताओंको तृप्त करके घी, दही और दूधसे विश्वेदेवोंको तृप्त करे ॥५३॥ उसकेबाद स्नान किया हुआ विनीतात्मा यजमान सावधान होकर नारायणके सामने औंर्ध्वदेहिक क्रियाको करे॥५४॥

क्रोध तथा लोभसे रहित होकर शास्त्रकी रीतिसे आरम्भ करे, सब श्राद्ध और वृषोत्सर्ग करे ॥५५॥ उसके बाद ब्राह्मणोंके लिये तेरह पदोंका दान करे और शय्यादान करके प्रेतके लिये घट का दान करे ॥५६॥ राजा बोला:--हे प्रेत ! प्रेत घट कैसे करना चाहिये और किस विधिसे दान करना चाहिये, तुम सब जीवोंकी अनुकम्पाके लिये प्रेतको मुक्ति देनेवाले घटका वर्णन करो

आरभेतयथाशास्त्रंक्रोधलोभविवर्जितः ॥ कुर्याच्छ्राद्धानिसर्वाणिवृषस्योत्सर्जनंतथा ॥ ५५ ॥ ततः पदानिविप्रेभ्योदद्याच्चैवत्रयोदश ॥ शय्यादानंप्रदत्त्वाचघटंप्रेतस्यनिर्वपेत् ॥ ५६ ॥ राजोवाच॥कथंप्रेतघटंकुर्याद्दद्यात्केनविधानतः ॥ ब्रूहिसर्वानुकंपार्थंघटंप्रेतविमुक्तिदम् ॥ ५७ ॥ प्रेतउवाच ॥ साधुपृष्टंमहाराजकथयामिनिबोधते ॥ प्रेतत्वंनभवद्येनदानेनसुदृढेनच ॥ ५८ ॥ दानंप्रेतघटंनामसर्वाशुभविनाशनम् ॥दुर्लभंसर्वलोकानांदुर्गतिक्षयकारकम् ॥ ५९ ॥ संतप्तहाटकमयंतुघटंविधायब्रह्मेशकेशवयुतंसहलोकपालैः॥ क्षीराज्यपूर्णविवरंप्रणिपत्यभक्त्याविप्रायदेहितवदानशतैः किमन्यैः ॥ ६० ॥

॥ ५७ ॥ प्रेत बोला:--हे महाराज ! आपने अच्छा प्रश्न किया है, मैं कहता हूँ, आप मन लगाकर सुनिये, जिस सुदृढ दानसे प्रेतत्व न हो ॥५८॥ यह प्रेत घटदान सभी अशुभोंका नाश करनेवाला है, दुर्गतिको नष्ट करनेवाला है,यह सब लोगोंके लिये दुर्लभ है ॥५९॥ तपाये हुये स्वर्णका घट बनाकर ब्रह्मा, ईश, केशव और लोकपालों (इन्द्र, यम, वरुण, कुबेर आदि) से युक्त

करे उसमें दूध और घी भरकर ब्राह्मणको दान करे, इस घटका दानकर देने पर अन्य सैकड़ों दानोंसे कोई प्रयोजन नहीं रहता ॥६०॥ उस घटके मध्यमें ब्रह्मा, विष्णु और शिवका पूजन करे, प्राची आदि दिशाओं में और उस कण्ठ में क्रम से लोकपालों का पूजन करे ॥ ६१ ॥ हे राजन् ! धूप फूल और चन्दन इनसे विधिपूर्वक पूजन करके दूध और घी समेत उस स्वर्ण घटका

ब्रह्मामध्येतथाविष्णुः शङ्करः शंकरोऽव्ययः ॥ प्राच्यादिषुचतत्कण्ठेलोकपालान्क्रमेणतु ॥ ६१ ॥
संपूज्यविधिवद्राजन्धूपैः कुसुमचन्दनैः ॥ ततोदुग्धाज्यसहितंघटंदेयंहिरण्मयम् ॥ ६२ ॥ सर्वदाना
धिकंचैतन्महापातकनाशनम् ॥ कर्तव्यंश्रद्धयाराजन्प्रेतत्वविनिवृत्तये ॥ ६३ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ एवंसं
जल्पतस्तस्यप्रेतेनसहकाश्यप ॥ सेनाजगामानुपदंहस्त्यश्वरथसंकुला ॥ ६४ ॥

दान करना चाहिये ॥६२॥ महापातकोंका नाश करनेवाला यह सब दानोंसे अधिक है, इसलिये हे राजन् ! प्रेतपन दूर करने के लिये मनुष्योंको यह दान अवश्य करना चाहिये ॥ ६३ । श्री भगवान् बोलेः- हे काश्यप ! उस प्रेतके साथ वह राजा बात कर रहा था, उसी समय हाथी, घोड़े तथा रथोंसे भरी हुई उस राजाकी सेना भी पीछेसे आगई ॥ ६४ ॥

उसके बाद सेनाके आने पर राजाको महामणि देकर और नमस्कार तथा प्रार्थना करके वह प्रेत अन्तर्धान होगया ॥६५॥ फिर उस वनसे निकल कर राजा भी अपने नगरको आया और अपने पुरमें पहुँच कर उस प्रेतकी कही हुई ॥६६॥ हे गरुड़ ! सब और्ध्वदेहिक विधि (मरनेके बादकी क्रिया) को किया, उसके पुण्यदानसे प्रेत योनिसे छूट कर वह स्वर्ग लोकको चला गया ॥६७॥ दूसरेके दिये हुये श्राद्धसे प्रेत भी उत्तम गतिको प्राप्त हुआ, तो पुत्र द्वारा दिये हुये श्राद्धसे पिता सद्गतिको प्राप्त हो,

ततोबलेसमायातेदत्त्वाराज्ञेमहामणिम् ॥ नमस्कृत्यपुनः प्रार्थ्यप्रेतोऽदर्शनमेयिवान् ॥ ६५ ॥ तस्माद्वनाद्वि
निष्क्रम्यराजापिस्वपुरंययौ ॥ स्वपुरंचसमासाद्यतत्सर्वंप्रेतभाषितम् ॥ ६६ ॥ चकारविधिवत्पक्षिन्नौ
र्ध्वदेहिकजंविधिम् ॥ तस्यपुण्यप्रदानेनप्रेतोमुक्तोदिवंययौ ॥ ६७ ॥ श्राद्धेनपरदत्तेनगतः प्रेतोपि सद्गतिम् ॥
किंपुनः पुत्रदत्तेनपितायातीतिचाद्भुतम् ॥ ६८ ॥ इतिहासमिमंपुण्यंशृणोतिश्रावयेच्चयः ॥ नतौप्रेतत्वमा
यातःपापाचारयुतावपि॥६९॥इति श्रीगरुडपुराणेसारोद्धारेबभ्रुवाहनप्रेतसंस्कारोनामसप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥

तो इसमें क्या आश्चर्य है ॥ ६८ ॥ इस पवित्र इतिहासको जो सुनेगा और सुनावेगा वे दोनों पापी होने परभी प्रेत योनिको नहीं प्राप्त होंगे ॥६९॥ गरुड़ पुराण सारोद्धार हिन्दी टीकामें सप्तम अध्याय समाप्त हुआ ॥७॥

गरुड़ बोलेः--हे महाराज ! परलोकमें सहाय करनेवाली, सुकृति मनुष्योंकी आमुष्मिकी क्रियाका वर्णन कीजिये, पुत्रोंको यह क्रिया जिस प्रकार करनी चाहिये वह सब कहिये ॥ १ ॥ श्री भगवान् बोलेः-- हे गरुड़ ! तुमने मनुष्योंके हितके लिये उत्तम प्रश्न किया है, धर्मात्मा मनुष्योंके योग्य कृत्यको तुमसे कहता हूँ ॥२॥ सुकृती पुरुष वृद्धावस्थामें शरीरको रोगी तथा सूर्य

गरुडउवाच ॥ आमुष्मिकींक्रियांसर्वांवदसुकृतिनांमम ॥ कर्तव्यासायथापुत्रैस्तथाचकथयप्रभो ॥ १ ॥
श्रीभगवानुवाच ॥ साधुपृष्टंत्वयाताक्ष्यमानुषाणांहितायवै ॥ धार्मिकार्हंचयत्कृत्यंतत्सर्वंकथयामिते॥२॥सुकृ
तीवार्धकेदृष्ट्वाशरीरंव्याधिसंयुतम् ॥ प्रतिकूलान्ग्रहांश्चैवप्राणघोषस्यचाश्रुतिम् ॥ ३ ॥ तदास्वमरणंज्ञात्वानि
र्भयःस्यादतन्द्रितः ॥ अज्ञातज्ञातपापानांप्रायश्चित्तंसमाचरेत् ॥ ४ ॥ यदास्यादातुरः कालस्तदास्नानं
समारभेत् ॥ पूजनं कारयेद्विष्णोःशालग्रामस्वरूपिणः ॥ ५ ॥

आदि ग्रहोंको प्रतिकूल अर्थात् मारक देखकर तथा कानोंके रुकजाने पर भीतर शब्दकी अश्रुतिको देखकर ॥ ३ ॥ अपने मरण को जान कर निर्भय और आलस्य रहित होकर जाने अनजाने पापोंका प्रायश्चित करे ॥ ४ ॥ और जब अन्त समय हो तब स्नान प्रारम्भ करे और शालग्राम स्वरूपी विष्णु भगवान्का पूजन करावे ॥ ५ ॥

गन्ध, पुष्प तथा तुलसी दल, धूप, दीप, नैवेद्य और बहुतसे मोदक आदिसे पूजन करे ॥६॥ ब्राह्मणोंको दक्षिणा देकर नैवेद्य हीमें से भोजन करावे और अष्टाक्षर अथवा द्वादशाक्षर मन्त्रका जप करे ॥७॥ विष्णु और शिवके नामका स्मरण करे और सुने, हरिका नाम मनुष्योंके कानमें पड़नेसे पापोंको हर लेता है ॥८॥ रोगीके समीप जाकर भाई बन्धुओंको शोच नहीं करना

अर्चयेद्गन्धपुष्पैश्चकुंकुमस्तुलसीदलैः ॥ धूपैर्दीपैश्चनैवेद्यैर्बहुभिर्मोदकादिभिः ॥ ६ ॥ दत्त्वाचदक्षिणांविप्रा न्नैवेद्यादेवभोजयेत ॥ अष्टाक्षरंजपेन्मन्त्रंद्वादशाक्षरमेवच ॥ ७ ॥ संस्मरेच्छृणुयाच्चैवविष्णोर्नामशिवस्यच हरेर्नामहरेत्पापंनृणांश्रवणगोचरम् ॥ ८ ॥ रोगिणोन्तिकमासाद्यशोचनीयंनबान्धवैः ॥ स्मरणीयंपवित्रंमे नामधेयंमुहुर्मुहुः ॥ ९ ॥ मत्स्यः कूर्मोवराहश्चनारसिंहश्चवामनः ॥ रामोरामश्चकृष्णश्चबुद्धः कल्कि तथैवच ॥ १० ॥ एतानिदशनामानिस्मर्तव्यानिसदाबुधैः ॥ समीपेरोगिणोब्रूयुर्बान्धवास्तेप्रकीर्तिताः ॥११॥

चाहिये, बारम्बार मेरे पवित्र नामको स्मरण करना योग्य है ॥९॥ मत्स्य १ कूर्म २ वराह ३ नरसिंह ४ वामन ५ परशुराम ६ रामचन्द्र ७ कृष्ण ८ बुद्ध ९ कल्कि १० ॥ १० ॥ इन दश नामोंको पण्डितों द्वारा सदा स्मरण करना योग्य है, बान्धव इन कहे हुये दश नामोंको रोगीके समीप कहे ॥ ११ ॥

"कृष्ण" यह मंगलमय नाम जिसकी वाणीसे निकलता है उसके करोड़ों महापाप शीघ्रही भस्म होजाते हैं ॥ १२ ॥ पुत्रके लिये उच्चारण किये गये हरिके नामको कहता हुआ मरने वाला अजामिल भी बैकुण्ठ धामको प्राप्त हुआ, तो फिर जो लोग श्रद्धापूर्वक हरिका नाम लेते हैं उनका तो कहना ही क्या है ॥ १३ ॥ दुष्टचित्त वाले पुरुषों द्वारा भी स्मरण किये गये हरि

कृष्णेतिमङ्गलंनामयस्यवाचिप्रवर्तते ॥ तस्यभस्मीभवन्त्याशुमहापातककोटयः ॥ १२ ॥ म्रियमाणो हरेर्नामगृणन्पुत्रोपचारितम् ॥ अजामिलोप्यगाद्धामकिंपुनःश्रद्धयागृणन् ॥ १३ ॥ हरिर्हरतिपापानि दुष्टचित्तैरपिस्मृतः ॥ अनिच्छयापिसंस्पृष्टोदहत्येवहिपावकः ॥ १४ ॥ हरेर्नाम्नश्चयाशक्तिः पापनिर्हरणे द्विजः ॥ तावत्कर्तुंसमर्थोनपातकंपातकं जनः ॥ १५ ॥ किङ्करेभ्योयमः प्राहानयध्वंनास्तिकंजनम् ॥ नैवा नयतभोदूताहरिनामस्मरंनरम् ॥ १६ ॥ अच्युतंकेशवंरामनारायणंकृष्णदामोदरंवासुदेवंहरिम् ॥ श्रीधरं माधवंगोपिकावल्लभंजानकीनायकंरामचद्रंभजे ॥ १७ ॥

पापोंको हर लेते हैं,इसमें दृष्टान्त है कि अनिच्छासे भी स्पर्श की गई अग्नि जला ही देती है ॥ १४ ॥ हे पक्षीन्द्र ! हरिके नाम की जो सामर्थ्य पापोंको हरलेनेकी है, उतने पाप पापी मनुष्य करनेमें भी समर्थ नहीं हैं ॥ १५ ॥ यमने अपने दूतोंसे कहा कि नास्तिक मनुष्योंको लेआओ, परन्तु हे दूतो ! हरिका स्मरण करने वाले को नरकमें मत लाना ॥ १६ ॥ अच्युत केशव राम नारायण कृष्ण दामोदर वासुदेव हरि श्रीधर माधव गोपिकाबल्लभ और जानकीके नायक रामचन्द्रको मैं भजता हूँ ॥ १७॥

कमलनयन वासुदेव विष्णु धरणीधर अच्युत शंखचक्रपाणि शरण हो, इस प्रकार जो उच्चारण करते हैं, हे दूतो! उन पाप रहित मनुष्योंका बहुत दूरसे त्याग करो ॥१८॥ जो दुष्ट पुरुष हैं, श्री भगवान्‌के चरणकमलरजसे सदा विमुख (हरिकी भक्तिसे रहित) हैं दरिद्रियों द्वारा सदा सेवित, नरकके मार्गमें जिन्होंने तृष्णा बांधी है, ऐसे मनुष्यको लाओ ॥१९॥ जिनकी जीभ हरि

कमलनयनवासुदेवविष्णोधरणीधराच्युतशंखचक्रपाणे ॥ भवशरणमितीरयन्तियेवैत्यजभटदूरतरेणता नपापान् ॥ १८ ॥ तानानयध्वमसतोविमुखान्मुकुन्दपादारविन्दमकरन्दरसादजस्रम् ॥ निष्किञ्चनैः पर महंसकुलैरसङ्गैर्जुष्टाद्गृहेनिरयवर्त्मनिबद्धतृष्णान् ॥ १९ ॥ जिह्वानवक्तिभगवद्गुणानामधेयंचेतश्चनस्मरति तच्चरणारविन्दम् ॥ कृष्णायनोनमतियच्छिरएकदापितानानयध्वमसतोऽकृतविष्णुकृत्यान् ॥ २० ॥ तस्मात्संकीर्तनंविष्णोर्जगन्मङ्गलमंहसाम् ॥ महातामपिपक्षीन्द्रविद्धयकान्तिकनिष्कृतिम् ॥ २१ ॥

के नामका उच्चारण नहीं करती है, जिनका चित्त हरिके चरणारविन्दका स्मरण नहीं करता है और जिनका शिर एकबार भी श्रीकृष्णके चरणोंमें नहीं नमता है, विष्णुके कृत्य नहीं करनेवाले ऐसे दुष्टोंको लाओ ॥२०॥ इस कारणसे हे गरुड़! जगत

के मंगल रूप और बड़े भारी पापोंके एकही प्रायश्चित्त रूप हरिके नामको जानो ॥२१॥ जिन्होंने प्रायश्चित्त तो किये हैं किन्तु नारायणसे विमुख हैं, उनको वे प्रायश्चित्त शुद्ध नहीं कर सकते हैं जैसे मदिराके घड़ेको नदी पवित्र नहीं कर सकती है अर्थात् वे नरक ही में जाते हैं॥२२॥ कृष्णके नामसे जिनके पाप दूर होगये हैं ऐसे मनुष्य नरकको नहीं देखते हैं और यमको तथा उनके दूतोंको स्वप्नमें भी कभी नहीं देखते हैं ॥२३॥ मांस अस्थि रुधिर जिसमें हैं ऐसी काया ही वैतरणी नदी है (वैतरणीभी कठिन

प्रायश्चित्तानिचीर्णानिनारायणपराङ्मुखम् ॥ ननिष्पुनन्तिदुर्बुद्धिंसुराकुम्भमिवापगाः ॥ २२ ॥ कृष्णनाम्ना ननरकंपश्यन्तिगतकिल्बिषाः ॥ यमंचतद्भटांश्चैवस्वप्नेपि न कदाचन ॥ २३ ॥ मांसास्थिरक्तवत्कायावैतरण्यांपतेन्नसः॥ योऽन्तेदद्याद्द्विजेभ्यश्चनन्दनन्दनगामिति ॥२४॥ अतःस्मरेन्महाविष्णोर्नामपापौघनाशनम् गीतासहस्रनामानिपठेद्वाशृणुयादपि ॥ २५ ॥

है और उसमें मांस रुधिरकी कीच है) उस वैतरणीमें ब्राह्मणको गोदान करनेवाला मनुष्य जैसे नहीं गिरता है वैसे ही जो अन्त समयमें "नन्दनन्दन" यह वाणी दांतोंको देता है अर्थात् हरिका नाम स्मरण करता हैं, वह पुरुष कायारूपी वैतरणीमें नहीं गिरता है अर्थात् मुक्त हो जाता है ॥ २४ ॥ अतः पापोंके समूहको नष्ट करनेवाले विष्णुके नामका स्मरण करे, गीता तथा

सहस्रनामका पाठ करे अथवा दूसरेसे सुने ॥२५॥ एकादशीका व्रत, गीताका पाठ, गंगा जल, तुलसी दल,विष्णुका चरणामृत और विष्णुके नामसे सब मरण समयमें मुक्तिको देनेवाले हैं ॥२६॥ उसके बाद घी और स्वर्णसमेत अन्नका संकल्प करे और वेदपाठी ब्राह्मणके लिये बछड़े सहित गौधनका दान करे ॥२७॥ अन्त समयमें जो मनुष्य थोड़ा अथवा बहुत दान करता है

एकादशीव्रतंगीतागङ्गाम्बुतुलसीदलम् ॥ विष्णोःपादाम्बुनामानिमरणेमुक्तिदानिच ॥ २६ ॥ ततःसंकल्पयेदन्नंसघृतंचसकाञ्चनम् ॥ सवत्साधेनवोदेयाः श्रोत्रियायद्विजातये ॥ २७ ॥ अन्तेजनोयद्ददातिस्वल्पंवायदिवाबहु ॥ तदक्षयंभवेत्ताक्ष्र्ययत्पुत्रश्चानुमोदते ॥ २८ ॥ अन्तकालेतुसत्पुत्रः सर्वदानानिदापयेत् ॥ यत्तदर्थंसुतोलोकेप्राथ्र्यतेधर्मकोविदः ॥ २९ ॥ भूमिष्ठंपितरंदृष्ट्वाअर्धोन्मीलितलोचनम् ॥ पुत्रैस्तृष्णानकर्तव्यातद्धनेपूर्वसंचिते ॥३०॥ सतद्ददातिसत्पुत्रोयावज्जीवत्यसौचिरम् ॥ अतिवाहस्तुतान्मार्गेदुःखंनलभतेयतः॥३१

हे गरुड़ ! वह सब अक्षय होता है, और जो पुत्र देनाचाहे वह अक्षय होता है ॥ २८ ॥ सत्पुत्र अन्त समयमें पितासे सब दान दिलवाये, इसी आतुरदान करनेके लिये धर्मज्ञ पुरुष पुत्रकी कामना करते हैं ॥२९॥ आधे खुले नेत्रोंवाले भूमिमें पड़े हुये पिता को देख कर पिता द्वारा सञ्चित किये धनमें पुत्रोंको तृष्णा नहीं करनी चाहिये ॥ ३० ॥ वह सत्पुत्र जो देता है, उससे जितने

मरण समय तक वह जीता है तब तक परलोकको जानेवाले मार्गमें पहले कहे गये दुःखोंको नहीं पाता है ॥ ३१ ॥ मरण समय और ग्रहण समय इन दोनों समयके दान सब दानोंसे अधिक हैं,इसलिये तिल आदि आठ दान अवश्य देने चाहिये ॥३२॥ (आठ दान) तिल १ लोह२स्वर्ण ३ कपास ४ नमक ५ सप्तधान्य ६ भूमि ७ गौ ८ इनमें एक से पवित्र हैं ॥३३॥ ये आठ महादान महापातकोंका नाश करनेवाले हैं, अन्तकालमें ये देने चाहिये, इनका जो फल है उसे तुम सुनो ॥३४॥ मेरे पसीनेसे उत्पन्न तिल

आतुरेचोपरागेचद्वयंदानंविशिष्यते ॥ अतोवश्यंप्रदातव्यमष्टदानंतिलादिकम् ॥ ३२ ॥ तिलालोहंहिरण्यं चकार्पासोलवणंतथा ॥ सप्तधान्यंक्षितिर्गावोह्येकैकंपावनंस्मृतम् ॥ ३३ ॥ एतदष्टमहादानंमहापातकनाशनम् ॥ अन्तकालेप्रदातव्यंशृणुतस्यचसत्फलम् ॥ ३४ ॥ ममस्वेदसमुद्भूताः पवित्रास्त्रिविधास्तिलाः॥असुरादानवादैत्यास्तृप्यन्तितिलदानतः ॥ ३५ ॥ तिलाः श्वेतास्तथाकृष्णादानेनकपिलास्तिलाः ॥ संहरन्तित्रिधापापंवाङ्मनःकायसंचितम् ॥ ३६ ॥ लोहदानंचदातव्यंभूमियुक्तेनपाणिना ॥ यमसीमांनचाप्नोतिन गच्छेत्तस्यवर्त्मनि ॥ ३७ ॥

तीन तरह के होते हैं और असुर, दानव, दैत्य ये सब तिलोंके दानसे तृप्त होते हैं ॥३५॥ सफेद, काले और भूरे रंग के तिल दान करनेसे वाणी, मन तथा काया से किये गये तीनों प्रकार के पापोंका नाश होता है ॥३६॥ भूमि पर हाथ रखकर लोह का दान करना चाहिये, इस दान को करनेवाला मनुष्य यमराज की सीमा में नहीं जाता है और न उसके मार्ग में जाता है ॥ ३७ ॥

पापी मनुष्य को दण्ड देनेके लिये यमराजके हाथमें फरसा, मूसल, दण्ड, खड्ग, तथा छुरी विद्यमान हैं ॥ ३८ ॥ यमराजके शस्त्रों की प्रसन्नता के लिये यह दान कहा गया है, इसलिये यम लोकमें सुख देनेवाले लोहेका दान करे ॥३९॥ ऊरण और श्यामसूत्र शुण्डामर्क उदुम्बर शेषंबल महादूत ये लोहके दानसे सुख को देने वाले होते हैं ॥४०॥ हे गरुड! बहुत ही छिपाने योग्य सब दानोंमें

कुठारोमुसलोदण्डः खड्गश्चच्छुरिकातथा ॥ शस्त्राणियमहस्तेचनिग्रहेपापकर्मणाम् ॥ ३८ ॥ यमायुधानां सन्तुष्टयैदानमेतदुदाहृतम् ॥ तस्माद्दद्याल्लोहदानंयमलोकेसुखावहम् ॥ ३९ ॥ ऊरणःश्यामसूत्रश्चशुण्डाम र्कोप्युदुम्बरः ॥ शेषंबलोमहादूतालोहदानात्सुखप्रदाः ॥ ४० ॥ शृणुतार्क्ष्यपरंगुह्यंदानानांदानमुत्तमम् ॥ दत्ते नतेनतुष्यन्तिभूर्भुवःस्वर्गवासिनः ॥ ४१ ॥ ब्रह्माद्याऋषयोदेवाधर्मराजसभासदः ॥ स्वर्णदानेनसन्तुष्टाभव न्तिवरदायकाः ॥ ४२ ॥ तस्माद्देयंस्वर्णदानंप्रेतोद्धरणहेतवे ॥ नयातियमलोकंसस्वर्गतिंतातगच्छति ॥ ४३ ॥

उत्तम दान को सुनो, जिसके दान करने से भूमिलोक, भुवर्लोक और स्वर्गके रहनेवाले संतुष्ट होते हैं ॥४१॥ ब्रह्मा आदि देवता ऋषि इंद्र आदि देवता और धर्मराज की सभा के लोग स्वर्णदान से सन्तुष्ट होते हैं और वरदान देते हैं ॥४२॥ इसलिये प्रेतके उद्धार के लिये स्वर्ण का दान करना चाहिये, हे तात! इससे वह यमलोक नहीं जाता है, स्वर्गगति को प्राप्त होता है ॥ ४३ ॥

फिर बहुत काल तक सत्यलोक में वास करके इस लोक में राजा होता है और रूपवान्, धर्मात्मा, बोलने में चतुर, लक्ष्मीवान् और बडा पराक्रमी होताहै ॥४४॥ कपासके दान से दूतोंसे भय नहीं होता है और लवणके दानसे यमराज से भय नहीं होता है ॥४५॥ लोहा, लवण, कपास, तिल और स्वर्णके दानसे यमपुरके वसनेवाले चित्रगुप्त आदि सब संतुष्ट होते हैं और ॥४६॥ सप्तधान्य के

चिरंवसेत्सत्यलोकेततोराजाभवेदिह ॥ रूपवान्धार्मिकोवाग्मीश्रीमानतुलविक्रमः ॥४४॥ कार्पासस्यतुदाने नदूतेभ्योनभयंभवेत् ॥ लवणंदीयतेयच्चतेननैवभयंयमात् ॥ ४५ ॥ अयोलवणकार्पासतिलकाञ्चनदानतः ॥ चित्रगुप्तादयस्तुष्टायमस्यपुरवासिनः ॥ ४६ ॥ सप्तधान्यप्रदानेनप्रीतोधर्मध्वजोभवेत् ॥ तुष्टाभवन्तियेन्ये पित्रिषुद्वारेष्वधिष्ठिताः ॥ ४७ ॥ व्रीहयोयवगोधूमामुद्गामाषाः प्रियंगवः ॥ चणकाःसप्तमाज्ञेयाः सप्तधान्यमुदाहृतम् ॥ ४८ ॥ गोचर्ममात्रवसुधादत्तापात्रेविधानतः ॥ पुनातिब्रह्महत्यातोदृष्टमेतन्मुनीश्वरैः ॥ ४९ ॥

दानसे धर्मध्वज प्रसन्न होते हैं और जो यमपुर के तीनों द्वारोंमें स्थित हैं वे भी प्रसन्न होते हैं ॥४७॥ धान १ जौ २ गेहूँ ३ मूंग ४ उड़द ५ कंगुनी ६ और सातवां चना ७ ये सात धान्य कहे गये हैं॥४८॥(भूमि दानका फल कहते हैं) गोचर्म मात्र (बैलों सहित एक सौ गौएं जितने स्थानपर बैठती हैं) भूमि जिस पुरुषने विधिपूर्वक पात्रको दी है वह ब्रह्महत्या से छूट जाता है, यह मुनीश्वरोंने देखा

है ॥४९॥ व्रतोंसे तीर्थोंसे और अन्नदानसे राज्यमें किया हुआ महापाप नष्ट नहीं होता है, किंतु भूमिके दानसे दूर होता है ॥५०॥ जो मनुष्य धान्यसे भरी हुई पृथ्वी ब्राह्मणको दान करता है, वह सुर तथा असुरोंद्वारा पूजित हो इंद्रलोकको जाता है॥५१॥हे कश्यप! अन्न दान बहुत ही थोडे फल को देनेवाले होते हैं, और पृथ्वी के दान से उत्पन्न पुण्य दिन दिन बढता है ॥५२॥ राजा होकर ब्राह्मण

न व्रतेभ्योनतीर्थेभ्यो नान्यदानाद्विनश्यति ॥ राज्येकृतंमहापापंभूमिदानाद्विलीयते ॥ ५० ॥ पृथ्वींसस्यसम्पूर्णां यो ददाति द्विजातये ॥ सप्रयातीन्द्रभुवनेपूज्यमानः सुरासुरैः ॥५१॥ अत्यल्पफलदानिस्युरन्यदानानिकाश्यप॥ पृथ्वीदानजंपुण्यमहन्यहनिवर्द्धते ॥५२॥ योभूत्वाभूमिपोभूमिं नो ददाति द्विजातये॥ स नाप्नोतिकुटींग्रामेदरिद्रीस्याद्भवेभवे ॥ ५३ ॥ अदानाद्भूमिदानस्य भूपतित्वाभिमानतः॥ निवसेन्नरकेयावच्छेषोधारयतेधराम्॥५४॥तस्माद्भूमीश्वरोभूमिदानमेवप्रदापयेत्॥ अन्येषांभूमिदानार्थंगोदानंकथितंमया ॥५५॥

को भूमिदान नहीं करता है, वह गाँवमें कुटी नहीं पाता है और जन्मजन्ममें दरिद्री होता है॥५३॥ भूमिका दान न देनेसे तथा भूपतिपनके अभिमानसे तबतक नरकमें वास करता है, जबतक शेष नाग पृथ्वीको धारण करते हैं ॥ ५४ ॥ इसलिये भूमि का स्वामी भूमि का ही दान करे, औरों को भूमिदान के लिये मैंने गोदान कहा है क्योंकि भूमि भी गोरूपा ही है॥ ५५ ॥

अंतधेनु और आठ दानमें कही हुई रुद्रधेनु (रुद्र मृत्युञ्जय हैं इससे मृत्युका दुःख दूर होनेकेलिये रुद्रधेनु कही) उसके बाद ऋण धेनु अर्थात् जाने अनजाने ऋणके दूर होने के लिये और मोक्षधेनु अर्थात् मोक्षके लिये धेनुका दान करे ॥ ५६ ॥ हे गरुड ! विशेषविधि से वैतरणी धेनुका अर्थात् वैतरणी उतरनेके लिये दान करे, गौएं तीनों प्रकार के पापसे तारती हैं॥५७॥बालकपन में

ततोन्तधेनुर्दातव्यारुद्रधेनुंप्रदापयेत् ॥ ऋणधेनुंततोदत्वामोक्षधेनुंप्रदापयेत् ॥ ५६ ॥ दद्याद्वैतरणींधेनुंविशेषविधिनाखग ॥ तारयन्तिनरंगावस्त्रिविधाच्चैवपातकात् ॥ ५७ ॥ बालत्वेयच्चकौमारेयत्पापंयौवनेकृतम् ॥ वयःपरिणतौयच्चयच्चजन्मान्तरेष्वपि ॥ ५८ ॥ यन्निशायांतथाप्रातर्यन्मध्याह्नापराह्णयोः ॥ संध्ययोर्यत्कृतंपापंकायेनमनसागिरा ॥ ५९ ॥ दत्वाधेनुंसकृद्वापिकपिलांक्षीरसंयुताम् ॥ सोपस्करांसवत्सांचतपोवृत्तसमन्विते ॥ ६० ॥ ब्राह्मणेवेदविदुषिसर्वपापैः प्रमुच्यते ॥ उद्धरेदन्तकाले सा दातारं पापसञ्चयात् ॥ ६१ ॥

कुमार अवस्थामें और तरुणावस्थामें जो पाप किये हैं और बुढापेमें तथा दूसरे जन्ममें जो पाप किये हैं॥५८॥और जो रातमें, प्रातः-काल और मध्याह्न तथा अपराह्नमें और दोनों संध्याओंमें मन, वाणी तथा कर्मसे जो पाप किये हैं॥५९॥जन्मभरमें एकबार भी दूध देनेवाली कपिला गौ का सब सामग्री तथा बछड़े सहित तपस्वी ब्राह्मणको दान करे॥६०॥ वेदको जाननेवाले ब्राह्मणके लिये

दान करके सब पापोंसे छूट जाता है, वह (दान की गई कपिला गौ) अन्तकालमें दाता का पापों के समूह से उद्धार करती है ॥६१॥ स्वस्थचित्त पुरुष को एक गौ, आतुर को एक सौ गौएं, और तत्काल मरने की अवस्था वाले को दान का अनुसंधान न होने से एक हजार गौओं का दान है ॥ ६२ ॥ मरनेके बाद एक लाख गौ का विधिपूर्वक दान समान फल देनेवाला होता है, तीर्थ तथा सत्पात्र युक्त वह एक दान लाख प्रकार का होता है ॥६३॥ जो दान पात्र (उचित व्यक्ति) में दिया जाता

एकागौः स्वस्थचित्तस्यह्यातुरस्यचगोशतम् ॥सहस्रंम्रियमाणस्यदत्तंचित्तविवर्जितम् ॥६२॥ मृतस्यैतत्पुनर्लक्षंविधिपूतंचतत्समम् ॥ तीर्थपात्रसमोपेतंदानमेकंचलक्षधा ॥ ६३ ॥ पात्रेदत्तंचयद्दानंतल्लक्षगुणितंभवेत् ॥ दातुः फलमनन्तंस्यान्नपात्रस्यप्रतिग्रहः ॥ ६४ ॥ स्वाध्यायहोमसंयुक्तः परपात्रविवर्जितः ॥ रत्नपूर्णामपि महींप्रतिगृह्यनलिप्यते ॥ ६५ ॥ विषशीतापहौमन्त्रवह्नीकिंदोषभागिनौ ॥ अपात्रे सा च गौर्दत्ता दातारं नरकं नयेत् ॥ ६६ ॥

है वह लाख गुणा होता है,देनेवाले को अनन्त फल देनेवाला होता है और पात्रको प्रतिग्रह का दोष नहीं लगता है॥६४॥वेद का पाठ और हवन करनेवाला स्वयंपाकी ब्राह्मण रत्नोंसे भरी हुई पृथ्वी का दान लेकर भी प्रतिग्रहके दोषसे लिप्त नहीं होता है ॥६५॥ विष तथा शीतको दूर करनेवाले मन्त्र तथा अग्नि क्या दोषके भागी होते हैं ? अर्थात् नहीं होते, अपात्रमें दान की हुई गौ

दाताको नरकमें पहुँचाती है॥६६॥और एक सौ एक कुल समेत लेनेवाले को नरकमें डालती है, अपना कल्याण चाहनेवाले विद्वान् को अपात्रमें गौ का दान नहीं करना चाहिये॥६७॥एक गौ एकही मनुष्य को देनी चाहिये, बहुतसे मनुष्योंको नहीं,बेची गई अथवा बांटी गई वह गौ सातवें कुल तक जलादेती है ॥६८॥ मैंने पहले जो तुमसे वैतरणी नामकी नदी कही है, उसके पार जाने के उपाय

कुलैकशतसंयुक्तंग्रहीतारंतुपातयेत् ॥ नापात्रेविदुषादेयाह्यात्मनःश्रेयइच्छता ॥ ६७ ॥ एकाह्येकस्यदातव्याबहूनां न कदाचन ॥ साविक्रीताविभक्तावादहत्यासप्तमंकुलम् ॥ ६८ ॥ कथितायामयापूर्वंतववैतरणीनदी ॥ तस्याह्युद्धरणोपायंगोदानंकथयामिते ॥ ६९ ॥ कृष्णांवापाटलांवापिधेनुंकुर्यादलंकृताम् ॥ स्वर्णशृङ्गींरौप्यखुरींकांस्यपात्रोपदोहिनीम् ॥ ७० ॥ कृष्णवस्त्रयुगच्छन्नांकण्ठघटासमन्विताम् ॥ कार्पासोपरिसंस्थाप्यताम्रपात्रंसचेलकम् ॥ ७१ ॥ यमंहैमंन्यसेत्तत्रलोहदण्डसमन्वितम् ॥ कांस्यपात्रेघृतंकृत्वासर्वंतस्योपरिन्यसेत् ॥ ७२ ॥

रूप गौदानको मैं कहता हूँ ॥६९॥ कृष्णा अथवा पाटल वर्णा गौ को आभूषणोंसे शोभित करे, सोनेसे मढे हुये सींग, चांदी के खुर, और कांसे के पात्र की दोहनीवाली ॥७०॥ कालेवस्त्रोंके जोडों से ढकी हुई और कण्ठमें सुन्दर घण्टासे शोभित गौ को कपास के ऊपर खडी कर अथवा बैठाकर वस्त्रों समेत ताम्बेका पात्र रखे ॥७१॥ और वहाँ लोह दण्ड लिये हुये स्वर्णसे बने यमराज की

स्थापना करे, कांसेके पात्रमें घी डाल कर सब उसके ऊपर रखदे ॥७२॥ ईख की नाव बनाकर रेशम के सूतसे लपेटे और जलसे भरे गड्ढेमें उस नाव को डाले ॥७३॥ सूर्यकी देहसे उत्पन्न उस गौ को उसके ऊपर स्थित करके शास्त्रोक्त विधिसे वहाँ धेनुका संकल्प करे ॥७४॥ अलंकार समेत वस्त्र ब्राह्मणको दान करे और गंध, पुष्प अक्षत आदि विधिपूर्वक पूजन करे ॥७५॥ गौ की पूंछ

नावमिक्षुमयींकृत्वापट्टसूत्रेणवेष्टयेत् ॥ गर्तंविधायसजलंकृत्वातस्मिन्क्षिपेत्तरीम् ॥ ७३ ॥ तस्योपरिस्थितां कृत्वासूर्यदेहसमुद्भवाम् ॥ धेनुंसंकल्पयेत्तत्रयथाशास्त्रविधानतः ॥ ७४ ॥ सालंकाराणिवस्त्राणिब्राह्मणायप्रकल्पयेत् ॥ पूजांकुर्याद्विधानेनगन्धपुष्पाक्षतादिभिः ॥ ७५ ॥ पुच्छंसंगृह्यधेनोस्तुनावमाश्रित्यपादतः ॥ पुरस्कृत्यततोविप्रमिमंमन्त्रमुदीरयेत् ॥७६॥ भवसागरमग्नानांशोकतापोर्मिदुःखिनाम् ॥ त्रातात्वंहिजगन्नाथशरणागतवत्सल ॥७७॥ विष्णुरूपद्विजश्रेष्ठमामुद्धरमहीसुर ॥ सदक्षिणामयादत्तातुभ्यंवैतरणीनमः ॥७८॥

पकड नाव में पाँव रख ब्राह्मण को आगे करके यह मन्त्र पढे ॥ ७६ ॥ हे जगन्नाथ ! हे शरणागत वत्सल ! संसार सागर में डूबे हुये और शोक संताप रूपी लहरों से दुःखी मनुष्य के आप रक्षक हैं ॥ ७७ ॥ हे विष्णु रूप द्विजश्रेष्ठ ! महीसुर ! मेरा उद्धार करो, मैंने आपके लिये दक्षिणा समेत वैतरणी दी, आपको नमस्कार है ॥ ७८ ॥

अतिघोर यमलोकके मार्गमें सौ योजन चौड़ी उस नदीको उतरना चाहनेवाला मैं इस वैतरणोको देता हूँ, तुमको नमस्कार है ॥ ७९॥ हे धेनुके ! यम द्वारके पथमें उतारने के लिये मेरी प्रतीक्षा करना, हे देवेशि ! तुमको नमस्कार है ॥८०॥ गौएं मेरे आगे हों, गौएं मेरे पीछे हों, और गौएं मेरे हृदयमें हों, मैं गौओंके मध्यमें निवास करता हूँ ॥८१॥ जो लक्ष्मी सब भूतोंमें है और

यममार्गे महाघोरे तां नदीं शतयोजनाम् ॥ तर्तुकामोददाम्येतांतुभ्यंवैतरणींनमः॥ ७९ ॥ धेनुकेमांप्रतीक्ष स्वयमद्वारमहापथे ॥ उत्तारणार्थं देवेशि वैतरण्यै नमोस्तुते॥८०॥ गावोमेअग्रतःसन्तु गावोमेसंतुपृष्ठतः ॥ गावोमेहृदयेसंतु गवांमध्येवसाम्यहम् ॥ ८१ ॥ यालक्ष्मीःसर्वभूतानां या च देवेप्रतिष्ठिता ॥ धेनुरूपेणसाऽदे वीममपापंव्यपोहतु ॥ ८२ ॥ इतिमन्त्रैश्चसंप्रार्थ्य साञ्जलिर्धेनुकांयमम् ॥ सर्वप्रदक्षिणीकृत्यब्राह्मणायनिवे दयेत् ॥ ८३ ॥ एवंदद्याद्विधानेनयोगावैतरणींखग ॥ सयातिधर्ममार्गेणधर्मराजसभान्तरे ॥ ८४ ॥

जो लक्ष्मी देवताओंमें स्थित है वह धेनुके रूपमें मेरे पापोंको नाश करो ॥ ८२ ॥ हाथ जोड़े हुये इन मन्त्रोंको पढ़कर धेनुका और यमकी प्रार्थना कर प्रदक्षिणा करके सब ब्राह्मणको निवेदन करदे ॥८३॥ हे खग ! इस प्रकार विधानसे जो वैतरणी गौ देता है, वह धर्मके मार्गमें होकर धर्मराजकी सभामें जाता है ॥ ८४ ॥

शरीरकी स्वस्थ अवस्था होने पर वैतरणीका व्रत करे और उस नदीको पार करनेकी इच्छा रखने वाले विद्वानने धेनु दान करना चाहिये ॥८५॥ हे गरुड़ ! वह महानदी गोदान करनेसे महामार्गमें नहीं आती है; इससे पुण्य कालमें अवश्य गोदान करने योग्य है ॥८६॥ गंगा आदि सब तीर्थोंमें ब्राह्मणोंके स्थानमें, सूर्यचन्द्रके ग्रहणमें, संक्रान्तिमें तथा अमावस्याको॥८७॥ अयनोंमें मेष

स्वस्थावस्थशरीरेतुवैतरण्याव्रतंचरेत् ॥ देयाचविदुषाधेनुस्तांनदींतर्तुमिच्छता ॥ ८५ ॥ सानायातिमहामार्गे गोदानेननदीखग ॥ तस्माद्वश्यंदातव्यंपुण्यकालेषुसर्वदा ॥ ८६ ॥ गंगादिसर्वतीर्थेषुब्राह्मणावसथेषुच ॥ चन्द्रसूर्योपरागेषुसंक्रान्तौदर्शवासरे ॥ ८७ ॥ अयनेविषुवेचैवव्यतीपातेयुगादिषु ॥ अन्येषुपुण्यकालेषुदद्याद्गोदानमुत्तमम् ॥ ८८ ॥ यदैवजायते श्रद्धा पात्रंसम्प्राप्यतेयदा ॥ स एवपुण्यकालः स्याद्यतः संपत्तिरस्थिरा ॥ ८९ ॥ अस्थिराणिशरीराणिविभवोनैवशाश्वतः ॥ नित्यंसन्निहितोमृत्युःकर्तव्योधर्मसंचयः ॥ ९० ॥

कर्क मकर और तुलाकी संक्रान्तिमें, व्यतीपातमें,युगादि जो अक्षय तृतीयादि तिथियां हैं उनमें और सभी पुण्यकालमें उत्तम गोदान करना योग्य है ॥८८॥ जब श्रद्धा उत्पन्न होती है, और पात्र मिल जाता है वही पुण्यकाल है, क्योंकि सम्पत्ति स्थिर नहीं है ॥८९॥ शरीर अस्थिर है और वैभव सदा नहीं रहता है, मृत्यु सदा निकटही है, इस लिये धर्मका संग्रह करना चाहिये ॥९०॥

अपने धनके अनुसार उस समय दिया हुआ दान अनन्त होता है अपना कल्याण चाहनेवाले पुरुषको विद्वान् ब्राह्मणके लिये दान देना योग्य है ॥ ९१ ॥ अपने हाथोंसे अपने लिये किया गया थोड़ा दानभी अक्षय होता है और तत्काल प्राप्त होता है ॥९२॥ जिसने दानरूपी मार्गका खर्च ले लिया है वह महामार्गमें सुखसे जाता है, अन्यथा मार्गके खर्च बिना प्राणी मार्गमें क्लेश

आत्मवित्तानुसारेण तत्र दानमनन्तकम्॥देयं विप्राय विदुषे स्वात्मनः श्रेयइच्छता॥९१॥अल्पेनापि हि वित्ते न स्वहस्तेनात्मनेकृतम्॥ तदक्षय्यं भवेद्दानं तत्कालंचोपतिष्ठति ॥९२॥ गृहीतदानपाथेयःसुखंयातिमहाध्वनि॥अन्यथा क्लिश्यते जन्तुः पाथेयरहितः पथि॥९३॥यानि यानि च दानानि दत्तानि भुविमानवैः॥यमलोकपथेतानिह्युपतिष्ठन्तिचाग्रतः ॥९४॥ महापुण्यप्रभावेण मानुषं जन्मलभ्यते ॥ यस्तत्प्राप्य चरेद्धर्मंसयाति परमांगतिम् ॥ ९५॥ अविज्ञायनरोधर्मंदुःखमायातियातिच ॥ मनुष्यजन्मसाफल्यंकेवलंधर्मसेवनम् ॥९६॥

पाता है ॥९३॥ जो जो दान पृथ्वीमें मनुष्यद्वारा दिये हुये हैं वे वे यमलोकके मार्गमें आगे प्राप्त होते हैं॥९४॥ बहुत पुण्यके प्रभावसे मनुष्य जन्म मिलता है, जो इस मनुष्य देहको पाकर धर्म करता है वह परम गति (मोक्ष) को प्राप्त होता है ॥ ९५ ॥ धर्मको नहीं जानकर मनुष्य दुःखसे आता है और चला जाता है, मनुष्य जन्मका सफल होना केवल धर्मका सेवन है ॥ ९६ ॥

धन, पुत्र, स्त्री, आदि तथा शरीर भी तथा भाई, बन्धु ये सब अनित्य हैं, अतः धर्मका आचरण करना चाहिये॥९७॥ जबतक मनुष्य जीता है, तबतक बन्धु और माता पिता हैं, मरे हुओंका अन्तर जानकर क्षणमें ही स्नेह दूर होजाता है ॥९८॥ अपना आत्मा ही अपना बन्धु है, इस बातको बार बार जाने, जीते हुये भी यह चिंतवन करके मरे हुओंको कौन देगा ॥ ९९ ॥ ऐसे

धनपुत्रकलत्रादि शरीरमपिबान्धवाः ॥ अनित्यंसर्वमेवेदंतस्माद्धर्मंसमाचरेत् ॥ ९७ ॥ तावद्बन्धुः पितामाता यावज्जीवतिमानवः ॥ मृतानामन्तरंज्ञात्वा क्षणात्स्नेहोनिवर्तते ॥९८ ॥ आत्मैवह्यात्मनोबन्धुरितिविद्यान्मुहुर्मुहुः ॥ जीवन्नपीतिसंचिन्त्यमृतानांकःप्रदास्यति ॥९९॥ एवंजानन्निदंसर्वंस्वहस्तेनैवदीयताम्॥अनित्यं जीवितंयस्मात्पश्चात्कोपि न दास्यति ॥ १०० ॥ मृतंशरीरमुत्सृज्यकाष्ठलोष्ठसमंक्षितौ ॥ विमुखाबान्धवायान्तिधर्मस्तमनुगच्छति॥ १०१॥ गृहादर्थानिवर्तन्तेश्मशानात्सर्वबान्धवाः॥शुभाशुभंकृतंकर्मगच्छन्तमनुगच्छति ॥ १०२ ॥

जानता हुआ पुरुष यह सब अपने हाथहीसे दान करे, जीवन अनित्य है, बादमें कोई नहीं देगा ॥१००॥ मरे हुये शरीरको काष्ठ तथा कंकड़के समान पृथ्वीमें छोड़कर मुख मोड़कर बान्धव चले जाते हैं, धर्म ही उसके साथ जाता है ॥१०१॥ घरसे तो अर्थ निवृत्त हो जाता है और श्मशानसे सब भाई लौट आते हैं, केवल किया हुआ शुभ अशुभ कर्म जातेहुये मनुष्यके साथ जाता है ॥१०२॥

शरीरतो अग्निद्वारा जला दिया जाता है, किया हुआ कर्मही साथ रहता है, जो पुण्य अथवा पाप जैसाहो, उसको सर्वत्र मनुष्य भोगता है ॥१०३॥ दुःखके सागररूप संसारमें कोई किसीका बन्धु नहीं है, कर्मके सम्बन्धसे प्राणी आता है और कर्मके क्षीण होने पर फिर चला जाता है ॥१०४॥ माता पिता पुत्र भ्राता बन्धु और स्त्री आदिका संगम प्याऊमें जीवोंके समान और नदी

शरीरंवह्निनादग्धंकृतकर्मसहास्थितम्॥पुण्यं वा यदि वा पापं भुङ्क्ते सर्वत्रमानवः॥१०३॥न कोपि कस्यचिद्ब
न्धुःसंसारेदुःखसागरे ॥ आयातिकर्मसम्बन्धाद्यातिकर्मक्षयेपुनः ॥ १०४ ॥ मातृपितृसुतभ्रातृबन्धुदारादि
सङ्गमः॥प्रपायामिवजन्तूनांनद्यांकाष्ठौघवच्चलः ॥१०५ ॥कस्यपुत्राश्चपौत्राश्चकस्यभार्याधनंचवा॥ संसारेना
स्तिकःकस्यस्वयंतस्मात्प्रदीयताम्॥ १०६ ॥आत्मायत्तंधनंयावत्तावद्विप्रेसमर्पयेत् ॥ पराधीनेधनेजातेनकिं
चिद्वक्तुमुत्सहेत्॥१०७॥पूर्वजन्मकृताद्दानादत्रलब्धंधनंबहु ॥ तस्मादेवंपरिज्ञायधर्मार्थंदीयतांधनम्॥१०८॥

में काष्ठके समूहके समान चलायमान है॥१०५॥किसके पुत्र और पौत्र ? किसकी भार्या तथा धन ? संसारमें कोई किसीका नहीं है इससे स्वयम्ही देना चाहिये ॥१०६॥ जबतक धन अपने आधीन है, तबतक ब्राह्मणको समर्पण करे, धनके पराधीन होजाने पर कुछ कहनेका उत्साह नहीं रहता है॥ १०७ ॥ पूर्वजन्ममें कियेहुये दानसे यहाँ बहुत साधन प्राप्त हुआ, ऐसा जानकर धर्मके लिये धन

देनाचाहिये ॥१०८॥ धर्मसे अर्थ होता है और धर्मसे काम होता है, धर्म ही मोक्षके लिये होता है, इससे धर्म करे ॥१०९॥ धर्म श्रद्धा से धारण किया जाता है, बहुतसे धनके ढेरोंसे नहीं, धन हीन मुनि श्रद्धाके कारण स्वर्गको गये॥११०॥ पत्र पुष्प फल और जल जो मुझको देता है, श्रद्धासे पवित्र चित्तवाले मनुष्य द्वारा भक्ति पूर्वक समर्पण किये गये उसका मैं भोजन करता हूँ॥१११॥

धर्मात्संजायतेऽर्थश्चधर्मात्कामोभिजायते ॥ धर्मएवापवर्गाय तस्माद्धर्मंसमाचरेत् ॥ १०९ ॥ श्रद्धयाधार्यतेधर्मोबहुभिर्नार्थराशिभिः॥ निष्किञ्चनाहिमुनयः श्रद्धावन्तोदिवंगताः॥११०॥पत्रंपुष्पंफलंतोयंयोमेभक्त्या प्रयच्छति ॥ तदहंभक्त्युपहृतमश्नामिप्रयतात्मनः ॥ १११ ॥ तस्मादवश्यंदातव्यंतदादानंविधानतः॥अल्पं वाबहुवेतीमांगणनांनैवकारयेत् ॥ ११२ ॥ धर्मात्माचसपुत्रोवैदैवतैरपिपूज्यते ॥ दापयेद्यस्तुदानानिपितरं ह्यातुरंभुवि॥११३॥ पित्रोर्निमित्तंयद्वित्तं पुत्रैःपात्रेसमर्पितम् ॥ आत्मापिपावितस्तेनपुत्रपौत्रप्रपौत्रकः॥११४॥ पितुःशतगुणंपुण्यंसहस्रंमातुरेवच ॥ भगिनीदशसाहस्रंसोदरेदत्तमक्षयम् ॥ ११५ ॥

इसलिये विधि पूर्वक दान अवश्य देना चाहिये, थोड़ा अथवा बहुत है इस बातकी गिनती न करे ॥११२॥ धर्मात्मा और सुपुत्र देवताओं द्वारा भी पूजा जाता है, जो भूमिमें आतुर पिताको दान दिलवाता है ॥११३॥ माताके निमित्त जो धन पुत्रों द्वारा सुपात्रको दिया जाता है उस धनसे उनका पुत्र पौत्र प्रपौत्र तक आत्मा पवित्र होजाता है॥११४॥ पिताको दिये का सौगुना पुण्य होता है माताको

दियेका हजार गुन, बहिनको दियेका दशहजारगुना और सहोदर भाईको दिया अक्षय होता है ॥ ११५ ॥ देनेवालेको कोई उपद्रव नहीं होता है, नरककी यातना भी नहीं होती है, मरनेके समय यमके दूतोंसे उत्पन्न भय भी नहीं होता है ॥११६॥ जो आतुर समयमें लोभसे दान नहीं करते हैं, हे गरुड़ ! वे कृपण पापी मरनेके बाद शोक करते हैं ॥११७॥ भाईसमेत पुत्र सगोत्री सुहृदादि

नचैवोपद्रवादातुर्नवानरकयातनाः ॥ मृत्युकालेचनभयंयमदूतसमुद्भवम् ॥ ११६ ॥ यदिलोभान्नयच्छन्ति कालेह्यातुरसंज्ञके ॥ मृताः शोचन्तितेसर्वेकदर्याः पापिनः खग ॥ ११७ ॥ पुत्राः पौत्राःसहभ्रात्रासगोत्राःसुहृदस्तुये ॥ ददंतिनातुरेदानंब्रह्मघ्नास्तेनसंशयः ॥११८॥ इति श्रीगरुडपुराणेसारोद्धारेआतुरदाननिरूपणो नामाष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥ गरुडउवाच ॥ कथितंभवतासम्यग्दानमातुरकालिकम् ॥ म्रियमाणस्ययत्कृत्यं तदिदानींवदप्रभो ॥ १ श्रीभगवानुवाच ॥ शृणुतार्क्ष्यप्रवक्ष्यामि देहत्यागस्यतद्विधिम् ॥ मृतायेनविधानेन सद्गतियान्तिमानवाः ॥ २ ॥

जो हैं वे यदि आतुर समयमें दान नहीं देते हैं, तो निसंदेह ब्रह्महत्यारे हैं ॥११८॥ गरुड़ पुराण सारोद्धार हिन्दी टीकामें आठवां अध्याय समाप्त हुआ॥८॥गरुड़ बोले:—आपने कालका दान बहुत श्रेष्ठ कहा, हे प्रभो! मरते हुये प्राणीका जो कृत्य होता है उसको इससमय आप यथार्थ कहिये ॥ १ ॥ श्री भगवान् बोले:--हे गरुड़ ! सुनो, देहके त्यागकी उस विधिकोमैं तुमसे कहता हूँ

जिसके विधानसे मरे हुये नर सद्गतिको प्राप्त होते हैं ॥२॥ यहाँ जब देही कर्मके योगसे अपने शरीरको छोड़े उस समय तुलसीके समीप गोबरका मण्डल बनावे ॥३॥ उसमें तिलोंको फैलाकर कुश डाले और तब सफेद आसन पर शालग्राम शिलाको स्थापित करे ॥४॥ शालग्रामकी शिला पाप, दोष और भयका नाश करने वाली है इसके समीप मरनेसे प्राणीकी निश्चय मुक्ति होती है ॥ ५ ॥

कर्मयोगाद्यदादेहीमुञ्चत्यत्रनिजंवपुः ॥ तुलसीसन्निधौकुर्यान्मण्डलंगोमयेनतु ॥ ३ ॥ तिलांश्चैवविकीर्याथ दर्भांश्चैवविनिक्षिपेत् ॥ स्थापयेदासनेशुभ्रेशालग्रामशिलांतदा ॥ ४ ॥ शालग्रामशिलायत्रपापदोषभया पहा ॥ तत्सन्निधानमरणान्मुक्तिर्जन्तोः सुनिश्चिता ॥ ५ ॥ तुलसीविटपच्छायायत्रास्तिभवतापहा ॥ तत्रैव मरणान्मुक्तिः सर्वदा दानदुर्लभा ॥ ६ ॥ तुलसीविटपस्थानं गृहेयस्यावतिष्ठते ॥ तद्गृहंतीर्थरूपंहिनयान्तियम किंकराः ॥ ७ ॥ तुलसीमञ्जरीयुक्तोयस्तुप्राणान्विमुञ्चति ॥ यमस्तंनेक्षितुंशक्तोयुक्तंपापशतैरपि ॥ ८ ॥

संसारके तापको दूर करने वाली तुलसीके पौधेकी छाया जहाँ विद्यमान है वहाँ मरनेसे मुक्ति होती है, वह सब प्रकारके दानोंसे दुर्लभ है ॥ ६ ॥ जिसके घरमें तुलसीके वृक्षका स्थान है वह घर तीर्थरूप है, उसमें यमके दूत नहीं जाते हैं ॥ ७ ॥ तुलसीकी मञ्जरी युक्त जो प्राणोंको छोड़ता है, सैकड़ों पापोंसे युक्त भी उस प्राणीको यमराज नहीं देख सकता है ॥ ८ ॥

तुलसीदल मुखमें रखकर तिल और कुशके आसन पर मरा हुआ प्राणी पुत्रहीन होने परभी निस्संदेह विष्णुपुरको जाता है ॥९॥ तीन प्रकारके तिल, दर्भ और तुलसीदलमें सब दुर्गतिको प्राप्त होते हुये आतुरका निवारण करते हैं ॥१०॥ मेरे स्वेदसे उत्पन्न होनेसे तिल पवित्र हैं, अतः तिलोंसे असुर, दानव, दैत्य भागते हैं ॥ ११ ॥ हे गरुड़ ! मेरे रोमसे उत्पन्न तिल मेरी विभूति है

तस्यादलंमुखेकृत्वातिलदर्भासनेमृतः॥ नरोविष्णुपुरंयातिपुत्रहीनोप्यसंशयः ॥ ९ ॥ तिलाःपवित्रास्त्रिविधादर्भाश्चतुलसी तथा॥ नरंनिवारयन्त्येतेदुर्गतियान्तमातुरम् ॥ १० ॥ ममस्वेदसमुद्भूतायतस्तेपावनास्तिलाः ॥ आसुरादानवादैत्याविद्रवन्तितिलैस्ततः ॥ ११ ॥ दर्भाविभूतिर्मेताक्ष्र्यममरोमसमुद्भवाः । अतस्तत्स्पर्शनादेवस्वर्गंगच्छन्तिमानवाः॥ १२॥ कुशमूलेस्थितोब्रह्माकुशमध्येजनार्दनः॥ कुशाग्रेशंकरोदेवस्त्रयो देवाःकुशेस्थिताः॥ १३ ॥ अतःकुशावह्निमन्त्रतुलसीविप्रधेनवः॥ नैतेनिर्माल्यतांयान्तिक्रियमाणाः पुनः पुनः ॥१४॥

अतः उनके स्पर्श मात्रहीसे नर स्वर्गलोकको जाता है ॥१२॥ कुशके मूलमें ब्रह्मा स्थित हैं, कुशके मध्य में जनार्दन और कुशके अग्रभागमें शंकर देव स्थित हैं, इस प्रकार तीनों देवता कुशमें स्थित हैं ॥ १३ ॥ अतः कुश, अग्नि, मन्त्र, तुलसी, ब्राह्मण और गौ ये सब बार बार काममें लगाने परभी निर्माल्य नहीं होते हैं ॥ १४ ॥

दर्भ पिण्डोंमें निर्माल्य होते हैं, ब्राह्मण प्रेतके भोजनमें निर्माल्य होते हैं, मन्त्र, गौ, तुलसी नीचमें और अग्नि चितामें निर्माल्य होजाती हैं ॥१५॥ दर्भके बिछौनेसे संस्कार किये गये और गोबरसे लीपे गये स्थानमें आतुरको रखे, अन्तरिक्षका त्याग करे ॥१६॥ ब्राह्मण, विष्णु, रुद्र और अग्नि ये सब देवता मंडलके ऊपर बैठते हैं, अतः मण्डल करे ॥१७॥ विना लीपी सब भूमि

दर्भाःपिण्डेषुनिर्माल्याब्राह्मणाः प्रेतभोजने ॥ मन्त्रागौस्तुलसीनीचेचितायांचहुताशनः ॥ १५ ॥ गोमयेनोपलिप्तेतुदर्भास्तरणसंकृते ॥ भूतलेह्यातुरंकुर्यादंतरिक्षंविवर्जयेत् ॥ १६ ॥ ब्रह्माविष्णुश्चरुद्रश्चसर्वेदेवाहुताशनः ॥ मण्डलोपरितिष्ठन्तितस्मात्कुर्वीतमंडलम् ॥ १७ ॥ सर्वत्रवसुधापूतालेपोयत्रनविद्यते ॥ यत्रलेपःकृतस्तत्रपुनर्लेपेनशुध्यति ॥ १८ ॥ राक्षसाश्च पिशाचाश्चभूताः प्रेता यमानुगाः ॥ अलिप्तदेशेखट्वायामन्तरिक्षेविशंतिच ॥ १९ ॥ अतोग्निहोत्रंश्राद्धंचब्रह्मभोज्यंसुरार्चनम् ॥ मण्डलेनविनाभूम्यामातुरंनैवकारयेत् ॥ २० ॥ लिप्तभूम्यामतः कृत्वास्वर्णरत्नंमुखेक्षिपेत् ॥ विष्णोःपादोदकंदद्याच्छालग्रामस्वरूपिणः ॥ २१ ॥

पवित्र होती है और जहाँ लीपी गई है वहाँ फिर लीपनेसे पवित्र होती है ॥ १८ ॥ पिशाच, राक्षस, प्रेत और यमके दूत बिना लिपे हुये स्थानमें, खाटमें और अन्तरिक्षमें प्रवेश करते हैं॥१९॥ इसलिये अग्निहोत्र, श्राद्ध, ब्राह्मण भोजन और देवताओंका पूजन इन सबको विना मण्डलकी भूमिमें आतुरसे नहीं करावे ॥२०॥ उसके बाद उस आतुरको लिपी हुई भूमिमें करके उसके मुखमें

स्वर्ण और रत्न डाले,फिर शालग्राम स्वरूप विष्णुका चरणामृत डाले।।२१।।शालग्राम शिलाके जलको जो बिन्दुमात्र भी पीता है वह सब पापोंसे छूटकर मुक्तिको प्राप्त होता है।।२२।।उसके बाद महापातकको नाश करने वाले गंगाजलको दे, वह गंगाजल सब तीर्थोंमें किये हुये स्नान, दान और पुण्यके फलको देनेवाला है ।।२३।। जो कायाको शुद्ध करने वाले एक हजार चान्द्रायण व्रत

शालग्रामशिलातोयंयःपिबेद्बिन्दुमात्रकम्।। ससर्वपापनिर्मुक्तोवैकुण्ठभुवनंव्रजेत्।। २२।। ततोगंगाजलंदद्या न्महापातकनाशनम्।।सर्वतीर्थकृतस्नानदानपुण्यफलप्रदम्।। २३ ।। चान्द्रायणंचरेद्यस्तुसहस्रकायशोधनम्।। पिबेद्यश्चैवगंगाम्भःसमौस्यातामुभावपि ।। २४ ।। अग्निंप्राप्ययथाताक्ष्यतूलराशिर्विनश्यति ।। तथागंगा म्बुपानेनपातकंभस्मसाद्भवेत्।। २५ ।। यस्तुसूर्यांशुसन्तप्तंगंगायाः सलिलंपिबेत्।। ससर्वयोनिनिर्मुक्तः प्रया तिसदनंहरेः।।२६।।नद्योजलावगाहेनपावयन्तीतराञ्जनान्।।दर्शनात्स्पर्शनात्पानात्तथागंगेति कीर्तनात्।।२७।।

करता है तथा जो गंगाजलको पीता है, ये दोनों पृथ्वीमें समान होते हैं ।। २४ ।। हे गरुड ! अग्निको प्राप्तकर जिस प्रकार रुई का ढेर नष्ट हो जाता है उसी प्रकार गंगाजलको पीनेसे सम्पूर्ण पाप भस्म होजाते हैं ।।२५।। जो सूर्यकी किरणोंसे तपे हुये गंगा जलको पीता है वह सब योनियोंसे छूटकर हरिके घरको जाता है ।।२६।। नदियाँ जलमें स्नान करनेसे अन्य मनुष्योंको पवित्र

करती हैं, और गंगा दर्शनसे, स्पर्शसे, पीनेसे और "गंगा" इस नामके कहनेसे ॥२७॥ सैकड़ों हजारों पुरुषोंको पवित्र करती है, इसलिये संसारको तारने वाले उसके जलको पीवे ॥२८॥ जो पुरुष कण्ठमें आये हुये भी प्राणोंसे "गंगा" ऐसे कहता है, वह मरकर विष्णुपुरको जाता है, पृथ्वीमें फिर उत्पन्न नही होता है ॥२९॥ श्रद्धायुक्त जो पुरुष निकलते हुये प्राणोंसे गंगाका मनमें

पुनात्यपुण्यान्पुरुषाञ्च्छतशोथसहस्रशः ॥ गंगातस्मात्पिबेत्तस्याजलंसंसारतारकम् ॥ २८ ॥ गंगागंगेतियो ब्रूयात्प्राणैःकण्ठगतैरपि॥मृतोविष्णुपुरंयातिनपुनर्जायतेभुवि॥२९॥उत्क्रामद्भिश्चयःप्राणैःपुरुषःश्रद्धयान्वितः॥ चिन्तयेन्मनसागंगांसोपियातिपरांगतिम् ॥ ३० ॥ अतोध्यायेन्नमेद्गंगांसस्मरेत्तज्जलंपिबेत् ॥ ततोभागवतंकिंचिच्छृणुयान्मोक्षदायकम् ॥ ३१ ॥ श्लोकंश्लोकार्धपादंवायोन्तेभागवतंपठेत् ॥ नतस्यपुनरावृत्तिर्ब्रह्मलोकात्कदाचन॥ ३२॥ वेदोपनिषदांपाठाच्छिवविष्णुस्तवादपि ॥ ब्राह्मणक्षत्रियविशांमरणंमुक्तिदायकम् ॥ ३३ ॥

चिन्तवन करता है वह मोक्षको प्राप्त होता है ॥३०॥ अतः गंगाजीका ध्यान करे, नमस्कार करे, और उसके जलको पीवे उसके बाद मोक्षको देने वाली भागवतकी कथा कुछ सुने ॥३१॥ एक श्लोक, आधा श्लोक अथवा चौथाई श्लोक भी भागवतका जो अन्त समयमें पढ़ता है, उसका ब्रह्मलोक से कभी लौटना नहीं होता ॥३२॥ उपनिषदोंके पाठसे, शिव तथा विष्णुके स्तोत्रोंसे,

ब्राह्मण, क्षत्रिय तथा वैश्योंकी मृत्यु मुक्ति देनेवाली है ॥३३॥ हे गरुड ! प्राणोंकी यात्राके समय अनशत व्रत करे अर्थात् कुछ खावे नहीं और विरक्त द्विजन्माको आतुर संन्यास देवे ॥३४॥ जो कण्ठमें आये हुये प्राणोंसे "मैंने संन्यास लिया" ऐसे कहता है वह मरकर विष्णु लोकको जाता है, भूमिमें फिर उत्पन्न नहीं होता है ॥३५॥ इस प्रकार जिसका आतुर कृत्य हुआ हो, उस धर्मात्मा

प्राणप्रयाणसमयेकुर्यादनशनंखग ॥ दद्यादातुरसंन्यासंविरक्तस्यद्विजन्मनः ॥ ३४ ॥ संन्यस्तमितियोब्रूया त्प्राणैः कण्ठगतैरपि ॥ मृतोविष्णुपुरंयातिनपुनर्जायतेभुवि ॥ ३५ ॥ एवंजातविधानस्यधार्मिकस्यतदाखग ॥ ऊर्ध्वच्छिद्रेणगच्छन्तिप्राणास्तस्यसुखेनहि ॥ ३६ ॥ मुखंचचक्षुषीनासेकर्णौद्वाराणिसप्तच ॥ एभ्यःसुकृति नोयान्तियोगिनस्तालुरन्ध्रतः ॥३७॥ अपानान्मिलितप्राणौयदाहिभवतः पृथक् ॥ सूक्ष्मीभूत्वातदावायुर्वि निष्क्रामतिपुत्तलात् ॥ ३८ ॥ शरीरंपततेपश्चान्निर्गतेमरुतीश्वरे ॥ कालाहतंपतत्येवंनिराधारोयथाद्रुमः ॥३९॥

पुरुषके प्राण सुखसे ऊपरके छिद्रमें होकर निकलते हैं ॥३६॥ मुख, आखें, नाक, और, कान ये सात द्वार हैं इनमें होकर सुकृतिके प्राण जाते हैं और योगीके तालुके छिद्रमें होकर जाते हैं ॥३७॥ मिले हुये प्राण जब अपानसे पृथक् होते हैं तब वायु सूक्ष्म होकर पुतलेसे निकल जाती है ॥३८॥ इस प्रकार कालसे आहत शरीर ईश्वर रूप वायुके निकल जाने पर निराधार वृक्षके समान गिर जाता है ॥३९॥

प्राणों द्वारा छोड़ा गया शरीर चेष्टा रहित और जुगुप्सित, नहीं छूने योग्य और शीघ्रही दुर्गन्धयुक्त तथा निंदित होजाता है ॥४०॥ कृमि, विष्ठा और भस्म रूपसे शरीरकी तीन प्रकारकी अवस्था होती है, क्षणमें नष्ट होजाने वाले मनुष्यों द्वारा शरीर पर क्यों गर्व किया जाता है ? अर्थात् गर्व करना व्यर्थ है ॥४१॥ पृथ्वीमें पृथ्वी, जलमें जल, तेजमें तेज और पवनमें पवन, लीन होजाता है ॥४२॥ वैसे आकाशमें आकाश तत्व लीन होजाता है, सर्व व्यापी और शिव रूप, नित्यमुक्त, जगत्का साक्षी रूप आत्मा तो

निर्विचेष्टंशरीरंतुप्राणैर्मुक्तंजुगुप्सितम्॥अस्पृश्यं जायते सद्यो दुर्गन्धंसर्वनिन्दितम् ॥४०॥ त्रिधावस्थाशरीरस्यकृमिविड्भस्मरूपतः ॥ किं गर्वः क्रियतेदेहे क्षणविध्वंसिभिर्नरैः ॥४१॥ पृथिव्यां लीयतेपृथ्वीआपश्चैव तथाप्सुच॥तेजस्तेजसिलीयेतसमीरस्तुसमीरणे ॥ ४२ ॥ आकाशश्च तथाकाशे सर्वव्यापीचशंकरः ॥ नित्य मुक्तो जगत्साक्षी आत्मादेहेष्वजोमरः॥४३॥सर्वेन्द्रिययुतोजीवः शब्दादिविषयैर्वृतः ॥ कामरागादिभिर्युक्तः कर्मकोशसमन्वितः॥४४॥पुण्यवासनयायुक्तोनिर्मितेस्वेनकर्मणा॥प्रविशेत्स नवेदेहे गृहेदग्धे यथागृही॥४५॥

अजर अमर है ॥४३॥ सब इन्द्रियोंसे युक्त जीव, शब्दादि विषयोंसे घेरा गया, काम रागादिक और कर्म कोशसे युक्त ॥४४॥पुण्य की वासनासे युक्त होकर अपने कर्म द्वारा बनाये गये नवीन देहमें प्रवेश करता है जैसे घरवाला घर जलजाने पर दूसरे घरमें प्रवेश करता है ॥४५॥

तब किंकणीके जालोंकी मालायुक्त विमानको लेकर चलते हुये चामरोंसे शोभित देवदूत आते हैं॥४६॥ धर्मके तत्त्वको जानने वाले, पण्डित और जिनको सदा धर्मात्मा प्यारे हैं ऐसे देवताओंके दूत तब कृतकृत्य उस प्राणीको विमानमें बैठाकर स्वर्गको ले जाते हैं ॥ ४७॥ सुन्दर दिव्य देवतारूप देहवाला, निर्मल वस्त्र माला और रत्न जटित आभूषणोंसे सुशोभित, दानके

तदाविमानमादायकिंकिणीजालमालियत्॥आयान्तिदेवदूताश्चलसच्चामरशोभिताः॥४६॥धर्मतत्त्वविदः प्राज्ञाःसदाधार्मिकवल्लभाः ॥ तदैनंकृतकृत्यंस्वर्विमानेननयन्तिते ॥ ४७ ॥ सुदिव्यदेहोविरजाम्बरस्त्रक्सुवर्णरत्नाभरणैरुपेतः ॥ दानप्रभावात्समहानुभावः प्राप्नोति नाकं सुरपूज्यमानः ॥ ४८ ॥ इति श्रीगरुडपुराणेसारोद्धारेम्रियमाणकृत्यनिरूपणोनामनवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥ गरुडउवाच ॥ देहदाहविधानंचविभोसुकृतिनांवद ॥ सतीयदिभवेत्पत्नीतस्याश्चमहिमांवद ॥ १ ॥

प्रतापसे महानुभाव वह पुरुष देवताओंसे पूज्यमान होकर स्वर्गको प्राप्त करता है ॥ ४८ ॥ गरुडपुराण सारोद्धार हिन्दी टीका में नवम अध्याय समाप्त हुआ ॥ ९ ॥ गरुड बोलेः--हे विभो ! समर्थ सुकृति पुरुषकी देहके दाहका विधान कहिये और यदि उसकी स्त्री सती हो तो उसकी भी महिमा कहिये ॥ १ ॥

श्रीभगवान् बोलेः—हे गरुड!सुनो,मैं सब और्ध्वदेहिक(मरणके बादके)कर्म कहता हूँ,जिसको करने से पुत्र पौत्र पिताके ऋणसे मुक्त हो जाते हैं॥२॥बहुतसे दान देनेसे क्या प्रयोजन है? माता पिताकी अन्त्येष्टि करे, जिससे पुत्र अग्निष्टोम यज्ञके समान फलको पाता है ॥ ३ ॥ मरनेके बाद शोकको छोड़कर पुत्र मुण्डन करावे, सब पापोंके दूर होनेके लिये सब भाईबन्धुओं समेत मुण्डन करावे ॥ ४ ॥ माता पिताके मर जानेपर जो मुण्डन नहीं कराता है, वह संसार समुद्रसे तारनेवाला आत्मज कैसे समझा जाय?

श्रीभगवानुवाच ॥ शृणुताक्ष्र्यप्रवक्ष्यामिसर्वमेवौर्ध्वदेहिकम् ॥ यत्कृत्वापुत्रपौत्राश्चमुच्यन्तेपैतृकादृणात् ॥ २ ॥ किंदत्तैर्बहुभिर्दानैः पित्रोरन्त्येष्टिमाचरेत्॥ तेनाग्निष्टोमसदृशं पुत्रःफलमवाप्नुयात्॥३॥तदाशोकंपरित्यज्यकारयेन्मुण्डनंसुतः ॥ समस्तबांधवैर्युक्तः सर्वपापापनुत्तये ॥४॥ मातापित्रोर्मृतौयेनकारितंमुण्डनंनहि ॥ आत्मजःसकथंज्ञेयःसंसारार्णवतारकः॥५॥अतोमुण्डनमावश्यंनखकक्षविवर्जितम् ॥ ततःसबांधवैःस्नात्वाधौतवस्त्राणिधारयेत्॥६॥सद्योजलंसमानीयततस्तंस्नापयेच्छवम् ॥ मंडयेच्चंदनैःस्रग्भिर्गङ्गामृत्तिकयाथवा॥७॥

अर्थात् नहीं ॥ ५ ॥ अतः नख और कांख (बगल) को छोड़कर मुण्डन अवश्य करवाना चाहिये, उसके बाद बांधवों समेत स्नान करके धुले हुये वस्त्रोंको धारण करे ॥ ६ ॥ ताजा जल मँगवाकर उस मृतकके शरीरको स्नान करावे,फिर चन्दन माला आदिसे अथवा गंगाकी मृत्तिका (मिट्टी) से शोभित करे ॥ ७ ॥

नवीन वस्त्रोंसे उसको ढककर दक्षिणा सहित पिण्ड देवे, नाम और गोत्रका उच्चारण कर अपसव्य होकर संकल्प करे ॥ ८॥ मृत्युस्थान में शव नाम है उसके नामसे पिण्ड दान करे, उस पिण्डसे उसकी आधारभूता भूमि प्रसन्न होती है ॥ ९॥ द्वारस्थानमें वह पान्थ होता है, उसके नामसे पिण्डदान करे, उस द्वार पिण्डसे भूतोंकी गणनामें दुष्ट अशुद्ध स्थानमें प्राप्त हुये वे विघ्न करनेमें समर्थ नहीं

नवीनवस्त्रैःसंच्छाद्यतदापिण्डंसदक्षिणम् ॥ नामगोत्रंसमुच्चार्यसंकल्पेनापसव्यतः ॥ ८ ॥ मृत्युस्थानेशवोनामतस्यनाम्नाप्रदापयेत् ॥ तेनभूमिर्भवेत्तुष्टातदधिष्ठातृदेवता ॥ ९ ॥ द्वारदेशेभवेत्पान्थस्तस्यनाम्नाप्रदापयेत् ॥ तेननैवोपघातायभूतकोटिषुदुर्गताः ॥ १० ॥ ततःप्रदक्षिणां कृत्वापूजनीयः स्नुषादिभिः॥ स्कंधःपुत्रेणदातव्यस्तदान्यैर्बान्धवैः सह ॥ ११ ॥ धृत्वास्कन्धेस्वपितरं यः श्मशानाय गच्छति॥ सोश्वमेधफलंपुत्रोलभतेच पदेपदे ॥ १२ ॥ नीत्वास्कंधेस्वपृष्ठेकेसदातातेनलालितः ॥ तदैवतदृणान्मुच्येन्मृतंस्वपितरंवहेत् ॥ १३ ॥

होते हैं ॥१०॥ उसके बाद प्रदक्षिणा कर पुत्रवधू आदि द्वारा पूजने योग्य है, उस समय बांधवों सहित पुत्रको कन्धा लगाना चाहिये ॥११॥ पिताको कन्धे पर रखकर जो श्मशानको जाता है वह पुत्र पद पदमें अश्वमेध यज्ञके फलको प्राप्त होता है ॥१२॥ सदां पिता द्वारा प्यार किया गया पुत्र अपने मरे हुये पिताको कंधे पर अथवा पीठ पर लेजाता हुआ तत्काल उस ऋणसे छूट जाता है॥१३॥

उसके बाद आधे मार्गमें जानेपर भूमिको साफकर विश्राम करावे, फिर शवको स्नान कराकर भूत संज्ञक उसके लिये पिण्डदान करे ॥ १४ ॥ उस पिण्डदानसे पिशाच, राक्षस यक्ष तथा जो अन्य दिशाओंमें स्थित हैं वे, उसकी होम करने (जलाने) के योग्य देहको अयोग्यकारक नहीं होते हैं ॥१५॥ उसके बाद श्मशानमें लेजाकर उत्तराभिमुख स्थापित करे, वहाँ देहके दाहके लिये स्थलका शोधन करे ॥ १६ ॥ भूमि साफकर तथा गोबरसे लीप कर वेदिका बनावे,उसपर दर्भसे ऊर्ध्व रेखाकर रेखाके

ततोर्धमार्गेविश्रामंसंमार्ज्याभ्युक्ष्यकारयेत् ॥ संस्नाप्यभूतसंज्ञायतस्मै तेन प्रदापयेत् ॥१४॥ पिशाचाराक्षसायक्षायेचान्येदिक्षुसंस्थिताः॥तस्य होतव्यदेहस्य नैवायोग्यत्वकारकाः॥१५॥ततो नीत्वा श्मशानेषु स्थापयेदुत्तरामुखम् ॥ तत्रदेहस्यदाहार्थंस्थलंसंशोधयेद्यथा ॥१६॥ संमार्ज्यभूमिंसंलिप्योल्लिख्योदधृत्यचवेदिकाम् ॥ अभ्युक्ष्योपसमाधायवह्नितत्रविधानतः ॥ १७ ॥ पुष्पाक्षतैरथाभ्यर्च्यदेवंक्रव्यादसंज्ञकम् ॥ लोमभ्यस्त्वनुवाकेनहोमंकुर्याद्यथाविधि ॥ १८ ॥

बीचमें अनामिका और अंगूठेसे उठाकर जल छिडक कर वहाँ अग्नि स्थापित करके॥१७॥ क्रव्याद (मृतकके मांसके भक्षक) वह्नि का फूल आदिसे पूजनकर "लोमभ्यः स्वाहा, त्वग्भ्यः स्वाहा, मांसेभ्यः स्वाहा" इत्यादि अनुवाक वेदमंत्रों द्वारा विधि पूर्वक होमकरे ॥ १८ ॥

तुम भूतोंको धारण करनेवाले और जगत्के उत्पत्ति स्थान हो, तुम भूतोंका पालन करनेवाले हो, अतः मरे हुये इस सांसारिकको तुम स्वर्गकी गतिको पहुँचाओ ॥ १९ ॥ इस तरह अग्निकी प्रार्थना करके वहीं चन्दन तुलसीके काष्ठ पलाश तथा पीपलकी लकड़ियोंसे चिता बनावे ॥ २० ॥ उस प्रेतको चितामें रखकर वहां चितामें और प्रेतके हाथपर प्रेतके नामसे दो पिण्ड देवे, चिता

त्वंभूतभृज्जगद्योनिस्त्वंभूतपरिपालकः ॥ मृतः सांसारिकस्तस्मादेनंत्वंस्वर्गतिंनय ॥ १९ ॥ इतिसंप्रार्थयित्वाग्निंचितांतत्रैवकारयेत् ॥ श्रीखण्डतुलसीकाष्ठैः पलाशाश्वत्थदारुभिः ॥२०॥ चितामारोप्यतंप्रेतंपिंडौद्वौ तत्रदापयेत् ॥ चितायांशवहस्तेचप्रेतनाम्नाखगेश्वर ॥ चितामोक्षप्रभृतिकंप्रेतत्वमुपजायते ॥२१॥ केऽपितं साधकं प्राहुःप्रेतकल्पविदोजनाः ॥ चितायांतेननाम्नावाप्रेतनाम्नाथवाकरे ॥ २२ ॥ इत्येवंपञ्चभिः पिण्डैःशवस्याहुतियोग्यता ॥ अन्यथाचोपघातायपूर्वोक्तास्तेभवंतिहि ॥ २३ ॥ प्रेतदत्त्वापञ्चपिंडान्हुतमादायतंतृणैः ॥ अग्निपुत्रस्तदादद्यान्नभवेत्पञ्चकंयदि ॥ २४ ॥

पर स्थापनसे लेकर सपिण्डी पर्यन्त प्रेतत्व होता है ॥ २१ ॥ प्रेतकल्पको जाननेवाले कोई उसको साधक कहते हैं, चितामें उस साधक नामसे अथवा प्रेतके नामसे हाथ ही में देवे ॥ २२ ॥ इस प्रकार पांच पिण्डोंसे शवकी आहुतिकी योग्यता होती हैं, अन्यथा पांच पिण्ड न देनेसे पहले कहे हुये वे विघ्नके लिये उपस्थित होते हैं ॥२३॥ प्रेतको पांच पिण्ड देकर पहले "लोमभ्यःस्वाहा" इस

अनुवाकसे होमी गई उसी अग्निको तृणोंसे लेकर पुत्र अग्नि देवे, यदि पञ्चक न हो तो ॥ (यदि अग्निहोत्री हो तो उनको अग्नि अग्निहोत्रसे लेकर देवे) ॥२४॥ जो मनुष्य पंचकमें मरता है वह गतिको प्राप्त नहीं होता है, पंचकमें दाह नहीं करना चाहिये यदि किया जाये तो दूसरेका मरण हो ॥२५॥ आधे धनिष्ठा नक्षत्रसे लगाकर रेवतीके अन्त तक पांच नक्षत्र दाहमें योग्य नहीं है यदि दाह करे तो शुभ न हो ॥२६॥ जो इन पांच नक्षत्रोंमें मरता है उसके घरमें हानि होती है, पुत्रोंमें अथवा गोत्रवालोंमें कोई

पञ्चकेषुमृतोयस्तुनगतिंलभतेनरः ॥ दाहस्तत्रनकर्तव्यः कृतेऽन्यमरणंभवेत् ॥ २५ ॥ आदौकृत्वाधनिष्ठार्धमेतन्नक्षत्रपञ्चकम् ॥ रेवत्यन्तंनदाहेर्हंदाहेचनशुभंभवेत्॥२६॥गृहेहानिर्भवेत्तस्यऋक्षेष्वेषु मृतो हि यः॥ पुत्राणांगोत्रिणांचापिकश्चिद्विघ्नः प्रजायते ॥ २७ ॥ अथवाऋक्षमध्येहिदाहःस्याद्विधिपूर्वकः ॥ तद्विधिंतेप्रवक्ष्यामिसर्वदोषप्रशान्तये ॥ २८ ॥ शवस्यनिकटेताक्ष्र्यनिक्षिपेत्पुत्तलांस्तदा ॥ दर्भमयांश्चचतुरऋक्षमन्त्राभिमन्त्रितान् ॥ २९ ॥ तप्तहेमप्रकर्त्तव्यंवहन्तिऋक्षनामभिः ॥ प्रेताजयतामन्त्रेणपुनर्होमस्तुसंपुटैः ॥ ३० ॥

विघ्न होता है ॥ २७ ॥ अथवा नक्षत्र हीके मध्यमें विधिपूर्वक दाह होता है, सब दोषोंकी शान्तिके लिये उस विधिको मैं तुमसे कहताहूँ ॥२८॥ हे गरुड ! शवके निकट चार पुतलोंको डाले, वे पुतले दर्भके बनेहों और नक्षत्रोंके मन्त्रोंसे अभिमन्त्रितहों ॥२९॥ स्वर्ण तपाना चाहिये और प्रेताजयता इस मन्त्रसे प्रेत नामको सम्पुटित करके होम करना चाहिये ॥ ३० ॥

उसके बाद उन पुत्तलोंके साथ दाह करना चाहिये, सपिण्डके दिन पुत्र उसकी शान्ति विधि करे ॥३१॥ तिलका पात्र, स्वर्ण, रूप्य, रत्न इनको यथाक्रम कांसेके पात्रमें घी भरकर दोषकी शान्तिके लिये दान करे ॥३२॥ ऐसे शान्ति विधान करके जो दाह करता है, उसके विघ्न नहीं होते हैं और प्रेत परमगतिको प्राप्त होते हैं ॥ ३३ ॥ इस तरह पंचकमें दाह होता है, उसके विना

ततोदाहः प्रकर्तव्यस्तैश्चपुत्तलकैः सह ॥ सपिंडनदिनेकुर्यात्तस्यशान्तिविधिंसुतः ॥ ३१ ॥ तिलपात्रंहिरण्यंचरूप्यंरत्नंयथाक्रमम् ॥ घृतपूर्णकांस्यपात्रंदद्याद्दोषप्रशान्तये ॥ ३२ ॥ एवंशान्तिविधानंतुकृत्वादाहंकरोति यः॥न तस्य विघ्नोजायेतप्रेतायान्तिपराङ्गतिम् ॥३३॥ एवंपञ्चकदाहः स्यात्तद्विनाकेवलंदहेत्॥सती यदिभवेत्पत्नीतयासहविनिर्दहेत् ॥३४॥ पतिव्रता यदानारी भर्तुः प्रियहितेरता॥इच्छेत्सहैवगमनं तदास्नानंसमाचरेत् ॥३५॥ कुंकुमांजनसद्वस्त्रभूषणैर्भूषितांतनुम् ॥ दानंदद्याद्द्विजातिभ्योबंधुवर्गेभ्यएवच ॥ ३६ ॥

अकेलेको ही जलावे, यदि पत्नी सती होवे तो उसके साथ जलावे ॥३४॥ जो नारी पतिव्रता हो पतिके हितमें तत्पर हो, साथ ही जाना चाहे तो स्नान करे ॥ ३५ ॥ कुंकुम अंजन उत्तम वस्त्राभूषणसे शरीरको भूषित करे और ब्राह्मणको तथा बन्धुवर्ग को दान दे ॥ ३६ ॥

बादमें गुरुको नमस्कार करके घरके बाहर निकले और मंदिरमें जाकर भक्तिसे हरिको नमस्कार करे ॥३७॥ वहाँ आभरण देकर और श्रीफलको ग्रहणकर लज्जा और मोहको छोड़कर श्मशान भूमिमें जाय ॥३८॥ वहाँ सूर्यको नमस्कार कर चिताकी परिक्रमा करे, तब फूलोंकी सेजपर चढे और अपनी गोदमें पतिको सुलावे ॥३९॥ सखियोंको श्रीफल दे, उसके बाद दाहकी आज्ञा दे,

गुरुंनमस्कृत्यतदानिर्गच्छेन्मन्दिराद्बहिः ॥ ततोदेवालयंगत्वाभक्त्यातंप्रणमेद्धरिम् ॥ ३७ ॥ समर्प्याभरणं तत्रश्रीफलंपरिगृह्यच ॥ लज्जामोहंपरित्यज्यश्मशानभवनंव्रजेत् ॥३८॥ तत्रसूर्यंनमस्कृत्यपरिक्रम्यचितां तदा ॥ पुष्पशय्यांतदारोहेन्निजांकेस्वापयेत्पतिम् ॥३९॥ सखिभ्यः श्रीफलंदद्याद्दाहमाज्ञापयेत्ततः ॥ गङ्गा स्नानसमंज्ञात्वाशरीरंपरिदाहयेत् ॥ ४० ॥ नदहेद्गर्भिणीनारीशरीरेपतिनासह ॥ जनयित्वाप्रसूतिंचबालंपो ष्यसतीभवेत् ॥४१॥ नारीभर्तारमासाद्यशरीरंदहतेयदि ॥ अग्निर्दहतिगात्राणिनैवात्मानंप्रपीडयेत् ॥४२॥

और गंगा स्नानके समान शीतल जानकर शरीरको जलावे ॥४०॥ गर्भिणी स्त्री पतिके साथ शरीरको न जलावे, किन्तु संतान उत्पन्न कर उसका पालन कर बादमें सती हो ॥ ४१ ॥ यदि नारी भर्ताको प्राप्त हो कर शरीरको जलाती है तो अग्नि उसके शरीर को जलाती है, आत्माको पीड़ा नहीं देती है ॥ ४२ ॥

जैसे अग्निमें फूंकी हुई धातुओंका मल जल जाता है वैसेही नारी अमृतके समान अग्निमें पापको जला देती है ॥ ४३ ॥ शपथ आदिमें सत्ययुक्त धर्मात्मा मनुष शुद्ध होता है, और तपाये हुये लोहके पिण्डसे नहीं जलता है ॥४४॥ ऐसेही वह स्त्री पतिके साथ पतिसमेत कभी नहीं जलती है, अन्तरात्मा मरेहुये भर्ताके आत्माके साथ एकताको प्राप्तहो जाता है ॥४५॥ पतिके मरने

दह्यतेध्मायमानानांधातूनांचयथामलः ॥ तथानारीदहेत्पापंहुताशेह्यमृतोपमे ॥ ४३ ॥ दिव्यादौसत्ययुक्त श्चशुद्धोधर्मयुतोनरः ॥ यथानदह्यतेतप्तलोहपिण्डेनकर्हिचित् ॥ ४४ ॥ तथासापतिसंयुक्तादह्यते न कदाचन॥ अन्तरात्मात्मनाभर्तुर्मृतस्यैकत्वमाप्नुयात् ॥४५॥ यावच्चाग्नौमृतेपत्यौस्त्रीनात्मानंप्रदाहयेत् ॥ तावन्नमुच्य तेसाहिस्त्रीशरीरात्कथंचन ॥ ४६ ॥ तस्मात्सर्वप्रयत्नेन स्वपतिं सेवयेत्सदा ॥ कर्मणामनसावाचामृतेजीव तितद्गता ॥ ४७ ॥ मृते भर्त्तरियानारीसमारोहेद्धुताशनम् ॥ साऽरुन्धतीसमाभूत्वास्वर्गलोकेमहीयते ॥४८॥

पर जबतक स्त्री अपनी देहको नहीं जलाती है तबतक वह स्त्रीके शरीरसे कभी नहीं छूटती है ॥ ४६ ॥ अतः सब यत्नसे मन वाणी कर्मसे सदा जीते हुये अपने पतिकी सेवा करे और मरने पर उसके साथ जाय ॥४७॥ भर्ताके मरने पर जो स्त्री अग्निमें प्रवेश करती है वह अरुन्धतीके समान होकर स्वर्ग लोकमें आनन्द करती है ॥ ४८ ॥

तत्रसाभर्तृपरमास्तूयमानाप्सरोगणैः ॥ रमतेपतिनासार्धंयावदिन्द्राश्चतुर्दश ॥ ४९ ॥ मातृकंपैतृकंचैवय त्रसाचप्रदीयते ॥ कुलत्रयंपुनात्यत्रभर्तारंयानुगच्छति ॥५०॥ तिस्रःकोटयोऽर्द्धकोटीचयानिरोमाणिमानुषे ॥ तावत्कालंवसेत्स्वर्गेपतिनासहमोदते ॥ ५१ ॥ विमानेसूर्यसंकाशेक्रीडतेरमणेनसा ॥ यावदादित्यचन्द्रौचभ र्तृलोकेचिरंवसेत ॥ ५२ ॥ पुनश्चिरायुः साभूत्वाजायतेविमलेकुले ॥ पतिव्रतातुयानारीतमेवलभतेप तिम् ॥ ५३ ॥ याक्षणंदाहदुःखेनसुखमेताद्दशंत्यजेत् ॥ सामूढाजन्मपर्यंतंदह्यतेविरहाग्निना ॥ ५४ ॥

भर्तासे भी अधिक शोभायमान रूपवाली यह अप्सराओंके गणोंसे स्तुति की गई जब तक चौदह इन्द्र रहते हैं तबतक पतिके साथ विहार करती है ॥४९॥ माताके पिताके तथा जहाँ विवाही जाती है वहाँके, उन तीनों कुलोंको पतिके साथ जानेवाली स्त्री पवित्र करती है ॥५०॥ साढेतीन करोड़ जो रोम मनुष्य देहमें हैं उतने समय तक वह स्त्री स्वर्गलोकमें पतिके साथ आनन्द करती है ॥५१॥ सूर्यकी सी कान्तिवाले विमानमें पतिके साथ विहार करती है और जबतक सूर्य चन्द्रमा प्रकाश करते हैं तबतक भर्ता के लोकमें चिरकाल वास करती है ॥५२॥ फिर अधिक उम्र पाकर निर्मल कुलमें उत्पन्न होकर पतिव्रता नारी उसी पतिको प्राप्त होती है ॥५३॥ जो क्षण भरके दाहके दुःखसे ऐसा सुख छोड़ देती है वह मूर्खा जन्मपर्यन्त विरहकी अग्निसे तपाई जाती है ॥ ५४ ॥

अतः पतिको शिव जानकर उसके साथ शरीरको जलावे, हे गरुड़ ! यदि सती न हो, तो उसके शरीरको इस प्रकार जलावे ॥५५॥ आधा दग्ध होनेपर अथवा पूर्ण दग्ध होनेपर मृतकका मस्तक फोड़े, गृहस्थोंके मस्तकको काष्ठसे और यतियोंके मस्तकको श्रीफलसे फोड़े ॥५६॥ पितृलोकोंकी प्राप्तिके लिये उसके ब्रह्मरन्ध्रको भेदन करनेके बाद उसका पुत्र इस मन्त्रसे घी की आहुति दे

तस्मात्पतिंशिवंज्ञात्वासहतेनदहेत्तनुम् ॥ यदिनस्यात्सतीतार्क्ष्यतमेवंप्रदहेत्तदा ॥ ५५ ॥ अर्धेदग्धेऽथवापूर्णेस्फोटयेत्तस्यमस्तकम् ॥ गृहस्थानांतुकाष्ठेनयतीनांश्रीफलेनच ॥ ५६ ॥ प्राप्तयेपितृलोकानांभित्त्वातद्ब्रह्मरन्ध्रकम् ॥ आज्याहुतिंततोदद्यान्मन्त्रेणानेनतत्सुतः॥५७॥ अकारादिभिजातोसित्वदयंजायतांपुनः ॥ असौस्वर्गायलोकायस्वाहाज्वलतुपावकः ॥ ५८ ॥ एवमाज्याहुतिंदत्त्वातिलमिश्रांसमन्त्रकाम् ॥ रोदितव्यंततोगाढंतेनतस्यसुखं भवेत् ॥५९॥ दाहादनन्तरंकार्यंस्त्रीभिःस्नानंततः सुतैः ॥ तिलोदकंततोदद्यान्नामगोत्रोपकल्पितम् ॥ ६० ॥

॥५७॥ हे पावक ! तुम वासुदेवसे उत्पन्नहो तुमसे स्वर्गलोकमें जानेके लिये तेजोयम दिव्य शरीर उत्पन्न होता है, यह स्थूल देह तुम्हारेमें हविहोवे, अतः तुम प्रज्वलित होवो ॥५८॥ इस प्रकार तिलयुक्त मन्त्र सहित घीकी आहुति देकर खूब रोना चाहिये, उससे मृतकको सुख होता है ॥५९॥ दाहके बाद पहले स्त्रियोंको फिर पुत्रोंको स्नान करना चाहिये उसके नाम और गोत्रका उच्चारण करके

प्राशयेन्निम्बपत्राणिमृतकस्य गुणान्वदेत् ॥ स्त्रीजनोग्रेगृहंगच्छेत्पृष्ठतोनरसञ्चयः ॥ ६१ ॥ गृहेस्नानंपुनः कृत्वागोग्रासंचप्रदापयेत ॥ पत्रावल्यांचभुञ्जीयाद्गृहान्नंनैवभक्षयेत् ॥ ६२ ॥ मृतकस्थानमालिप्यदक्षिणाभिमुखंततः ॥ द्वादशाहकपर्यन्तंदीपंकुर्यादहर्निशम् ॥ ६३ ॥ सूर्येस्तमागतेताक्ष्यंश्मशानेवाचतुष्पथे ॥ दुग्धंचमृन्मयेपात्रेतोयंदद्याद्दिनत्रयम् ॥६४॥ अपक्वंमृन्मयंपात्रंक्षीरनीरिप्रपूरतम्॥काष्ठत्रयंगुणैर्बद्धंधृत्वामन्त्रंपठेदिमम् ॥६५॥ श्मशानानलदग्धोसिपरित्यक्तोसिबांन्धवैः ॥ इदंनीरमिदंक्षीरमत्रस्नाहिइदंपिब ॥ ६६ ॥

तिलाञ्जलि दे ॥६०॥ निम्ब (नीम) की पत्तियोंको दांतोंसे कतरे और मृतकके गुणोंको कहे, आगे स्त्रियां घरको जायँ पीछेसे मनुष्यों का समूह जाय ॥६१॥ घरमें फिर स्नान करके गोग्रास दे, पत्रावलीमें भोजन करे, घरका अन्न न खावे ॥६२॥ उसके बाद दक्षिणकी ओर मुख करके मृतकके स्थानको लीपे, फिर बारह दिन तक रातदिन दीपक जलावे ॥६३॥ हे गरुड़ ! सूर्यके अस्त होनेपर श्मशानमें अथवा चौराहेमें मिट्टीके पात्रमें दूध और जल तीन दिन तक दे ॥६४॥ दूध और जल भरा हुआ कच्चा मिट्टीका पात्र ले उसमें सूतसे बाँधी गई तीन लकड़ियां रखकर यह मन्त्र पढे ॥६५॥ श्मशानमें अग्निसे जलाये गये हो और बांधवोंसे त्याग किये गये हो, यह जल और यह दूध है यहाँ जलसे स्नान करो और दूधको पीवो ॥ ६६ ॥

अग्निहोत्र वाले पुरुषोंका चौथे दिन अस्थिसंचय करना चाहिये और अग्निहोत्ररहित पुरुषोंका तीसरे दिन अथवा दूसरे दिन विरोधके बिना करना योग्य है ॥६७॥ श्मशान भूमिमें जाकर स्नान करके शुद्ध होवे, ऊनका सूत लपेटकर पवित्री पहिने ॥६८॥ उसके बाद पुत्र श्मशान वासियोंके लिये "यमायत्वा" इस मन्त्रसे मांसबलि दे और तीन परिक्रमा करे ॥ ६९ ॥ हे गरुड !

चतुर्थेसञ्चयःकार्यःसाग्निकैश्चनिरग्निकैः ॥ तृतीयेह्निद्वितीयेवाकर्तव्यश्चाविरोधतः ॥६७॥ गत्वाश्मशानभूमिं चस्नानंकृत्वाशुचिर्भवेत् ॥ ऊर्णासूत्रंवेष्टयित्वापवित्रींपरिधायच ॥ ६८ ॥ दद्याच्छ्मशानवासिभ्यस्ततोमांसबलिंसुतः ॥ यमायत्वेतिमंत्रेणतिस्रःकुर्यात्परिक्रमाः ॥ ६९ ॥ ततोदुग्धेनचाभ्युक्ष्यचितास्थानंखगेश्वर ॥ जलेनसेचयेत्पश्चादुद्धरेदस्थिवृन्दकम् ॥ ७० ॥ कृत्वापलाशपत्रेषुक्षालयेद्दुग्धवारिभिः ॥ संस्थाप्यमृन्मये पात्रेश्राद्धंकुर्याद्यथाविधि ॥ ७१ ॥ त्रिकोणंस्थण्डिलंकृत्वागोमयेनोपलेपितम् ॥ दक्षिणाभिमुखोदिक्षु दद्यात्पिण्डत्रयंत्रिषु ॥ ७२ ॥

उसके बाद चिताके स्थानको दूधसे छिड़क कर बादमें जलसे छिड़के, तदनन्तर अस्थिसंचय करे ॥ ७० ॥ उन अस्थियोंको ढाकके पत्तेमें रखकर दूधसे धोवे, फिर जलसे धोवे, फिर मिट्टीके पात्रमें रख कर विधिपूर्वक श्राद्ध करे ॥७१॥ तिकोना स्थण्डिल करके गोबरसे लीपे, फिर दक्षिणाभिमुख होकर तीन दिशाओंमें तीन पिण्ड दे ॥ ७२ ॥

चिताकी भस्म एकत्रित कर वहाँ त्रिपादुका करके खुला हुआ घड़ा जल भरकर वहाँ स्थापित करे ॥७३॥ उसके बाद तण्डुलों को पकाकर दही और घी मिलाकर विधिपूर्वक मीठी बलि प्रेतके लिये दे ॥ ७४ ॥ और दश पांच कदम उत्तर दिशाकी ओर चले और हे गरुड़ ! वहाँ गड्ढा खोदकर हड्डियोंके पात्रको स्थापित करे ॥७५॥ उसके ऊपर दाहकी पीड़ाको नष्ट करनेवाले पिण्डको दे, गड्ढेसे उस पात्रको निकालकर जलाशय (नदी तालाब आदि) पर जाय ॥७६॥ वहाँ दूध और जलसे बार बार

पुञ्जीकृत्यचिताभस्मतत्रधृत्वात्रिपादुकाम् ॥ स्थापयेत्तत्रसजलमनाच्छाद्यमुखंघटम् ॥ ७३ ॥ ततस्त ण्डुलपाकेनदधिघृतसमन्वितम् ॥ बलिंप्रेतायसजलंदद्यान्मिष्टंयथाविधि ॥७४॥ पदानिदशपञ्चैवचोत्तरस्यां दिशिव्रजेत् ॥ गर्तंविधायतत्रास्थिपात्रंसंस्थापयेत्खग ॥ ७५ ॥ तस्योपरिततोदद्यात्पिंडंदाहार्तिनाशकम् ॥ गर्तादुद्धृत्यतत्पात्रंनीत्वागच्छेज्जलाशयम् ॥ ७६ ॥ तत्रप्रक्षालयेद्दुग्धजलादस्थि पुनः पुनः ॥ चर्चयेच्चन्दनेनाथकुंकुमेनविशेषतः ॥ ७७ ॥ धृत्वासंपुटकेतानिकृत्वाचहृदिमस्तके ॥ परिक्रम्यनमस्कृत्यगंगामध्येविनिक्षिपेत् ॥७८॥ अन्तर्दशाहंयस्यास्थिगंगातोयेनिमज्जति ॥ नतस्यपुनरावृत्तिर्ब्रह्मलोकात्कदाचन ॥७९॥

हड्डियोंको धोवे, फिर उनको चन्दनसे चर्चे और विशेषकर कुंकुमसे ॥७७॥ उनको संपुटमें रखकर हृदय और मस्तकमें लगावे, फिर परिक्रमा और नमस्कारकर गंगामें डाल दे ॥७८॥ दशदिनके अन्दर जिसकी हड्डियां गंगामें डूबती हैं उसकी ब्रह्मलोकसे कभी पुनरावृत्ति नहीं होती है ॥ ७९ ॥

जितने वर्षतक मनुष्यकी हड्डी गंगाजलमें स्थित रहती हैं उतने ही हजार वर्षतक स्वर्गलोकमें आनन्द करता है ॥ ८० ॥ गंगा जलकी लहरोंको छूकर पवन जब मृतकको छूता है तो उसका पाप शीघ्र ही नष्ट हो जाता है ॥८१॥ भगीरथ उग्रतपसे आरा धना करके अपने पूर्वजोंके उद्धारके लिये गंगादेवीको ब्रह्मलोकसे लाये ॥ ८२ ॥ गंगाका पवित्र करनेवाला यश तीनों लोकोंमें

यावदस्थिमनुष्यस्यगङ्गातोयेषुतिष्ठति ॥ तावद्वर्षसहस्राणिस्वर्गलोकेमहीयते ॥ ८० ॥ गङ्गाजलोर्मिसंस्पृश्यमृतकंपवनोयदा ॥ स्पृशतेपातकंतस्यसद्यएवविनश्यति ॥ ८१ ॥ आराध्यतपसोग्रेणगङ्गादेवींभगीरथः ॥ उद्धारार्थंपूर्वजानामानयेद्ब्रह्मलोकतः ॥८२॥ त्रिषुलोकेषुविख्यातंगंगायाः पावनंयशः ॥ यापुत्रान्सगरस्यैतान्भस्माख्यानन्यद्दिवम्॥८३॥पूर्वेवयसिपापानियेकृत्वामानवामृताः॥गङ्गायामस्थिपतनात्स्वर्गलोकंप्रयान्तिते ॥८४॥ कश्चिद्व्याधोमहारण्येसर्वप्राणिविहिंसकः॥ सिंहेननिहतोयावत्प्रयातिनरकालये॥८५॥

प्रसिद्ध है, जिस गंगाने सगरके भस्मावशेष साठ हजार पुत्रोंको स्वर्गमें पहुँचा दिया ॥ ८३ ॥ जो मनुष्य पहली अवस्थामें पाप करके मर गये हैं वे गंगामें हड्डी गिरनेसे स्वर्गलोकको जाते हैं ॥ ८४ ॥ सब प्राणियोंको मारनेवाला कोई व्याध बड़े भारी बनमें सिंह द्वारा गया जब नरकमें जा रहा था ॥ ८५ ॥

उसी समय उसकी हड्डी गंगामें गिरी और तब वह दिव्य विमानपर चढ़कर स्वर्गलोकको गया ॥ ८६ ॥ गंगा ही मुक्तिदायिनी हैं अतः हड्डियोंको सत्पुत्र गंगामें स्वयम् डाले और अस्थिसंचयके बाद दशगात्र करे ॥ ८७ ॥ कोई मनुष्य विदेशमें वनमें अथवा चोरोंके भयसे मर गया हो और उसकी देह न मिली हो तो जिस दिन उसके मरनेका वृत्तान्त सुने उसी दिन ॥८८॥

तावत्कालेनतस्यास्थिगङ्गायांपतितंतदा॥ दिव्यंविमानमारुह्यसगतोदेवमन्दिरम् ॥ ८६ ॥ अतःस्वयंमेव सत्पुत्रोगङ्गायामस्थिपातयेत् ॥ अस्थिसञ्चयनादूर्ध्वंदशगात्रंसमाचरेत् ॥ ८७ ॥ अथकश्चिद्विदेशेवावनेचौ रभयेमृतः ॥ नलब्धस्तस्यदेहश्चेच्छृणुयाद्यद्दिनेतदा ॥ ८८ ॥ दर्भपुत्तलकंकृत्वापूर्ववत्केवलंदहेत् ॥ तस्य भस्मसमादायगंगातोयेविनिक्षिपेत्॥८९॥दशगात्रादिकंकर्मतद्दिनादेवकारयेत्॥सएवदिवसोग्राह्यःश्राद्धेसां वत्सरादिके॥ ९० ॥ पूर्णेगर्भेमृतानारीविदार्यजठरंतदा ॥ बालंनिष्कास्यनिक्षिप्यभूमौतामेवदाहयेत् ॥९१॥

दर्भोंका पुतला बनाकर पहलेकी तरह अकेलेही को जलावे, उसकी भस्म लेकर गंगाके जलमें डाल दे ॥८९॥ और उसी दिनसे दशगात्रविधान आदि करे, सांवत्सरश्राद्ध आदिमें वही दिन लेना चाहिये ॥९०॥ यदि गर्भ पूरा होनेपर स्त्री मर जाय तो पेट चीरकर बालकको निकालकर भूमिमें गाड़ दे और स्त्रीका दाह करे ॥ ९१ ॥

गंगाके तीरपर जो बालक मरे उसको गंगाहीमें डाल दे, अन्य स्थानपर सत्ताईस महीने तकके बालकको भूमिमें गाडे ॥ ९२ ॥ सत्ताईस महीनेसे अधिक अवस्थाके बालकका दाह करे और उसकी हड्डियां गंगामें पहुँचावे, जलका घड़ा और बालकोंका भोजन देना चाहिये ॥ ९३ ॥ गर्भके नष्ट होनेपर क्रिया नहीं है और बालकके मरनेपर दूध देना चाहिये घड़ा और खीरका भोजन बालकके मरनेपर देना चाहिये ॥ ९४ ॥ कुमार बालकके मरनेपर कुमारोंको ही भोजन करावे और यदि व्रत समेत

गंगातीरेमृतंबालंगंगायामेवपातयेत्॥अन्यदेशेक्षिपेद्भूमौसप्तविंशतिमासजम्॥९२॥अतःपरंदहेत्तस्यगंगाया मस्थिनिक्षिपेत्॥जलकुम्भश्चदातव्यंबालानामेवभोजनम् ॥९३॥ गर्भेनष्टेक्रियानास्तिदुग्धंदेयंमृतेशिशौ॥ घटंचपायसंभोज्यंदद्याद्बालविपत्तिषु ॥ ९४ ॥ कुमारेचमृतेबालान्कुमारानेवभोजयेत् ॥ सबालान्भोजयेद्वि प्रान्पौगण्डेसव्रतेमृते ॥ ९५ ॥ मृतश्चपञ्चमादूर्ध्वमव्रतः सव्रतोपिवा ॥ पायसेनगुडेनापिपिंडान्दद्याद्दशक्रमा त् ॥ ९६ ॥ एकादशंद्वादशंचवृषोत्सर्गविधिंविना ॥ महादानविहीनंचपौगण्डकृत्यमाचरेत् ॥ ९७ ॥

पौगण्ड मरे तो बालकों समेत ब्राह्मणोंको भोजन करावे ॥९५॥ पांचवें वर्षके उपरांत यज्ञोपवीत समेत अथवा बिना यज्ञोपवीतके मरे तो उसको खीरसे अथवा गुड़से क्रमसे दश पिण्ड दे ॥९६॥ एकादशाह और द्वादशाह करे, वृषोत्सर्ग विधि न करे, शय्यादानादिक महादान बिना पौगण्ड कृत्य करे ॥ ९७ ॥

पिताके जीवित रहते हुये पौगण्ड अवस्था वालेका सपिण्डक नहीं होता है, अतः उसका बारह दिनतक एकोद्दिष्ट श्राद्ध करे ॥ ९८ ॥ स्त्रियों और शूद्रोंका यज्ञोपवीतके स्थानमें विवाह कहा गया है व्रत(यज्ञोपवीत) से पूर्व सब वर्णों की क्रिया अवस्थाके तुल्य होती है ॥ ९९ ॥ स्वल्प कर्मके प्रसंगसे और स्वल्प ही विषयके बन्धनसे, अवस्था और देहके स्वल्प होनेपर क्रिया भी स्वल्प ही इच्छित है ॥ १०० ॥ किशोर अवस्था तथा तरुण अवस्थामें शय्या और वृषोत्सर्ग आदि करे, पददान

जीवमानेचपितरिनपौगंडेसपिण्डनम् ॥ अतस्तस्यद्वादशाहन्येकोद्दिष्टंसमाचरेत् ॥ ९८ ॥ स्त्रीशूद्राणां विवाहस्तुव्रतस्थानेप्रकीर्तितः ॥ व्रतात्प्राक्सर्ववर्णानांवयस्तुल्याक्रियाभवेत् ॥ ९९ ॥ स्वल्पात्कर्मप्रसङ्गाच्च स्वल्पाद्विषयबंधनात् ॥ स्वल्पेवयसिदेहेचक्रियांस्वल्पामपीच्छति ॥ १०० ॥ किशोरेतरुणेकुर्याच्छय्या वृषमखादिकम् ॥ पददानंमहादानंगोदानमपिदापयेत् ॥ १०१ ॥ यतीनांचैवसर्वेषांनदाहोनोदकक्रिया ॥ दशगात्रादिकंतेषांनकर्तव्यंसुतादिभिः ॥ १०२ ॥ दंडग्रहणमात्रेणनरोनारायणोभवेत् ॥ त्रिदण्डग्रहणात्तेषांप्रेतत्वंनैवजायते ॥ १०३ ॥

महादान और गोदान भी करावे ॥ १०१ ॥ सब यतियोंका न तो दाह करना चाहिये और न उदकक्रिया ही, पुत्रादिकों द्वारा उनके दशगात्रादिक भी नहीं करने चाहिये ॥ १०२ ॥ दण्डग्रहणमात्रसे ही नर नारायणका रूप होजाता है, त्रिदण्डके ग्रहणसे उसका प्रेतत्व नहीं होता है ॥ १०३ ॥

ज्ञानी स्वरूप के अनुभव से सदा मुक्त होते हैं, इसलिये वे दिये हुये पिण्डोंकी आकाङ्क्षा नहीं रखते हैं ॥ १०४ ॥ इस कारण से उनके पिण्डदान आदि और जलदान आदि न करे, किन्तु पितृभक्ति से तीर्थश्राद्ध और गयाश्राद्ध करे ॥१०५॥ हे गरुड़! हंस, परमहंस, कुटीचक और बहूदक इन संन्यासियों को मरने पर भूमिमें स्थापित करे ॥ १०६ ॥ गंगा आदि नदियों के न

ज्ञानिनस्तुसदामुक्ताः स्वरूपानुभवेनहि ॥ अतस्तेतुप्रदत्तानांपिंडानांनैवकाङ्क्षिणः ॥ १०४ ॥ तस्मात्पिण्डादिकंतेषांनतुनोदकमाचरेत् ॥ तीर्थश्राद्धंगयाश्राद्धंपितृभक्त्यासमाचरेत् ॥ १०५ ॥ हंसंपरमहंसंचकुटीचकबहूदकौ ॥ एतान्संन्यासिनस्तार्क्ष्यपृथिव्यांस्थापयेन्मृतान् ॥ १०६ ॥ गंगादीनामभावेहिपृथिव्यांस्थापनंस्मृतम् ॥ यत्रसन्तिमहानद्यस्तदातास्वेवनिक्षिपेत् ॥ १०७ ॥ इति श्रीगरुडपुराणेदाहास्थिसंचयकर्मनिरूपणोनामदशमोऽध्यायः ॥ १० ॥ गरुडउवाच ॥ दशगात्रविधिंब्रूहिकृतेकिंसुकृतंभवेत् ॥ पुत्राभावेतुकःकुर्यादितिमेवदकेशव ॥ १ ॥

होनेपर पृथ्वीमें स्थापन कहा है और जहाँ महानदियाँ हैं वहाँ उन्हीं में प्रवाहित करदे ॥१०७॥ गरुडपुराण सारोद्धार हिन्दी-टीका में दसवां अध्याय समाप्त हुआ ॥ १० ॥ गरुड बोलेः--हे केशव ! दशगात्र की विधि कहिये, उसके करने से क्या सुकृत होता है और पुत्र के न होने पर कौन करे ? यह मुझको कहिये ॥ १ ॥

श्री भगवान् बोलेः-- हे गरुड ! सुनो, मैं तुमको दशगात्र की विधि कहता हूँ जिसको करके सत्पुत्र पिता के ऋण से छूट जाता है ॥२॥ पुत्र शोक को छोड़कर सतोगुणी धैर्यको धरकर पिता के पिण्ड आदिक करे, आंसुओं को न गिरावे ॥३॥ बांधवों द्वारा छोडे गये श्लेष्मा और आंसुओं को अवश होकर प्रेत खाता है, अतः निरर्थक शोक से रोना नहीं चाहिये ॥४॥ यदि मनुष्य

श्रीभगवानुवाच ॥ शृणुताक्ष्र्यप्रवक्ष्यामिदशगात्रविधिंतव ॥ यद्विधायचसत्पुत्रोमुच्यतेपैतृकादृणात् ॥ २ ॥ पुत्रःशोकंपरित्यज्यधृतिमास्थायसात्विकीम् ॥ पितुःपिण्डादिकंकुर्यादश्रुपातंनकारयेत् ॥ ३ ॥ श्लेष्माश्रु बान्धवैर्मुक्तंप्रेतोभुंक्तेयतोऽवशः ॥ अतोनरोदितव्यंहितदाशोकान्निरर्थकात् ॥४॥ यदिवर्षसहस्राणिशोचतेऽह र्निशंनरः ॥ तथापिनैवनिधनंगतोदृश्यतेकर्हिचित् ॥५॥ जातस्यहिध्रुवोमृत्युर्ध्रुवंजन्ममृतस्यच ॥ तस्माद परिहार्येर्थेनशोकंकारयेद्बुधः ॥ ६ ॥ नहिकश्चिदुपायोस्तिदैवोवामानुषोपिवा ॥ योहिमृत्युवशंप्राप्तो जन्तुः पुनरिहाव्रजेत् ॥ ७ ॥

हजार वर्ष तक रात दिन शोच करे, तो भी मरा हुआ कभी नहीं दिखाई देगा ॥५॥ उत्पन्न हुयेकी मृत्यु निश्चित है और मरे हुये का जन्म निश्चित है, इस कारण से नहीं निवारण करने योग्य प्रयोजन में समझदार व्यक्ति को शोक नहीं करना चाहिये ॥ ६ ॥ दैवी अथवा मानुषी ऐसा कोई उपाय नहीं है, जिससे मरा हुआ जीव फिर यहाँ आजावे ॥ ७ ॥

अवश्य होनेवाले दुःखों के दूर करने का उपाय यदि होता, तो राजा नल, रामचंद्र और युधिष्ठिर दुःखोंसे युक्त न होते ॥८॥ स्वप्न के शरीर से भी किसीका किसी के साथ यह अत्यन्त सहवास नहीं होता है और पृथक् जनोंका कहना ही क्या ॥९॥ जैसे कोई पथिक छाया का सहारा लेकर विश्राम करता है और विश्राम लेकर फिर चल देता है, ऐसे ही प्राणियोंका समागम है ॥१०॥ प्रातः

अवश्यंभाविभावानांप्रतीकारोभवेद्यदि ॥ तदादुःखैर्नयुज्येरन्नलरामयुधिष्ठिराः ॥ ८ ॥ नायमत्यन्तसंवासः कस्यचित्केनचित्सह॥अपिस्वप्नशरीरेणकिमुतान्यैः पृथग्जनैः ॥ ९ ॥ यथाहि पथिकः कश्चिच्छायामाश्रित्यविश्रमेत् ॥ विश्रम्यचपुनर्गच्छेत्तद्वद्भूतसमागमः ॥१०॥ यत्प्रातः संस्कृतं भोज्यं सायं तच्च विनश्यति ॥ तदन्नरससंपुष्टेकायेकानामनित्यता॥११॥ भैषज्यमेतद्दुःखस्यविचारंपरिचिन्त्यच॥अज्ञानप्रभवंशोकंत्यक्त्वा कुर्यात्क्रियांसुतः॥१२॥पुत्राभावेवधूःकुर्याद्भार्याभावेचसोदरः॥शिष्योवाब्राह्मणस्यैवसपिंडोवासमाचरेत्॥१३॥

काल जो भोजन योग्य वस्तु बनाई जाती है, वह सायंकाल नष्ट होजाती है उस अन्नके रससे पाले हुये शरीरमें कौनसी नित्यता है अर्थात् कोई नित्यता नहीं है ॥११॥ विचारको इस दुःख की औषधि समझकर अज्ञान से उत्पन्न हुये शोकका त्याग करके पुत्र क्रिया करे॥१२॥पुत्रके न होनेपर वधू करे और स्त्री भी न हो तो सगाभाई करे, अथवा ब्राह्मणकी क्रिया शिष्य करे अथवा सपिंड करे॥१३॥

हे गरुड ! मनुष्य के पुत्रहीन होने पर बडे भाई अथवा छोटे भाई के पुत्र पौत्र दशगात्र आदि करें ॥१४॥ एक पितासे उत्पन्न हुये भाइयों में यदि एक पुत्रवान् होतो उसी पुत्रसे सब पुत्रवाले हैं यह मनुने कहा है ॥१५॥ एक पुरुष के बहुत सी पत्नियाँ हों और उनमें से एकके पुत्र हो तो उस एक पुत्रसे सब पुत्रवती होती हैं ॥ १६ ॥ सब पुत्रहीनों को मित्र

ज्येष्ठस्यवाकनिष्ठस्यभ्रातुः पुत्रैश्चपौत्रकैः ॥ दशगात्रादिकंकार्यंपुत्रहीनेनरेखग ॥ १४ ॥ भ्रातॄणामेकजातानामेकश्चेत्पुत्रवान्भवेत् ॥ सर्वे ते तेनपुत्रेणपुत्रिणोमनुरब्रवीत् ॥ १५ ॥ पत्न्यश्चबह्वयएकस्यचैकापुत्रवती भवेत् ॥सर्वास्ताःपुत्रवत्यःस्युस्तेनैकेनसुतेनहि ॥१६॥ सर्वेषांपुत्रहीनानांमित्रः पिण्डं प्रदापयेत् ॥ क्रियालोपोनकर्तव्यः सर्वाभावेपुरोहितः ॥१७॥ स्त्रीवाथपुरुषः कश्चिदिष्टस्यकुरुतेक्रियाम् ॥ अनाथप्रेतसंस्कारात्कोटियज्ञफलंलभेत् ॥१८॥ पितुःपुत्रेणकर्तव्यंदशगात्रादिकंखग॥मृतेज्येष्ठेप्यतिस्नेहान्नकुर्वीतपितासुते ॥१९॥

पिण्डदान करे, क्रिया का लोप नहीं करना चाहिये, मित्र भी न हो तो पुरोहित पिण्डदान करे ॥ १७ ॥ कोई स्त्री अथवा पुरुष यदि इष्ट की क्रिया करे तो वह अनाथ प्रेत के संस्कार से कोटि यज्ञोंके फल को प्राप्त हो ॥ १८ ॥ हे गरुड ! पुत्र द्वारा पिता के दशगात्र आदि करने चाहिये ज्येष्ठ पुत्रके मरने पर अति स्नेह से पिता न करे ॥ १९ ॥

यदि बहुतसे पुत्र हों तो विधि एक पुत्र करे अर्थात् दशगात्र, सपिंडी तथा सोलह श्राद्ध इन सभीको एकही करे ॥२०॥ धनके विभाग होजाने पर भी एकही को करने चाहिये और जिनमें विभाग होगया हो उनको सांवत्सर श्राद्ध आदि पृथक् करने चाहिये ॥२१॥ अतः ज्येष्ठ पुत्र भक्तिसे दशगात्र करे इन गात्रोंके करनेमें एकबार भोजन करे, भूमिमें शयन करे और सदा शुद्ध तथा ब्रह्मके ध्यान

बहवोपियदापुत्राविधिमेकः समाचरेत् ॥ दशगात्रंसपिंडत्वं श्राद्धान्यन्यानिषोडश॥२०॥एकेनैवतुकार्याणिस विभक्तधनेष्वपि ॥ विभक्तैस्तुपृथक्कार्यंश्राद्धंसांवत्सरादिकम् ॥ २१ ॥ तस्माज्ज्येष्ठःसुतोभक्त्यादशगात्रंस माचरेत् ॥ एकभोजीभूमिशायीभूत्वाब्रह्मपरः शुचिः ॥२२॥ सप्तवारंपरिक्रम्यधरणीयत्फलंलभेत् ॥ क्रियां कृत्वापितुर्मातुस्तत्फलंलभतेसुतः ॥ २३ ॥ आरभ्यदशगात्रंचयावद्वैवार्षिकंभवेत् ॥ तावत्पुत्रः क्रियांकुर्वन् गयाश्राद्धफलंलभेत्॥२४॥कूपेतडागेवारामेतीर्थेदेवालयेपिवा॥गत्वामध्यमयामेतुस्नानंकुर्यादमन्त्रकम्॥२५॥

में तत्पर रहे ॥२२॥ सातबार पृथ्वी की परिक्रमा करने से जो फल प्राप्त होता है, वह फल माता पिता की क्रिया करने से पुत्रको प्राप्त होता है ॥२३॥ दशगात्रोंको प्रारम्भ कर जब तक वार्षिक हो तब तक क्रियाको करता हुआ पुत्र गयाश्राद्धके फलको प्राप्त होता है ॥ २४ ॥ कुए में तालाब में अथवा बगीचेमें, तीर्थ और देवालय में जाकर मध्यम पहर में विना मन्त्र स्नान करे ॥ २५ ॥

शुद्ध होकर वृक्षके मूलमें दक्षिणाभिमुख स्थित हो वहाँ वेदिका बनावे और गोबरसे लीपे ॥२६॥ उस वेदिकामें पत्तेपर कुशाके विश्वामित्रको स्थापित करे, पाद्य आदिसे पूजाकर "अतसी पुष्पसंकाशम्" इत्यादि मंत्रको पढकर प्रणाम करे ॥ २७ ॥ उसके बाद उनके आगे पिण्डके लिये कुशका आसन डाले, उसके ऊपर नाम गोत्रका उच्चारण कर पिण्ड रखे ॥२८॥ चावलोंके पाकसे अथवा

शुचिर्भूत्वावृक्षमूलेदक्षिणाभिमुखः स्थितः ॥ कुर्याच्चवेदिकांतत्रगोमयेनोपलिप्यताम् ॥२६॥ तस्यांपर्णेदर्भमयंस्थापयेत्कौशिकंद्विजम् ॥ तं पाद्यादिभिरभ्यर्च्यप्रणमेदतसीतिच ॥२७॥ तदग्रेचततोदत्त्वापिंडार्थंकौशमासनम् ॥ तस्योपरिततः पिण्डंनामगोत्रोपकल्पितम् ॥ २८ ॥ दद्यात्तण्डुलपाकेनयवपिष्टेनवासुतः ॥ उशीरंचन्दनंभृंगराजपुष्पंनिवेदयेत् ॥ धूपं दीपं च नैवेद्यंमुखवासंचदक्षिणाम् ॥२९॥ काकान्नंपयसोःपात्रेवर्धमानजलांजलीन् ॥ प्रेतायामुकनाम्नेचमद्दत्तमुपतिष्ठतु ॥ ३० ॥

जौ के आटे से पुत्र पिण्ड बनावे, उसके बाद उशीर, चन्दन और मोगरे के फूल उसके ऊपर चढावे, फिर धूप, दीप, नैवेद्य मुखवास और दक्षिणा उसके सामने रखे ॥२९॥ दूध और पानी के पात्र में काक के लिये अन्न रखे और वर्द्धमान जलकी अञ्जलि दे और कहे कि "अमुकनाम्ने प्रेताय मद्दत्तम् उपतिष्ठतु" अर्थात् अमुक नाम प्रेत के लिये मेरा दिया हुआ प्राप्त हो ॥ ३० ॥

अन्न, वस्त्र और जल अथवा अन्य वस्तु जो प्रेत शब्द से दीजाती है वह मृतकको अनंत फल देनेवाली होती है ॥३१॥ अतः आदि के दिनसे लगाकर सपिंडी विधानसे पहले तक स्त्री को और पुरुष को प्रेत शब्दका उच्चारण करे ॥३२॥ पहले दिन जो पिण्ड विधि पूर्वक दिया जाता है उसी विधिसे अन्नसे नौ पिण्ड दे॥३३॥नौवें दिन सब सपिण्ड लोग मृतकके स्वर्गकी कामनासे तैलाभ्यंग करें

अन्नंवस्त्रंजलंद्रव्यमन्यद्वादीयतेचयत् ॥ प्रेतशब्देनयद्दत्तंमृतस्यानन्त्यदायकम् ॥ ३१ ॥ तस्मादादिदिनादूर्ध्वंप्राक्सपिण्डीविधानतः ॥ योषितःपुरुषस्यापिप्रेतशब्दंसमुच्चरेत् ॥ ३२ ॥ प्रथमेहनियत्पिण्डोदीयतेविधिपूर्वकम् ॥ तेनैवविधिनान्नेननवपिण्डान्प्रदापयेत ॥ ३३ ॥ नवमेदिवसेचैवसपिण्डःसकलैर्जनैः ॥ तैलाभ्यङ्गःप्रकर्तव्योमृतकस्वर्गकाम्यया ॥३४॥ बहिःस्नात्वागृहीत्वाचदूर्वालाजसमान्विताः ॥ अग्रतः प्रमदांकृत्वा समागच्छेन्मृतालयम् ॥ ३५ ॥ दूर्वावत्कुलवृद्धिस्तेलाजाइवविकासता ॥ एवमुक्त्वात्यजेद्गेहेलाजान्दूर्वासमन्वितान् ॥ ३६ ॥ दशमेहनिमांसेनपिण्डंदद्यात्खगेश्वर ॥ माषेणतन्निषेधाद्वाकलौनपलपैतृकम् ॥ ३७ ॥

अर्थात् सब तेल लगावें ॥३४॥ बाहर स्नान करके खीलों समेत दूब लेकर आगे स्त्रियोंको करके मृतकके घरमें जावे ॥३५॥ दूब के समान तेरे कुलकी वृद्धि हो और खीलोंके समान विकास हो, ऐसे कहकर उसके घरमें दूब समेत खीलें डाल दे ॥३६॥ हे गरुड ! दशवें दिन मांसके पिण्डदे, अथवा मांसका कलियुग में निषेध है तो उड़दके पिण्ड दे, कारण यह है कि कलियुग में पितरोंको मांस

के पिण्ड नहीं दिये जाते हैं ॥३७॥ दशवें दिन सब बांधव मुंडन करावे और क्रिया करनेवाले पुत्रका भी फिर मुंडन करावे ॥३८॥ दशदिन तक एक ब्राह्मणको मिष्टान्न भोजन करावे और हाथ जोड हरिका ध्यान करके प्रेतकी मुक्तिकी प्रार्थना करे॥३९॥ अलसी के फूल के समान कांतिवाले, पीतवस्त्र धारी, अविनाशी भगवान् गोविन्द को जो नमस्कार करते हैं उनको भय नहीं होता है

दशमेदिवसेक्षौरंबान्धवानांचमुंडनम् ॥ क्रियाकर्तुःसुतस्यापिपुनर्मुण्डनमाचरेत् ॥ ३८ ॥ मिष्टान्नंभोजयेदेकंदिनेषुदशसुद्विजम् ॥ प्रार्थयेत्प्रेतमुक्तिंचहरिंध्यात्वाकृताञ्जलिः ॥३९॥ अतसीपुष्पसंकाशंपीतवाससमच्युतम् ॥ येनमस्यन्तिगोविन्दंनतेषांविद्यतेभयम् ॥४०॥ अनादिनिधनोदेवःशंखचक्रगदाधरः ॥ अक्षय्यःपुण्डरीकाक्षःप्रेतमोक्षप्रदोभव ॥४१॥ इतिसंप्रार्थनामन्त्रश्राद्धान्तेप्रत्यहंपठेत् ॥ स्नात्वागत्वागृहेदत्त्वागोग्रासंभोजनंचरेत् ॥ ४२ ॥ इति श्रीगरुडपुराणेसारोद्धारेदशगात्रविधिनिरूपणनामैकादशोऽध्यायः ॥ ११ ॥

॥४०॥ आदि और अन्तसे रहित, शंख चक्र तथा गदाको धारण किये हुये,अक्षय्य,कमलनेत्र भगवान् विष्णु प्रेतको मुक्ति देनेवाले होवें ॥४१॥ इस प्रार्थना के मन्त्र को श्राद्ध के अन्त में प्रतिदिन पढे, स्नान कर घरमें जाकर और गोग्रास देकर आप भोजन करे ॥ ४२ ॥ गरुड पुराण सारोद्धार हिन्दी टीका में एकादश अध्याय समाप्त हुआ ॥ ११ ॥

गरुड बोलेः--हे सुरेश्वर ! एकादश दिन की भी विधि कहिये, हे जगदीश्वर ! वृषोत्सर्ग विधान भी मुझको बताइये ॥ १ ॥ श्री भगवान् बोलेः--ग्यारहवें दिन प्रातःकाल ही जलाशय पर जाना चाहिये और सब और्ध्वदेहिक क्रिया प्रयत्नसे करनी चाहिये ॥२॥और वेद शास्त्रमें परायण ब्राह्मणको निमन्त्रित करे, हाथ जोड़ नमस्कार करके प्रेतकी मुक्तिकी प्रार्थना करे॥३॥स्नान संध्या

॥ गरुडउवाच ॥ एकादशदिनस्यापिविधिंब्रूहिसुरेश्वर ॥ वृषोत्सर्गविधानंचवदमेजगदीश्वर ॥१॥ श्रीभगवानुवाच ॥ एकादशेऽह्निगन्तव्यंप्रातरेव जलाशये ॥ और्ध्वदेहिक्रियासर्वाकरणीयाप्रयत्नतः ॥२॥ निमन्त्रयेद्ब्राह्मणांश्चवेदशास्त्रपरायणान् ॥ प्रार्थयेत्प्रेतमुक्तिंचनमस्कृत्यकृताञ्जलिः ॥३॥ स्नानसंध्यादिकंकृत्वाह्याचार्योऽपिशुचिर्भवेत्॥विधानंविधिवत्कुर्यादेकादशदिनोचितम्॥४॥अमन्त्रंकारयेच्छ्राद्धंदशाहंनामगोत्रतः॥ एकादशेह्निप्रेतस्यदद्यात्पिण्डंसमन्त्रकम् ॥ ५ ॥ सौवर्णंकारयेद्विष्णुंब्रह्माणंरौप्यकंतथा ॥ रुद्रस्ताम्रमयःकार्योयमोलोहमयःखग ॥ ६ ॥

आदि करके आचार्य भी शुद्ध हो और एकादश दिनका जो विधान है उसको विधिवत् करे ॥४॥ और बिना मन्त्रके नामगोत्र का उच्चारण कर दशाह श्राद्ध करे और ग्यारहवें दिन प्रेत को मन्त्र सहित पिण्ड दान दे॥५॥ हे गरुड ! विष्णुकी मूर्ति स्वर्णकी बनवावे और ब्रह्माकी चाँदीकी, रुद्रकी मूर्ति तांबेकी और यमकी मूर्ति लोहेकी बनवावे ॥ ६ ॥ पश्चिम दिशामें गंगाजल समेत

विष्णु का कलश रखे, उसके ऊपर पीले कपडेसे लपेट कर विष्णुकी मूर्ति स्थापित करे ॥७॥ पूर्व दिशामें दूध और जलसमेत ब्रह्मा का कलश रखे, उसपर सफेद कपडेसे लपेटकर ब्रह्माकी मूर्ति स्थापित करे ॥८॥ उत्तर दिशामें शहद और घी से भरे हुये रुद्रके कलशको रखे, उसके ऊपर लालवस्त्र से लपेटकर रुद्रकी मूर्ति स्थापित करे ॥९॥ दक्षिण दिशा में इन्द्र के जलसे भरे

पश्चिमेविष्णुकलशंगंगोदकसमन्वितम् ॥ तस्योपरिन्यसेद्विष्णुंपीतवस्त्रेणवेष्टितम् ॥७॥ पूर्वेतुब्रह्मकलशंक्षीरोदकसमन्वितम्॥ब्रह्माणंस्थापयेत्तत्रश्वेतवस्त्रेणवेष्टितम् ॥८॥ उत्तरस्यांरुद्रकुम्भंपूरितंमधुसर्पिषा ॥ श्रीरुद्रंस्थापयेत्तत्ररक्तवस्त्रेणवेष्टितम् ॥९॥ दक्षिणस्यांयमघटमिन्द्रोदकसमन्वितम् ॥ कृष्णवस्त्रेणसंवेष्ट्यतस्योपरियमंन्यसेत् ॥ १० ॥ मध्येतुमण्डलंकृत्वास्थापयेत्कौशिकंसुतः ॥ दक्षिणाभिमुखोभूत्वाऽपसव्येनचतर्पयेत् ॥ ११ ॥ विष्णुंविधिंशिवंधर्मंवेदमन्त्रैश्चतर्पयेत् ॥ होमंकृत्वाचरेत्पश्चाच्छ्राद्धंदशघटादिकम् ॥ १२ ॥

हुये यम के घडे को रखे, उसके ऊपर काले कपड़े से लपेटकर यम की मूर्ति स्थापित करे ॥ १० ॥ मध्यमें मण्डल करके पुत्र कौशिक को स्थापित करे और दक्षिणाभिमुख होकर अपसव्य से तर्पण करे ॥११॥ विष्णु, ब्रह्मा, शिव और धर्म इनको वेदके मन्त्रोंसे तर्पित करे और होम करके बाद में दश घट आदि श्राद्ध करे ॥ १२ ॥

फिर पितरोंको तारनेके लिये गोदान दे, "हे माधव! मेरे द्वारा दी हुई यह गौ तुम्हारी प्रसन्नताके लिये हो" ॥१३॥ और उस मृतकके भोगे हुये वस्त्र, भूषण तथा वाहन, घी से भरा हुआ कांसेका पात्र, सप्तधान्य तथा उसकी प्यारी वस्तु ॥ १४ ॥ तिल आदि आठ महादान और जो अन्तकालमें किया गया हो, इन सबको शय्याके समीप रखकर दान करे ॥१५॥ ब्राह्मणके चरण

गोदानंचततोदद्यात्पितृणांतारणायवै ॥ गौरेषाहिमयादत्ताप्रीतयेतेऽस्तुमाधव ॥१३॥ उपभुक्तंतुतस्यासीद्वस्त्रभूषणवाहनम्॥घृतपूर्णकांस्यपात्रंसप्तधान्यंतदीप्सितम् ॥१४॥ तिलाद्यष्टमहादानमन्तकालेनचेत्कृतम्॥ शय्यासमीपेधृत्वैतद्दानंतस्याः प्रदापयेत् ॥ १५ ॥ प्रक्षाल्यविप्रचरणौपूजयेदम्बरादिभिः॥सिद्धान्नंतस्यदातव्यंमोदकाऽपूपकाः पयः ॥ १६ ॥स्थापयेत्पुरुषंहैमंशय्योपरितदासुतः ॥ पूजयित्वाप्रदातव्यामृतशय्याथोदिता ॥ १७ ॥ प्रेतस्यप्रतिमायुक्तासर्वोपकरणैर्वृता ॥ प्रेतशय्यामयाह्येषातुभ्यंविप्रनिवेदिता ॥ १८ ॥

धोकर वस्त्र आदिसे पूजन करे और लड्डू पुआ आदि सिद्ध अन्न तथा दूध उसको देना चाहिये ॥१६॥ उस समय पुत्र शय्य के ऊपर स्वर्ण के पुरुष को स्थापित करे, उसका पूजन करके पूर्व कथनानुसार मृतशय्या देनी चाहिये ॥ १७ ॥ हे विप्र! प्रेत की प्रतिमा से युक्त, सम्पूर्ण सामग्री समेत यह प्रेत शय्या मैंने आपको निवेदित की ॥ १८ ॥

इस प्रकार कुटुम्बी आचार्य के लिये देनी चाहिये, उसके बाद प्रदक्षिणा करके नमस्कार कर विसर्जन करे ॥ १९ ॥ इस प्रकार शय्या देनेसे और नवकादि श्राद्ध से और वृषोत्सर्ग के विधानसे प्रेत परम गति को प्राप्त होता है ॥२०॥ ग्यारहवें दिन विधि से वृषोत्सर्ग करे, हीन अंगवाले को, रोगी को तथा बच्चे को छोडकर चिह्नयुक्त करे ॥ २१ ॥ लाल नेत्र, पिङ्गल वर्ण, लाल

इत्याचार्यायदातव्याब्राह्मणायकुटुंबिने ॥ ततःप्रदक्षिणीकृत्यप्रणिपत्यविसर्जयेत् ॥ १९ ॥ एवंशय्याप्रदानेनश्राद्धेननवकादिना ॥ वृषोत्सर्गविधानेनप्रेतोयातिपरांगतिम् ॥ २०॥ एकादशेऽह्निविधिनावृषोत्सर्गंसमाचरेत् ॥ हीनांगंरोगिणंबालंत्यक्त्वाकुर्यात्सलक्षणम् ॥२१॥ रक्ताक्षःपिंगलोयस्तुरक्तःशृंगेगलेखुरे ॥ श्वेतोदरःकृष्णपृष्ठोब्राह्मणस्यविधीयते ॥२२॥ सुस्निग्धवर्णोयोरक्तःक्षत्रियस्यविधीयते॥पीतवर्णश्चवैश्यस्यकृष्णःशूद्रस्यशस्यते॥२३॥यस्तुसर्वाङ्गपिंगःस्याच्छ्वेतः पुच्छेपदेषुच॥सपिंगोवृषइत्याहुः पितृणांप्रीतिवर्द्धनः ॥२४॥

सींग गला तथा खुरवाला, सफेद पेट और काली पीठवाला वृष ब्राह्मण के लिये कहा है ॥ २२ ॥ अच्छा चिकना, लालरंग का क्षत्रिय के लिये कहा है, पीले रंग का वैश्य के लिये और शूद्र के लिये काला कहा है ॥ २३ ॥ जिसका सब अङ्ग पिङ्ग वर्ण हो और पूंछ तथा पाँव सफेद हो उसको पितरों की प्रीति बढाने वाला पिङ्ग वृष कहते हैं ॥ २४ ॥

जिस बैलके पांव, मुख और पूँछ सफेद हों और लाखके रसके समान देहका रंग हो, उसको नील कहते हैं ॥२५॥ जो रंगमें लाल हो और जिसका मुख तथा पूँछ पांडुवर्ण के हों, खुर तथा सींग पिङ्गल वर्णके हों, उसको रक्तनील कहते हैं ॥२६॥ जिसका सम्पूर्ण अङ्ग एक वर्णका हो तथा खुर और पूँछमें पिङ्गवर्ण हो, उसको नील पिङ्ग कहते हैं, वह पुरुषोंका उद्धार करनेवाला होता है

चरणास्तुमुखंपुच्छंयस्यश्वेतानिगोपतेः ॥ लाक्षारससवर्णोयस्सनीलइतिकीर्तितः ॥२५॥ लोहितोयस्तुवर्णेन मुखेपुच्छेचपाण्डुरः॥ पिंगःखुरविषाणाभ्यांरक्तनीलोनिगद्यते ॥२६॥ सर्वांगेष्वेकवर्णोयःपिंगःपुच्छेखुरेषुयः ॥ तंनीलपिंगमित्याहुः पूर्वजोद्धारकारकम् ॥ २७ ॥ पारावतसवर्णस्तुललाटेतिलकान्वितः॥तंबभ्रुनीलमित्याहुःपूर्णसर्वांगशोभनम् ॥२८॥ नीलःसर्वशरीरेषुरक्तश्चनयनद्वये ॥ तमप्याहुर्महानीलंनीलःपञ्चविधः स्मृतः॥ ॥ २९ ॥ अवश्यमेवभोक्तव्योनसधार्योगृहेभवेत् ॥ तदर्थमेषाचरतिलोकेगाथापुरातनी ॥ ३० ॥

॥२७॥ जिसका कबूतर जैसा रंग हो और माथेमें जिसके तिलक हो, उसको पूर्ण सर्वाङ्गशोभन बभ्रुनील कहते हैं ॥ २८ ॥ जिसका सम्पूर्ण शरीर नीला हो और दोनों आंखें लाल हों, उसको महानील कहते हैं, नील पांच प्रकार का होता है ॥२९॥ वह अवश्य ही छोडने योग्य होता है, घरमें रखने योग्य नहीं होता है, उसके लिये पुरानी गाथा लोकमें प्रचलित हो रही है ॥३०॥

बहुतसे पुत्रोंकी इच्छा करनी योग्य है, इसलिये कि उनमेंसे एक भी गया को जाय, गौरी कन्याका विवाह करे अथवा नील बैलको छोडे ॥३१॥ वही पुत्र मानने योग्य है जो वृषोत्सर्ग करे और गयामें श्राद्ध करे, अन्य विष्ठाके समान हैं ॥३२॥ जिसके जो कोई पूर्वज रौरवादि नरकोंमें पचाये जाते हैं, उन सभी इक्कीस पीढी तकके पूर्वजोंको वृषोत्सर्गसे तार देता है ॥३३॥ स्वर्ग

एष्टव्याबहवःपुत्रायद्येकोपिगयांव्रजेत्॥गौरींविवाहयेत्कन्यांनीलंवावृषमुत्सृजेत् ॥३१॥ सएवपुत्रोमन्तव्यो वृषोत्सर्गंतुयश्चरेत् ॥ गयायांश्राद्धदाताचयोऽन्योविष्ठासमः किल॥३२॥रौरवादिषुयेकेचित्पच्यन्तेयस्यपूर्वजाः ॥ वृषोत्सर्गेणतान्सर्वांस्तारयेदेकविंशतिम् ॥ ३३ ॥ वृषोत्सर्गंकिलेच्छन्तिपितरःस्वर्गताअपि॥अस्मद्वंशेसुतःकोपिवृषोत्सर्गंकरिष्यति॥३४॥ तदुत्सर्गाद्वयंसर्वेयास्यामःपरमांगतिम्॥ सर्वयज्ञेषुचास्माकंवृषयज्ञोहिमुक्तिदः ॥ ३५ ॥ तस्मात्पितृविमुक्त्यर्थंवृषयज्ञंसमाचरेत ॥ यथोक्तेनविधानेनकुर्यात्सर्वप्रयत्नतः ॥ ३६ ॥

में गये हुये भी पितर निश्चय वृषोत्सर्ग की इच्छा करते हैं कि हमारे वंश में कोई पुरुष वृषोत्सर्ग करेगा ॥ ३४ ॥ उसके वृषोत्सर्ग से हम सब परमगति को प्राप्त होंगे, सब यज्ञों में वृषयज्ञ हमको निश्चय मुक्ति देनेवाला है ॥ ३५ ॥ अतः पितरों की मुक्ति के लिये यथोक्त विधान से सब यत्न पूर्वक वृषयज्ञ करे ॥ ३६ ॥

ग्रहोंका स्थापन करके उनके मन्त्रोंसे उनका पूजन करे और शास्त्रके अनुसार होम करे,तथा आतुर वृषका पूजन करे ॥ ३७ ॥ बछडा और बछडीको लाकर उन दोनोंके कंकणबांधे और विवाहके विधानसे स्तम्भ गाडे ॥३८॥ वृषको और बछियाको रुद्र कुम्भके जलसे स्नान करावे, फिर गन्ध और मालासे पूजन कर प्रदक्षिणा करावे ॥३९॥ दाहिनी ओर त्रिशूल और बांई ओर चक्र लगावे,

ग्रहाणांस्थापनंकृत्वातत्तन्मन्त्रैश्चपूजनम् ॥ होमंकुर्याद्यथाशास्त्रंपूजयेद्वृषमातुरः ॥ ३७ ॥ वत्संवत्सींसमानाय्यबध्नीयात्कंकणंतयोः ॥ वैवाह्येनविधानेनस्तम्भमारोपयेत्तदा ॥ ३८ ॥ स्नापयेच्चवृषंवत्सींरुद्रकुम्भोदकेनच ॥ गंधमाल्यैश्चसंपूज्यकारयेच्चप्रदक्षिणाम् ॥३९॥ त्रिशूलंदक्षिणेपार्श्वेवामेचक्रंप्रदापयेत् ॥तंविमुच्याञ्जलिंबद्ध्वापठेन्मन्त्रमिमंसुतः ॥ ४० ॥ धर्मस्त्वंवृषरूपेणब्रह्मणानिर्मितः पुरा ॥ तवोत्सर्गप्रदानेनतारयस्व भवार्णवात् ॥४१॥ इतिमन्त्रान्नमस्कृत्यवत्संवत्सींसमुत्सृजेत् ॥ वरदोहंसदातस्यप्रेतमोक्षंददामिच ॥४२॥ तस्मादेषप्रकर्त्तव्यस्तत्फलंजीवितोभवेत् ॥ अपुत्रस्तुस्वयंकृत्वासुखंयातिपरांगतिम् ॥ ४३ ॥

उसको छोड़कर हाथ जोड पुत्र यह मन्त्र पढे ॥४०॥ तुम धर्म हो, पहले ब्रह्मा द्वारा बैलके रूपमें बनाये गये हो, तुम्हारे उत्सर्ग प्रदान द्वारा भवरूपी समुद्रसे उद्धार करो ॥४१॥ इस मन्त्रसे नमस्कार कर बछडा और बछियाको छोड दे, मैं उसको वरदेनेवाला हूँ और प्रेतको मोक्ष देता हूँ ॥४२॥ अतः यह (वृषोत्सर्ग) करना चाहिये, इसका फल जीवित रहते भी होता है पुत्र रहित पुरुष

आप ही इस विधिको करके सुखपूर्वक परमगतिको प्राप्त होता है ॥४३॥ कार्तिक आदि शुभ महिनेमें सूर्यके उत्तरायण होने पर शुक्ल पक्षमें अथवा कृष्णपक्षमें तथा द्वादशी आदि तिथियोंमें ॥४४॥ सूर्य चन्द्रके ग्रहणमें, पवित्र तीर्थमें दोनों अयनोंमें और दोनों विषुवत् में, वृषोत्सर्गकरे ॥ ४५ ॥ शुभ लग्नमें तथा शुभ मुहूर्तमें, शुद्ध देशमें सावधान हो विधिको जाननेवाले शुभ लक्षण

कार्तिकादौशुभेमासेचोत्तरायणगेरवौ ॥ शुक्लपक्षेऽथवाकृष्णेद्वादश्यादितिथौतथा ॥ ४४ ॥ ग्रहणेद्वितयेचैव पुण्यतीर्थेऽयनद्वये ॥ विषुवद्वितयेचापिवृषोत्सर्गंसमाचरेत् ॥ ४५ ॥ शुभलग्नेमुहूर्तेचशुचौदेशेसमाहितः ॥ ब्राह्मणंतुसमाहूय विधिज्ञंशुभलक्षणम् ॥ ४६ ॥ जपैर्होमैस्तथादानैः प्रकुर्याद्देहशोधनम् ॥ पूर्ववत्सकलंकृत्यं कुर्याद्धोमादिलक्षणम् ॥ ४७ ॥ शालग्रामंचसंस्थाप्यवैष्णवंश्राद्धमाचरेत् ॥ आत्मश्राद्धंततः कुर्याद्दद्याद्दानं द्विजन्मने ॥ ४८ ॥ एवं यः कुरुतेपक्षिन्नपुत्रश्चापिपुत्रवान् ॥ सर्वकामफलंतस्यवृषोत्सर्गात्प्रजायते ॥ ४९ ॥

ब्राह्मण को बुलाकर ॥ ४६ ॥ जप, होम तथा दान से देह का शोधन करे और पहले की तरह होमादि लक्षण सब विधि करे ॥४७॥ शालग्राम को स्थापित कर वैष्णव श्राद्ध करे, उसके बाद अपना श्राद्ध करे और ब्राह्मणके लिये दान दे ॥ ४८ ॥ हे पक्षिन् ! पुत्रवान् तथा पुत्ररहित जो इस प्रकार करता है उसको वृषोत्सर्ग से सब कामना के फल मिलते हैं ॥ ४९ ॥

अग्निहोत्र आदि यज्ञों से तथा नानाप्रकार के दानों से भी उस गति को नहीं पाता है, जिसको वृषोत्सर्ग से प्राप्त होता है ॥ ५० ॥ बाल्यावस्था कुमार और पौगण्डावस्था में, यौवन तथा बुढापे में किया हुआ पाप वृषोत्सर्ग से दूर हो जाता है, इसमें संदेह नहीं है ॥५१॥मित्रद्रोही,कृतघ्न,स्वर्ण चुरानेवाला,मद्य पीनेवाला, गुरुकी स्त्रीसे व्यभिचारकरनेवाला और ब्रह्महत्यारा

अग्निहोत्रादिभिर्यज्ञैर्दानैश्चविविधैरपि॥नतांगतिमवाप्नोतिवृषोत्सर्गेणयांलभेत् ॥ ५० ॥ बाल्येकौमारेपौगण्डेयौवनेवार्धकेकृतम्॥यत्पापंतद्विनश्येतवृषोत्सर्गान्नसंशयः ॥५१॥ मित्रद्रोहीकृतघ्नश्चसुरापोगुरुतल्पगः॥ ब्रह्महाहेमहारीचवृषोत्सर्गात्प्रमुच्यते ॥ ५२ ॥ तस्मात्सर्वप्रयत्नेनवृषयज्ञंसमाचरेत् ॥ वृषोत्सर्गसमंपुण्यं नास्तिताक्ष्यंजगत्त्रये ॥ ५३ ॥ पतिपुत्रवतीनारीद्वयोरग्रेमृतायदि ॥ वृषोत्सर्गंनैवकुर्याद्दद्याद्गांचपयस्विनीम् ॥ ५४ ॥ वृषभंवाहयेद्यस्तुस्कन्धेपृष्ठे च खेचर ॥ स पतेन्नरकेघोरेयावदाभूतसंप्लवम् ॥५५॥

ये सब वृषोत्सर्ग द्वारा पापोंसे मुक्त हो जाते हैं ॥ ५२ ॥ अतः सब प्रयत्नोंसे वृषोत्सर्ग करना चाहिये, हे गरुड ! तीनों लोकोंमें वृषोत्सर्गके समान पुण्य नहीं है। ५३॥पति तथा पुत्रवाली स्त्री यदि दोनोंसे पहले मर जाय तो वृषोत्सर्ग नहीं करना चाहिये, किंतु दूध देती हुई गौ का दान करना चाहिये ॥५४॥ हे गरुड़ ! जो बैलको कन्धेमें जोतता है और बैलकी पीठपर लादता है वह महाप्रलयतक

घोर नरकमें पड़ा रहता है ॥५५॥ जो निर्दयी घूंसोंसे अथवा लाठियोंसे बैलको मारता है वह मनुष्य कल्पपर्यन्त यमकी यातनाओं को भोगता है॥५६॥ इस प्रकार वृषोत्सर्ग करके सपिण्डीकरणसे पहले सोलह श्राद्ध करे,वह मैं तुमको बताता हूँ ॥५७॥ स्थानमें द्वारपर, आधे मार्गमें,चितापर, मृतकके हाथ पर,अस्थि संचयमें छठवां और दश पिंड दे॥५८॥ मैंने जो तुमसे यह षोडश प्रथम

वृषभंताडयेद्यस्तुनिर्दयोमुष्टियष्टिभिः ॥ सनरःकल्पपर्यन्तंभुनक्तियमयातनाम् ॥ ५६॥ एवंकृत्वावृषोत्सर्गं कुर्याच्छ्राद्धानिषोडश ॥ सपिंडीकरणादर्वाक्तदहंकथयामिते ॥ ५७ ॥ स्थानेद्वारेर्धमार्गेचचितायांशवह स्तके ॥ अस्थिसंचयनेषष्ठोदशपिंडादशाह्निकाः ॥ ५८ ॥ मलिनंषोडशंचैतत्प्रथमंपरिकीर्तितम् ॥ अन्यच्च षोडशंमध्येद्वितीयंकथयामिते ॥५९॥ प्रथमंविष्णवेदद्याद्द्वितीयंश्रीशिवाय च॥याम्यायपरिवारायतृतीयंपि ण्डमुत्सृजेत॥६०॥चतुर्थंसोमराजायहव्यवाहायपंचमम् ॥ कव्यवाहायषष्ठंचदद्यात्कालायसप्तमम् ॥६१॥ रुद्रायचाष्टमंदद्यान्नवमंपुरुषाय च ॥ प्रेतायदशमंचैवैकादशंविष्णवेततः ॥ ६२ ॥

कहा,यह मलिन है, और भी दूसरा षोडशमध्यमें तुमको कहता हूँ ॥५९॥ पहला विष्णुके निमित्त, दूसरा श्री शिवके निमित्त और तीसरा पिंडदान परिवार समेत यमके लिये करे ॥६०॥ चौथा सोमराजके लिये, पांचवां हव्यवाहके लिये, छठवां कव्यवाहके लिये और सातवां कालके निमित्त पिंडदान करे॥६१॥ रुद्रके लिये आठवां, नौवा पुरुषके लिये,दशवां प्रेतके लिये और ग्यारहवां विष्णु

के निमित्त दान करे ॥६२॥ बारहवां ब्रह्माके निमित्त, तेरहवां विष्णुके लिये, चौदहवां शिवके लिये, और पन्द्रहवां यमके लिये पिंडदान करे ॥ ६३ ॥ हे गरुड़ ! सोलहवां पिण्ड तत्पुरुषके लिये दानकरे, तत्वको जाननेवाले इसको मध्य षोडशक कहते हैं ॥६४॥ बारहों मासोंमें पाक्षिक, त्रिपाक्षिक, न्यून षाण्मासिक पिण्ड तथा न्यूनाब्दिक पिण्डका दान करे ॥ ६५ ॥ यह उत्तम षोडश

द्वादशंब्रह्मणेदद्याद्विष्णवेचत्रयोदशम् ॥ चतुर्दशंशिवायैवयमायदशपञ्चकम् ॥ ६३ ॥ दद्यात्तत्पुरुषायैवपिण्डंषोडशकंखग ॥ मध्यंषोडशकंप्राहुरेतत्तत्त्वविदोजनाः ॥६४॥ द्वादशप्रतिमासेषुपाक्षिकंचत्रिपाक्षिकम् ॥ न्यूनषाण्मासिकंपिण्डंदद्यान्न्यूनाब्दिकंतथा ॥६५॥ उत्तमंषोडशंचैतन्मयातेपरिकीर्तितम्॥श्रपयित्वाचरुंतार्क्ष्यकुर्यादेकादशाहनि॥६६॥चत्वारिंशत्तथैवाष्टौश्राद्धंप्रेतत्वनाशनम्॥ यस्यजातंविधानेनसभवेत्पितृपंक्तिभाक् ॥ ६७ ॥ पितृपंक्तिप्रवेशार्थंकारयेत्षोडशत्रयम् ॥ एतच्छ्राद्धविहीनश्चेत्प्रेतोभवतिसुस्थिरम् ॥ ६८ ॥

मैंने तुमको कहा है, हे गरुड़ ! खीरको पकाकर ग्यारहवें दिन करे ॥६६॥ प्रेतपन नष्ट करनेवाले ये अड़तालीस श्राद्ध जिसके विधि पूर्वक होते हैं वह पितरों की पंक्ति में गिना जाता है ॥ ६७ ॥ पितरों की पंक्ति में प्रवेश करनेके लिये षोडशत्रय करावे, इस श्राद्ध से जो हीन है वह सुस्थिर प्रेत होता है ॥ ६८ ॥

षोडशत्रय संज्ञक श्राद्ध जबतक नहीं दिया जाता है, तबतक अपना दिया तथा दूसरेका दिया हुआ नहीं प्राप्त होता है ॥६९॥ अतः पुत्र द्वारा विधिपूर्वक षोडशत्रय करना चाहिये और यदि भर्ता का पत्नी करे तो उसका अनन्त कल्याण हो ॥७०॥ जो स्त्री मरे हुये पतिका और्ध्वदेहिक कर्म करती है अर्थात् क्षयाह और पाक्षिक श्राद्ध करती है, वह मेरे द्वारा सती कही जाती

यावन्नदीयतेश्राद्धंषोडशत्रयसंज्ञकम् ॥ स्वदत्तंपरदत्तंचतावन्नैतोपतिष्ठते ॥ ६९ ॥ तस्मात्पुत्रेणकर्तव्यंविधिनाषोडशत्रयम् ॥ भर्तुर्वाकुरुतेपत्नीतस्याःश्रेयोह्यनन्तकम् ॥७०॥ सपरेतस्ययापत्युः कुरुतेचौर्ध्वदेहिकम् ॥ क्षयाहंपाक्षिकश्राद्धंसासतीह्युच्यते मया ॥ ७१ ॥ उपकारायसाभर्तुर्जीवत्यैषापतिव्रता ॥ जीवितंसफलंतस्यायामृतंस्वामिनंभजेत् ॥ ७२ ॥ अथकश्चित्प्रमादेनम्रियतेवह्निवारिभिः॥ संस्कारप्रमुखंकर्मसर्वंकुर्याद्यथाविधि ॥ ७३ ॥ प्रमादादिच्छयावापिनागाद्वाम्रियते यदि ॥ पक्षयोरुभयोर्नागंपञ्चमीषुप्रपूजयेत् ॥७४॥

है ॥ ७१ ॥ वह पतिव्रता जो जीती है वह भर्ता के उपक्रम के लिये जीती है, उसका जीवन सफल है जो मरे हुये स्वामी को भजती है ॥७२॥ यदि कोई प्रमादवश अग्नि अथवा जल से मरजाय उसका संस्कार आदि सब कर्म विधिपूर्वक करे ॥७३॥ प्रमादसे, इच्छा से अथवा सर्प से मनुष्य मरे तो दोनों पक्षों की पंचमी तिथियो में नागकी पूजा करे ॥ ७४ ॥

पृथ्वीपर आटेकी सर्पके शरीरकी आकृति बनावे उसकी सफेद फूलोंसे, सुगन्धि, और चंदनसे पूजा करे ॥ ७५ ॥ धूप दीप दे और तंडुल तथा तिल डाले, कच्चा पिसा हुआ नैवेद्य और दूध निवेदन करे ॥ ७६ ॥ शक्तिके अनुसार स्वर्णका नाग और गौ, ब्राह्मणको दान करे, उसके बाद हाथ जोडकर ''नागराज प्रसन्न होवें'' ऐसे कहे ।।७७।। उसके बाद उनकी नारायणबलिकी क्रिया करे, उसके

कुर्यातिपिष्टमयींलेख्यांनागभोगाकृतिंभुवि ॥ अर्चयेत्तांसितैः पुष्पैःसुगन्धैश्चन्दनेन च ।।७५।। प्रदद्याद्धूपदीपौचतण्डुलांश्चतिलान्क्षिपेत् ॥ आमपिष्टंचनैवेद्यंक्षीरंचविनिवेदयेत् ।।७६।। सौवर्णंशक्तितोनागंगांचदद्याद्द्विजन्मने ॥ कृतांजलिस्ततोब्रूयात्प्रीयतान्नागराडिति ॥ ७७ ॥ पुनस्तेषांप्रकुर्वीतनारायणबलिक्रियाम् ॥ तयालभन्तेस्वर्वासंमुच्यन्तेसर्वपातकैः ॥ ७८ ॥ एवंसर्वक्रियांकृत्वाघटंसान्नंजलान्वितम् ॥ दद्यादाब्दंयथासंख्यान्पिण्डान्वासजलानुक्रमात ।।७९।। एवमेकादशेकृत्वाकुर्यात्सापिंडनंततः ॥ शय्याप्रदानांदानंच कारयेत्सूतकेगते ॥ ८० ॥ इति श्रीगरुडपुराणे सारोद्धारेद्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥

करनेसे स्वर्गवास पाता है सब पापोंसे छूट जाता है ।।७८।। इस प्रकार सब क्रिया करके अन्न तथा जल समेत घट वर्षपर्यन्त दान करे अथवा अर्घ्य समेत क्रमसे पिण्ड दे ।।७९।। ऐसे एकादशवें दिन करके उसके बाद सपिण्डन करे, सूतकके जाने पर शय्या तथा पदों का दान करे ॥ ८० ॥ श्री गरुड़पुराण सारोद्धार हिन्दीं टीकामें बारहवां अध्याय समाप्त हुआ ॥ १२ ॥

गरुड़ बोलेः- हे प्रभो ! सपिण्डनकी विधि, सूतकका निर्णय, शय्या तथा पदोंकी सामग्री और इन सबकी महिमाका वर्णन कीजिये ॥१॥ श्री भगवान् बोलेः—हे गरुड़ ! सुनो सापिण्ड्यादि सब क्रियाओंको मैं तुमको कहता हूँ, इन क्रियाओंको कहनेसे प्राणी प्रेतके नामको छोड़कर पितृगणमें प्रवेश करता है ।।२।। जिनका पिण्ड पितामह शिव आदिकमें नहीं मिला है, उनको पुत्रद्वारा दिये हुये

गरुडउवाच ॥ सपिण्डनविधिंब्रूहिसूतकस्यचनिर्णयम् ॥ शय्यापदानांसामग्रींतेषांचमहिमां प्रभो ॥ १ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ शृणुताक्ष्यप्रवक्ष्यामिसापिंड्याद्यखिलांक्रियाम् ॥ प्रेतनामपरित्यज्ययय़ापितृगणेविशेत् ॥ २ ॥ नपिण्डोमिलितोयेषांपितामहशिवादिषु ॥ नोपतिष्ठन्तिदानानिपुत्रैर्दत्तान्यनेकधा ॥३॥ अशुद्धस्यात्सदापुत्रोनशुध्यतिकदाचन ॥ सूतकंननिवर्तेतसपिण्डीकरणंविना ॥ ४ ॥ तस्मात्पुत्रेणकर्तव्यंसूतकान्तेसपिण्डनम्॥ सूतकंतेप्रवक्ष्यामिसर्वेषांचयथोचितम् ॥ ५ ॥ ब्रह्मणस्तुदशाहेनक्षत्रियोद्वादशेहनि॥ वैश्यः पञ्चदशाहेनशूद्रोमासेनशुध्यति ॥ ६ ॥

नाना प्रकारके दान नहीं मिलते हैं ॥ ३ ॥ सपिण्डी किये विना सूतक नहीं जाता है, तबतक पुत्र सदा अशुद्ध रहता है कभी शुद्ध नहीं होता है ।।४।। अतः पुत्रको सूतकके अन्तमें सपिण्डन करना चाहिये, अब सबका यथोचित सूतक मैं तुमको कहता हूँ ॥५॥ ब्राह्मण तो दश दिनसे, क्षत्रिय बारह दिनसे, वैश्य पन्द्रह दिनसे और शूद्र एक महीनेसे शुद्ध होता है ॥ ६ ॥

प्रेतके सूतकमें सपिंड दश दिनोंसे शुद्ध होते हैं और कुलके लोग तीन रातमें शुद्ध होते हैं,सगोत्री स्नान करके शुद्ध हो जाते हैं ॥७॥ चौथी पीढीमें दश रात्रितक सूतक रहता है,पांचवीं पीढीमें छः रात्रि,छठवीं में चार दिन और सातवींमें तीन दिन सूतक रहता है॥८॥ आठवींमें एक दिन, नौवींमें दो पहर और दशवीं पीढीमें स्नान करने से ही मृतकसूतक और जन्मसूतक जाते हैं ॥९॥ परदेशमें

दशाहेनसपिण्डास्तुशुध्यन्तिप्रेतसूतके ॥ त्रिरात्रेणसकुल्यास्तुस्नात्वाशुद्ध्यन्तिगोत्रजाः ॥७॥ चतुर्थेदश रात्रंस्यात्षण्निशाः पुंसिपञ्चमे ॥ षष्ठेचतुरहःप्रोक्तंसप्तमेचदिनत्रयम्॥८॥अष्टमेदिनमेकंतुनवमेप्रहरद्वयम् दशमेस्नानमात्रंहिमृतकंजन्मसूतकम् ॥ ९ ॥ देशान्तरगतःकश्चिच्छृणुयाद्योह्यहर्निशम् ॥ यच्छेषंदशरा त्रस्यतावदेवाशुचिर्भवेत् ॥ १० ॥ अतिक्रान्तेदशाहेतुत्रिरात्रमशुचिर्भवेत् ॥ संवत्सरेव्यतीतेतुस्नानमात्राद्वि शुध्यति ॥ ११ ॥ आद्यभागद्वयंयावन्मृतकस्यचसूतके ॥ द्वितीयेपतितेचाद्यात्सूतकाच्छुद्धिरिष्यते ॥ १२ ॥

गया हुआ कोई यदि दश दिनके अन्दर सुने तो दशरात्रिमें जितने दिन बाकी रहें उतना ही सूतक समझना चाहिये ॥१०॥ दशदिन बीत जानेपर वर्षसे पहले तीन रात्रिका सूतक और वर्षके बीत जानेपर स्नान मात्रसे शुद्धि होती है ॥ ११ ॥ मृतकके सूतक के दो भाग बीत जानेपर यदि दूसरा सूतक हो तो पहले सूतकसे शुद्धि कही है ॥ १२ ॥

बालकके दांत उत्पन्न होनेसे पहले सद्यः शौच अर्थात् स्नानमात्रसे ही शुद्धि होती है और मुण्डन पर्यन्त एक रात्रि कही है, यज्ञोप वीत पर्यंत तीन रात्रि और इसके बाद दश रात्रिमें शुद्धि होती है ॥१३॥ जन्मसे लेकर मुण्डन पर्य्यंत यदि कन्या मरजाय तो सब वर्णोंमें सदा सद्यः शौच अर्थात् स्नान मात्रसे शुद्धि होती है ॥१४॥ उसके बाद वाग्दान पर्य्यंत अर्थात् सगाई तक एक ही दिनका सूतक होता है, इससे अधिक बढी हुई कन्याका तीन रात तक सूतक होता है यह निश्चय है ॥१५॥ वाग्दान करने पर तो दोनों

आदन्तजननात्सद्यआचौलान्नैशिकीस्मृता ॥ त्रिरात्रमाव्रतादेशाद्दशरात्रमतः परम् ॥ १३ ॥ आजन्मनस्तु चौलान्तंयत्रकन्याविपद्यते ॥ सद्यः शौचंभवेत्तत्रसर्ववर्णेषुनित्यशः ॥ १४ ॥ ततोवाग्दानपर्यन्तंयावदेकाह मेवाहि॥अतः परं प्रवृद्धानां त्रिरात्रमितिनिश्चयः ॥ १५ ॥ वाक्प्रदानेकृतेत्वत्रज्ञेयंचोभयतस्त्र्यहम् ॥ पितुर्वर स्यचततोदत्तानाभर्तुरेवहि ॥ १६ ॥ षण्मासाभ्यन्तरेयावद्गर्भस्रावोभवेद्यदि ॥ तदामाससमैस्तासां दिवसैःशुद्धिरिष्यते ॥ १७ ॥

ओर तीन दिनका अर्थात् तीन दिनका पिताके कुलमें और तीन दिनका वरके कुलमें सूतक समझना चाहिये, जो विवाही गई होती हैं उनका सूतक भर्ता ही के कुलमें होता है पिताके कुलमें नहीं होता है ॥१६॥ छः महीनेके अन्दर यदि गर्भस्राव हो तो उनकी महीनोंके बराबर दिनोंमें शुद्धि कही है अर्थात् जितने महीनोंका गर्भ हो उतनेही दिनोंमें शुद्धि होती है ॥ १७ ॥

इसके उपरांत अपनी जातिमें कहा हुआ आशौच उन माताओंमें रहता है, पित्रादिकोंमें नहीं; गर्भकेपतन होनेपर सपिंडोंको स द्य शौच कहा है ॥१८॥ सभी वर्णोंके सूतकमें और मृतकमें दश दिनोंमें शुद्धि होती है, कलियुगमें यह शास्त्रका निश्चय है ॥१९॥ आशीर्वाद, देवताओंकी पूजा, प्रत्युत्थान, अभिवन्दन, शय्यापर सोना और स्पर्श, इन सभीको मृतक सूतकमें नहीं करे ॥२०॥

अतऊर्ध्वंस्वजात्युक्तमाशौचंतासुविद्यते ॥ सद्यःशौचंसपिण्डानांगर्भस्यपतनेसति ॥ १८ ॥ सर्वेषामेववर्णानांसूतकेमृतकेपिवा ॥ दशाहाच्छुद्धिरित्येषकलौशास्त्रस्यनिश्चयः ॥ १९ ॥ आशीर्वादंदेवपूजांप्रत्युत्थानाभिवन्दनम् ॥ पर्यंकेशयनंस्पर्शंनकुर्यान्मृतसूतके ॥ २० ॥ संध्यादानंजपंहोमंस्वाध्यायंपितृतर्पणम् ॥ ब्रह्मभोज्यंव्रतंनैवकर्तव्यंमृतसूतके ॥ २१ ॥ नित्यंनैमित्तिकंकाम्यंसूके यः समाचरेत् ॥ तस्यपूर्वंकृतंनित्यादिकंकर्मविनश्यति ॥ २२ ॥ व्रतिनोमन्त्रपूतस्यसाग्निकस्यद्विजस्यच ॥ ब्रह्मनिष्ठस्ययतिनोनाहेराज्ञांचसूतकम् ॥ २३ ॥

संध्या, दान, जप, होम, वेद पढना,पितरोंका तर्पण, ब्राह्मण भोजन और व्रत इन सबको मृतक सूतकमें न करे ॥२१॥ जो सूतकमें नित्यनैमित्तिक और काम्य(किसी वस्तुकी कामनासे कियागया)कर्म करते हैं,उनका पहले किया हुआ नित्यादिक कर्म नष्ट हो जाता है ॥२२॥ व्रती, मन्त्रपूत (मंत्रोंसे पवित्र) अग्निहोत्री और ब्रह्मनिष्ठ गृहस्थी और यतिको तथा राजाको सूतक नहीं लगता है ॥२३॥

विवाह उत्सव और यज्ञमें मृतसूतक होनेपर उसके पूर्व बनाया पक्वान्न खाना चाहिये, यह मनुने कहा है ॥२४॥ सूतक ज्ञात न होने पर जो सूतकमें दान लेता है वह दोषका भागी नहीं होता है और सूतक बता देनेपर भी जो याचना करता है उसको देता हुआ दाता भी दोषका भागी नहीं होता है ॥२५॥ जो सूतकको छिपाकर ब्राह्मणको अन्न देता है और जो ब्राह्मण सूतकको जानकर भी

विवाहोत्सवयज्ञेषुजातेचमृतसूतके ॥ तस्यपूर्वंकृतंचान्नंभोज्यंतन्मनुरब्रवीत् ॥ २४ ॥ सूतकेयस्तुगृह्णाति तदज्ञानान्नदोषभाक् ॥ दातादोषमवाप्नोतियाचकायददन्नपि ॥२५॥ प्रच्छाद्यसूतकंयस्तुददात्यन्नंद्विजायच ॥ ज्ञात्वागृह्णन्तियेविप्रादोषभाजस्त एवहि ॥२६॥ तस्मात्सूतकशुद्ध्यर्थंपितुःकुर्यात्सपिण्डनम् ॥ ततःपितृगणैःसार्द्धंपितृलोकं स गच्छति ॥२७॥ द्वादशाहेत्रिपक्षेवाषण्मासेवत्सरेपिवा ॥ सपिंडीकरणंप्रोक्तंमुनिभिस्तत्त्वदर्शिभिः ॥ २८ ॥ मयातुप्रोच्यतेताक्ष्यशास्त्रधर्मानुसारतः ॥ चतुर्णामेववर्णानांद्वादशाहेसपिण्डनम् ॥ ॥ २९ ॥ अनित्यात्कलिधर्माणांपुंसांचैवायुषःक्षयात् ॥ अस्थिरत्वाच्छरीरस्यद्वादशाह प्रशस्यते ॥ ३० ॥

दान लेता है, ये दोषके भागी होते हैं ॥२६॥ अतः सूतककी शुद्धिके लिये पिताका सपिंडन करे, उसके बाद पितृगणोंके साथ वह पितृलोकको जाता है ॥ २७ ॥ बारहवें दिन अथवा तीन पखवारेमें छः महीनेमें अथवा वर्षमें तत्त्वदर्शी मुनीश्वरोंने सपिंडीकरण कहा है ॥२८॥ मैंने तो धर्मशास्त्रके अनुसार चारों वर्णोंका बारहवें दिन सपिंडन कहा है ॥२९॥ कालि धर्मोंकी अनित्यतासे और

पुरुषोंकी आयु कम होने तथा शरीरके स्थिर न होनेसे बारहवें दिन करना उचित है ॥३०॥ गृहमेधी (वृद्ध)के मर जानेपर व्रतबन्ध (यज्ञोपवीत) उत्सव (यज्ञ होलिकादिक) व्रत (कार्तिकादिक व्रत और द्विरागमनादिक) के उद्यापन और विवाहादिक नहीं होते हैं ॥३१॥ संन्यासी भिक्षा नहीं लेता है और हन्तकार ग्रहण नहीं होती है, जबतक पिंड नहीं मिलाया जाता है, तबतक नित्य नैमित्तिक

व्रतबन्धोत्सवादीनिव्रतस्योद्यापनानि च ॥ विवाहादिर्भवेन्नैवमृतेचगृहमेधिनि॥ ३१ ॥ भिक्षुर्भिक्षांनगृह्णाति हन्तकारोनगृह्यते ॥ नित्यंनैमित्तिकंलुप्येद्यावत्पिंडोनमेलितः ॥ ३२ ॥ कर्मलोपात्प्रत्यवायीभवेत्तस्मात्स पिंडनम् ॥ निरग्निकः साग्निकोवाद्वादशाहेसमाचरेत् ॥ ३३ ॥ यत्फलंसर्वतीर्थेषुसर्वयज्ञेषुयत्फलम् ॥ तत्फ लंसमवाप्नोतिद्वादशाहेसपिण्डनात् ॥३४॥ अतःस्नात्वामृतस्थानेगोमयेनोपलेपिते ॥ शास्त्रोक्तेनविधानेन सपिण्डींकारयेत्सुतः ॥ ३५ ॥

सब लुप्त होजाते हैं ॥३२॥ कर्मके लोपसे दोषका भागी होता है अतः सपिंडन करना चाहिये, चाहे निरग्निक हो अथवा साग्निक बारहवें दिन सपिंडन करना चाहिये ॥३३॥ जो फल सब तीर्थोंमें और सब यज्ञोंमें होता है उस फलको बारहवें दिन सपिंडन करनेसे प्राप्त करता है ॥३४॥ अतः स्नान करके मृतक स्थानमें गोबरसे लीपे और शास्त्रमें कहे हुये विधानसे पुत्र सपिंडी करावे ॥३५॥

पाद्य अर्घ्य आचमनादिसे विश्वे देवोंकी पूजा करे और कुत्सित पितृको विकिर पिंड देकर फिर जलसे आचमन करे ॥३६॥ वसु रुद्रादि स्वरूप पितामहादिकोंको यथाक्रम तीन पिण्डदे और चौथा मृतकको दे ॥३७॥ चंदन तुलसीपत्र धूप दीप उत्तम भोजन मुखवास (इलायची आदि) उत्तम वस्त्र और दक्षिणासे पूजन करे॥ ३८ ॥ सोनेकी शलाकासे प्रेतके पिण्डके तीन भाग करके

पाद्यार्घ्याचमनीयाद्यैर्विश्वेदेवांश्चपूजयेत् ॥कुपित्रेविकिरंदत्त्वापुनश्चापउपस्पृशेत् ॥ ३६ ॥ दद्यात्पितामहादीनांत्रीन्पिंडांश्चयथाक्रमम् ॥ वसुरुद्रार्करूपाणांचतुर्थंमृतकस्य च ॥३७॥ चंदनैस्तुलसीपत्रैर्धूपैर्दीपैःसुभोजनैः ॥ मुखवासैःसुवस्त्रैश्चदक्षिणाभिश्चपूजयेत् ॥ ३८ ॥ प्रेतपिंडंत्रिधाकृत्वासुवर्णस्यशलाकया ॥ पितामहादिपिण्डेषुमेलयेत्तंपृथक्पृथक् ॥३९॥ पितामह्यासमंमातुः पितामहसमंपितुः ॥ सपिंडीकरणंकुर्यादिति तार्क्ष्यमतंमम ॥ ४० ॥ मृतेपितरियस्याथविद्यतेचपितामहः ॥ तेनदेयास्त्रयःपिंडाःप्रपितामहपूर्वकाः॥४१॥

पितामह आदिकके पिण्डोंमें उसको पृथक्‌ पृथक्‌ मिलावे ॥ ३९ ॥ पितामहीके समान माताका और पितामहके समान पिताका सपिण्डीकरण करे, हे गरुड़ ! मेरा मत यह है ॥ ४० ॥ पिताके मरनेपर पितामह विद्यमान हो तो, प्रपितामह पूर्वक तीन पिण्ड देने चाहिये ॥ ४१ ॥

पिताके पिंडके तीन भाग करके उनमें क्रमसे मिलाकर दे, माताके पहले मरजानेपर पितामही विद्यमान हो तो ॥४२॥ मातृकश्राद्धमें भी पिताके पिंडकी सी विधि करे अर्थात् प्रपितामही आदिके तीन पिंड देकर उनके साथ माताके पिंडके तीन भाग करके उनमें क्रमसे मिलावे ॥ पक्षांतर कहते हैं ॥ अथवा उन मातापिता के पितामह रूप मुझ(भगवान् विष्णु)में पिताका और पितामही रूपा

तेभ्यश्चपैतृकंपिण्डंमेलयेत्तंत्रिधाकृतम् ॥ मातर्यग्रेप्रशान्तायांविद्यतेचपितामही ॥ ४२ ॥ तदामातृकश्राद्धे पिकुर्यात्पैतृकवद्विधिम् ॥ यद्वामयिमहालक्ष्म्यांतयोःपिण्डंचमेलयेत् ॥ ४३॥ अपुत्रायाःस्त्रिया कुर्यात्पतिः सापिण्डनादिकम् ॥ श्वश्र्वादिभिः सहैवास्याः सपिण्डीकरणंभवेत् ॥ ४४ ॥ भर्त्रादिभिस्त्रिभिःकार्यं सपिण्डीकरणंस्त्रियाः ॥ नैतन्ममममतंतार्क्ष्यपत्यासापिण्ड्यमर्हति ॥ ४५ ॥ एकांचितांसमारूढौदम्पतीयदि काश्यप ॥ तृणमन्तरतः कृत्वा श्वशुरादेस्तदाचरेत् ॥ ४६ ॥

लक्ष्मीमें माताका पिंड मिलावे ॥४३॥ पुत्र रहित स्त्रीके सपिंडनादिक पति करे, सास आदिके साथ ही इसका सपिंड होता है ॥४४॥ स्त्री का सपिंडीकरण भर्ता आदि तीनके साथ करना चाहिये, हे गरुड ! यह मेरा मत नहीं है, वह सपिंडताके योग्य नहीं है ॥४५॥ हे गरुड ! यदि स्त्री पुरुष दोनों एक चिता पर चढे हों तो श्वसुर आदिकोंके तृण बीचमें करके सतीका सपिंडन करे॥४६॥

पहले एक ही पुत्र पिताके पिंड आदि करे उसके बाद सतीके करे, पश्चात् स्नान करे ॥४७॥ जो सती दश दिनके अन्दर अग्निमें प्रवेश करे उसका भर्ताके दिन ही शय्यादान और सपिंडन करना चाहिये ॥४८॥ हे गरुड ! सपिंडन और पितरोंका तर्पण करे, वेदके मन्त्रोंके साथ स्वधाकारका उच्चारण करे ॥४९॥ पश्चात् अतिथिको भोजन कराकर सदा बलिवैश्वदेव करे, उससे पितर,

एकएवसुतः कुर्यादादौपिण्डादिकं पितुः ॥ तदूर्ध्वंचप्रकुर्वीतसत्याः स्नानंपुनश्चरेत् ॥ ४७ ॥ हुताशंया समारूढादशाहाभ्यन्तरेसती ॥ तस्याभर्तुर्दिनेकार्यंशय्यादानंसपिण्डनम् ॥ ४८ ॥ कृत्वासपिण्डनंता र्क्ष्यप्रकुर्यात्पितृतर्पणम् ॥ उदाहरेत्स्वधाकारं वेदमन्त्रैः समन्वितम् ॥ ४९ ॥ अतिथिंभोजयेत्पश्चाद्ध न्तकारंचसर्वदा ॥ तेनतृप्यन्तिपितरोमुनयोदेवदानवाः ॥ ५० ॥ ग्रासमात्राभवेद्भिक्षाचतुर्ग्रासंतुपुष्कलम् ॥ पुष्कलानिचचत्वारिहन्तकारोविधीयते ॥ ५१ ॥ सपिण्डयांविप्रचरणौपूजयेच्चन्दनाक्षतैः ॥ दानंतस्मैप्रदा तव्यमक्षय्यतृप्तिहेतवे ॥ ५२ ॥

मुनि, देवता और दानव सब तृप्त होते हैं ॥ ५० ॥ एकग्रास मात्र भिक्षा होती है और चार ग्रासका एक पुष्कल होता है तथा चार चार पुष्कलका एक हन्तकार होता है ॥ ५१ ॥ सपिण्डीमें चन्दन और अक्षतोंसे ब्राह्मणके चरण पूजे, अक्षय तृप्ति के लिये उसको दान देना चाहिये ॥ ५२ ॥

वर्षकी जीविका घी अन्न स्वर्ण चांदी गौ घोडा हाथी रथ भूमि ये सब आचार्यके लिये दान करे ॥५३॥ उसके बाद स्वस्तिवाचनपूर्वक मन्त्रोंसे, कुंकुम अक्षत और नैवेद्यसे, नवग्रह, देवी और विनायकका पूजन करे ॥५४॥ पूजनके बाद आचार्य मन्त्र सहित अभिषेक करे और हाथमें रक्षा सूत्र बांधकर मन्त्रोंसे पवित्र अक्षत दे ॥५५॥ तदनन्तर अनेक तरहके सुन्दर मिष्टान्नसे ब्राह्मणोंको भोजन

वर्षवृत्तिघृतंचान्नंसुवर्णंरजतंसुगाम् ॥ अश्वं गजरथंभूमिमाचार्यायप्रदापयेत् ॥५३॥ ततश्चपूजयेन्मंत्रैःस्वस्तिवाचनपूर्वकम्॥ कुङ्कुमाक्षतनैवेद्यैर्ग्रहान्देवींविनायकम्॥५४॥आचार्यस्तुततःकुर्यादभिषेकंसमन्त्रकम् ॥ बद्ध्वासूत्रंकरेदद्यान्मंत्रपूतांस्तथाक्षतान् ॥५५॥ ततश्चभोजयेद्विप्रान्मिष्टान्नैर्विविधैः शुभैः ॥दद्यात्सदक्षिणांस्तेभ्यः सजलान्नान्द्विषड्घटान्॥५६॥वार्यायुधप्रतोदस्तुदण्डस्तुद्विजभोजनात्॥स्प्रष्टव्यानन्तरंवर्णैः शुद्ध्येरंस्तेततःक्रमात् ॥५७॥ एवंसपिडनंकृत्वाक्रियावस्त्राणिसंत्यजेत्॥ शुक्लाम्बरधरोभूत्वाशय्यादानंप्रदापयेत्॥५८॥

करावे और उनको दक्षिणाके साथ जल और अन्न सहित छः घडे दान करे ॥५६॥ ब्राह्मण भोजनके बाद चारों वर्णोंको क्रमसे जल, आयुध,प्रतोद और दंड छूने योग्य हैं (ब्राह्मण जलको, क्षत्रिय आयुधको, वैश्य प्रतोदको और शूद्र दण्डको स्पर्श करे) तब शुद्ध होते हैं ॥ ५७ ॥ इस प्रकार सपिण्डन करके क्रियाके वस्त्रोंको त्याग दे और शुक्ल वस्त्र धारण करके शय्यादान करे ॥ ५८ ॥

इन्द्रसमेत सब देवता शय्यादानकी प्रशंसा करते हैं, अतः मरनेपर अथवा जीवित रहते शय्यादान करना योग्य है ॥५९॥ पुष्ट काष्ठकी बनी हुई मनोहर चित्रोंसे चित्रित' पुष्ट रेशमी सूत से बनी हुई और स्वर्णके पत्रोंसे शोभित ॥६०॥ हंसके समान उज्वल तथा कोमल रूईके गद्देसे ढकी हुई, सुन्दर तकिया और ऊपर बिछानेकी चादरसे युक्त, पुष्प और गन्धसे सुवासित ॥६१॥ सुन्दर

शय्यादानंप्रशंसन्तिसर्वेदेवाः सवासवाः ॥ तस्माच्छय्याप्रदातव्यामरणेजीवितेपिवा ॥ ५९ ॥ सारदारुमयींरम्यांसुचित्रैश्चित्रितांदृढाम् ॥ पट्टसूत्रैर्वितनितांहेमपत्रैरलंकृताम् ॥६०॥ हंसतूलिप्रतिच्छन्नांशुभशीर्षोपधानिकाम् ॥ प्रच्छादनपटीयुक्तांपुष्पगन्धैःसुवासिताम्॥ ६१ ॥ दिव्यबन्धैः सुबद्धांचसुविशालांसुखप्रदाम्॥ शय्यामेवंविधांकृत्वाह्यास्तृतायांन्यसेद्भुवि ॥ ६२ ॥ छत्रंदीपालयंरौप्यंचामरासनभाजनम् ॥ भृङ्गारकरकादर्शंपञ्चवर्णवितानकम् ॥ ६३ ॥ शयनस्यभवेत्किंचिद्यच्चान्यदुपकारकम् ॥ तत्सर्वंपरितस्तस्याःस्वेस्वेस्थानेनियोजयेत् ॥ ६४ ॥

दिव्य बन्धोंसे बँधी हुई, विशाल, सुख पहुँचानेवाली शय्या बनाकर आस्तृत भूमिमें स्थापित करे ॥ ६२ ॥ छाता, चांदीकी दीवट,चामर, आसन, पात्र, झारी गडुआ, दर्पण और पांच रंगका शामियाना ॥६३॥ और जो कुछ वस्तु शय्याकी उपकारक हों, वे सब उसके चारों तरफ अपने अपने स्थानमें स्थापित करे ॥ ६४ ॥

उस शय्यापर स्वर्णके बने हुये लक्ष्मीसहित विष्णुको स्थापित करे, (विष्णुकी मूर्ति कैसी बनावे?) सम्पूर्ण प्रकारके आभूषणोंसे युक्त हो तथा चक्र आदि आयुधों तथा वस्त्रोंसे संयुक्त हो॥६५॥स्त्रियोंकी शय्यापर काजल,महावर, रोली,वस्त्र और जो गहने आदि हैं वे सब स्थापित करे ॥६६॥ उसके बाद गंध और फूलोंसे भूषित सपत्नीक ब्राह्मणको कानके तथा अंगुलियोंके भूषणोंसे तथा

तस्यांसंस्थापयेद्धैमंहरिंलक्ष्मीसमन्वितम् ॥ सर्वाभरणसंयुक्तमायुधाम्बरसंयुतम् ॥ ६५ ॥ स्त्रीणांचशयने धृत्वाकज्जलालक्तकुंकुमम् ॥ वस्त्रभूषादिकंयच्चसर्वमेवप्रदापयेत् ॥६६॥ ततोविप्रंसपत्नीकंगन्धपुष्पैरलंकृतम् ॥ कर्णाङ्गुलीयाभरणैःकंठसूत्रैश्च काञ्चनैः ॥६७॥ उष्णीषमुत्तरीयंचचोलकंपरिधायच ॥ स्थापयेत्सुखशय्यायांलक्ष्मीनारायणाग्रतः ॥ ६८ ॥ कुंकुमैःपुष्पमालाभिर्हरिंलक्ष्मींसमर्चयेत्॥पूजयेल्लोकपालांश्चग्रहान्देवींविनायकम्॥६९॥उत्तराभिमुखोभूत्वागृहीत्वाकुसुमाञ्जलिम्॥उच्चारयेदिमंमन्त्रंविप्रस्यपुरतःस्थितः॥७०॥

स्वर्णके बने गलेके हारसे शोभित कर॥६७॥पगड़ी, दुपट्टा और जामा पहिनाकर सुखशय्यापर लक्ष्मीनारायणके आगे बैठावे॥६८॥ कुंकुम और फूलोंकी मालाओंसे हरिकी तथा लक्ष्मीकी पूजा करे, और लोकपाल, नवग्रह, देवी और विनायककी पूजा करे ॥६९॥ उत्तराभिमुख हो फूलोंकी अञ्जलिसे ब्राह्मणके आगे स्थित होकर इस मन्त्रको उच्चारण करे ॥ ७० ॥

हे कृष्ण ! क्षीर सागरमें जैसी तुम्हारी शय्या है वैसे ही जन्म जन्ममें मुझको यह अशून्या हो ॥७१॥ इस प्रकार विप्रवर तथा हरि की प्रतिमापर पुष्पाञ्जलि छोड दे और उसके बाद सामग्री सहित शय्यापर सुखसे सोनेके लिये संकल्पपूर्वक अति सुन्दर दान करे ॥७२॥ व्रतका उपदेश करनेवाले ब्रह्मवादी गुरुको देवे, हे ब्राह्मण ! तुम इसको ग्रहण करो, कौन देता है, ऐसे कहते हुये दान

यथाकृष्णत्वदीयास्तिशय्याक्षीरोदसागरे ॥ तथाभूयादशून्येयंममजन्मनिजन्मनि ॥ ७१ ॥ एवंपुष्पाञ्जलिंविप्रेप्रतिमायांहरेः क्षिपेत् ॥ ततः सोपस्करंशय्यादानंसंकल्पपूर्वकम् ॥७२॥ दद्याद्व्रतोपदेष्ट्रेचगुरवेब्रह्मवादिने ॥ गृहाणब्राह्मणैनांत्वंकोददातीतिकीर्तयन् ॥ ७३ ॥ आन्दोलयेद्द्विजंलक्ष्मींहरिंचशयनेस्थितम् ॥ ततः प्रदक्षिणीकृत्य प्रणिपत्यविसर्जयेत् ॥ ७४ ॥ सर्वोपस्करणैर्युक्तंप्रदद्यादतिसुन्दरम् ॥ शय्यायांसुखसुप्त्यर्थंगृहंचविभवेसति ॥ ७५ ॥ जीवमानःस्वहस्तेनयदिशय्यांददाति यः ॥ तज्जीवताद्वृषोत्सर्गंपर्वणीषुसमाचरेत् ॥ ७६ ॥

करे ॥७३॥ शय्यापर बैठे हुये हरि, ब्राह्मण और लक्ष्मीको आन्दोलित करे (बुलाये) उसके बाद प्रदक्षिणा करके नमस्कार कर विसर्जन करे॥७४॥शय्यामें सुखसे सोनेके लिये सब सामग्रीसे युक्त अति सुन्दर करे और विभव हो तो घरका भी दान करे॥७५॥ जीवित रहते हुये यदि कोई पुरुष अपने हाथसे शय्यादान करे तो जीवित रहते हुये ही उसको पर्वमें वृषोत्सर्ग करना चाहिये॥७६॥

यह शय्या एकको देनी चाहिये, बहुत लोगोंको कभी न दे, बांटी गई तथा बेची गई वह दाताको नरकमें डालती है ॥ ७७ ॥ सुपात्रको शय्या दान करके वांछित फलको प्राप्त होता है पिता और दातापुत्र परलोकमें और इस लोकमें प्रसन्न होता है ॥७८॥ शय्यादान के प्रभावसे सुन्दर दिव्य इन्द्रके घरमें और यमराजके घरमें उपस्थित हो, इसमें संदेह नहीं है ॥७९॥ श्रेष्ठ विमान

इयमेकस्यदातव्याबहूनांनकदाचन ॥ साविभक्ताचविक्रीतादातारंपातयत्यधः॥ ७७ ॥ पात्रेप्रदायशयनंवा ञ्छितंफलमाप्नुयात् ॥ पिताचदातातनयः परत्रेहचमोदते ॥ ७८ ॥ पुरन्दरगृहेदिव्येसूर्यपुत्रालयेपिच ॥ उपतिष्ठन्नसन्देहः शय्यादानप्रभावतः ॥ ७९ ॥ विमानवरमारूढः सेव्यमानोप्सरोगणैः ॥ आभूतसम्प्लवंयावत्तिष्ठत्यातङ्कवर्जितः ॥ ८० ॥ सर्वतीर्थेषुयत्पुण्यंसर्वपर्वदिनेषुच॥तेभ्यश्चाप्यधिकंपुण्यंशय्यादानोद्भवं भवेत् ॥ ८१ ॥ एवंदत्त्वासुतः शय्यांपददानंप्रदापयेत् ॥ तच्छृणुष्वमयाख्यातंयथावत्कथयामिते ॥ ८२ ॥

में चढा हुआ अप्सरा गणोंसे सेवा किया गया वह प्रलय तक पीडा रहित स्थित रहता है ॥८०॥ सब तीर्थोंमें और सब पर्वों में जो पुण्य होता है उससे अधिक शय्यादान के प्रभाव से प्राप्त होता है ॥ ८१ ॥ पुत्र इस तरह शय्यादान करके पद दान करे, वह तुम मुझसे सुनो मैं तुमको यथावत् कहता हूँ ॥ ८२ ॥

छाता, जूता वस्त्र, अंगूठी, कमण्डलु, आसन, पंचपात्र, यह पद पांच प्रकारका कहा है ॥८३॥ दण्डसे तांबेके पात्रसे कच्चे अन्नसे, भोजनसे और यज्ञोपवीतसे पद सम्पूर्ण होता है ॥८४॥इसप्रकार यथाशक्ति तेरह पदोंको करके बारहवें दिन तेरह ब्राह्मणोंको तेरहदान करे॥८५॥इस पद दानसे धार्मिक पुरुष सद्गतिको प्राप्त होता है और जो यमके मार्गमें गये हैं उनको पददान सुख देनेवाला है॥८६॥

छत्रोपानहवस्त्राणिमुद्रिकाचकमण्डलुः ॥ आसनंपञ्चपात्राणिपदंपञ्चविधंस्मृतम् ॥ ८३ ॥ दण्डेनताम्रपात्रेणह्यामान्नैर्भोजनैरपि ॥ अथयज्ञोपवीतैश्चपदंसंपूर्णतांव्रजेत् ॥ ८४ ॥ त्रयोदशपदानीत्थंयथाशक्त्याविधाय च ॥ त्रयोदशेभ्योविप्रेभ्यः प्रदद्याद्द्वादशेहनि ॥ ८५ ॥ अनेनपददानेनधार्मिकायान्तिसद्गतिम् ॥ यममार्गगतानांचपददानंसुखप्रदम् ॥ ८६ ॥ आतपस्तत्रवैरौद्रोदह्यतेयेनमानवः ॥ छत्रदानेनसुच्छायाजायतेतस्यमूर्द्धनि ॥ ८७ ॥ अतिसङ्कटसङ्कीर्णेयमलोकस्यवर्त्मनि ॥ अश्वारूढाश्चतेयान्तिददन्तेयद्युपानहौ ॥ ८८ ॥ शीतोष्णवातदुःखानितत्रघोराणिखेचर ॥ वस्त्रदानप्रभावेणसुखंनिस्तरतेपथि ॥ ८९ ॥

वहाँ बडा रौद्र धाम है उससे निश्चय मनुष्य जल जाता है तो उसमें छाता दान करनेसे उसके सिरपर सुन्दर छाया होती है ॥८७॥ अति सङ्कटसे घिरे हुये यमके मार्गमें घोडेपर चढकर वे जाते हैं जो उपानह (जूते) पददान करते हैं ॥ ८८ ॥ हे गरुड ! वहाँ शीत, उष्ण, और पवनके घोर दुःख हैं परन्तु वस्त्रदानके प्रभावसे मनुष्य सुखसे पार हो जाता है ॥ ८९ ॥

महारौद्र, भयंकर, कृष्णपिंगल वर्णके यमके दूत मुद्रिका दान करने वालेको मार्गमें पीडा नहीं देते हैं ॥९०॥ बहुत घामसे भरे हुये पवन तथा जलसे रहित, उस यमके मार्गमें कमण्डलु दान करनेसे प्यासा जलको पीता है ॥९१॥ मरे हुयेके लिये जो ताम्बेके जलपात्रका दान करता है वह हजार प्याऊ लगानेके फलके समान फलको प्राप्त होता है ॥९२॥ आसन और पात्र ब्राह्मणको

यमदूताः महारौद्राः करालाःकृष्णपिङ्गलाः॥नपीडयन्तितंमार्गेमुद्रिकायाः प्रदानतः॥९०॥ बहुधर्मसमाकीर्णेनिर्वातेतोयवर्जिते ॥ कमंडलुप्रदानेन तृषितः पिबते जलम् ॥९१॥ मृतोद्देशेनयोदद्यादुदपात्रंचताम्रजम् ॥ प्रपादानसहस्रस्ययत्फलंसोश्नुतेध्रुवम् ॥ ९२ ॥ आसनेभोजनेचैवदत्तेसम्यग्द्विजातये ॥ सुखेनभुंक्तेपाथेयं पथिगच्छञ्छनैःशनैः ॥ ९३॥ एवंसपिंडनदिनेदत्त्वादानंविधानतः॥ बहून्संभोजयेद्विप्रान्यः श्वपाकादिकानपि ॥ ९४ ॥ ततः सपिंडनादूर्ध्वमर्वाक्संवत्सरादपि ॥ प्रतिमासंप्रदातव्योजलकुम्भः सपिंडकः ॥ ९५ ॥

देनेसे मार्गमें धीरे धीरे जाता हुआ प्राणी पाथेय (राह खर्च) को सुखसे खाता है ॥९३॥ इस प्रकार सपिण्डके दिन विधानसे दान देकर बहुतसे ब्राह्मणोंको जिमावे और चाण्डाल आदिको भी खिलावे ॥ ९४ ॥ उसके बाद सपिण्डनके उपरान्त और वर्षके भीतर पिण्ड समेत जलका कुम्भदान करना चाहिये ॥ ९५ ॥

हे गरुड़ ! प्रेत कार्यके विना किये का करना नहीं है और प्रेतके लिये तो अक्षय तृप्तिके निमित्त फिर करे ॥९६॥ अतः मासिक और वार्षिकको विशेष कहूँगा और पाक्षिकको विशेष तिथियोंमें मरनेपर ॥ ९७ ॥ जो पूर्णमासीको मरा है उसकी चतुर्थी पाक्षिक श्राद्ध तिथि है जो चतुर्थीको मरा है उसकी पाक्षिक श्राद्धतिथि नवमी है ॥९८॥ नवमीको जो मरा है उसकी पाक्षिक श्राद्धतिथि रिक्ता

कृतस्यकरणंनास्तिप्रेतकार्यादृतेखग ॥ प्रेतार्थंतुपुनःकुर्यादक्षय्यतृप्तिहेतवे ॥ ९६ ॥ अतोविशेषंवक्ष्यामि मासिकस्याब्दिकस्यच ॥पाक्षिकस्य विशेषंचविशेषंतिथिषुमृते ॥९७॥ पौर्णमास्यांमृतोयस्तुचतुर्थीतस्यऊनिका ॥ चतुर्थ्यांमृतोयस्तुनवमीतस्यऊनिका ॥ ९८ ॥ नवम्यांतुमृतोयस्तुरिक्तातस्यचतुर्दशी ॥ इत्येवं पाक्षिकंश्राद्धंकुर्याद्विंशतिमेदिने ॥९९॥ एकएवयदामासः संक्रान्तिद्वयसंयुतः ॥ मासद्वयगतंश्राद्धंमलमासेहिशस्यते ॥ १०० ॥ एकस्मिन्मासिमासौद्वौयदिस्यातांतयोर्द्वयोः ॥ तावेवपक्षौताएवतिथयस्त्रिंशदेवहि ॥ ॥ १०१ ॥ तिथ्यर्धेप्रथमेपूर्वोद्वितीयोऽर्धेतदुत्तरः ॥ मासावितिबुधैश्चिन्त्यौमलमासस्यमध्यगौ ॥ १०२ ॥

चतुर्दशी है, इस प्रकार बीसवें दिन पाक्षिक श्राद्ध करे॥९९॥जब एकही मासमें दो संक्रांति हों, तब दोनों महिनेके श्राद्ध सब मासमें करने चाहिये ॥१००॥ एक महिनेमें यदि दोमहिने हों तो दोनों मासोंमें वेही पक्ष, तिथि जाननी योग्य है ॥१०१॥ यदि प्रथम तिथ्यर्द्ध हो तो पूर्व जानिये और दूसरा आधा हो तो उससे आगेका मास जानिये इस प्रकार पण्डितोंद्वारा मल मासके मध्यके

मास चिन्तन करने योग्य हैं ॥१०२॥ हे खग ! संक्रांति रहित मासमें सपिण्डीकरण करना चाहिये, वैसेही मासिक श्राद्ध, वार्षिक श्राद्ध तथा प्रथम करना चाहिये ॥१०३॥ वर्षके मध्यमें यदि अधिक मास हो, तो प्रेतकी वार्षिक क्रिया तेरहवें महिनेमें करनी चाहिये ॥१०४॥ संक्रांति रहित मासमें पिंड वर्जित और संक्रांति सहित मासमें पिण्ड सहित ऐसे दोनों मासोंमेंप्रति वर्ष श्राद्ध

असंक्रान्तेचकर्त्तव्यंसपिण्डीकरणंखग॥तथैवमासिकं श्राद्धंवार्षिकंप्रथमंतथा ॥ १०३ ॥ संवत्सरस्यमध्येतु यदिस्यादधिमासकः॥तदात्रयोदशेमासिक्रियाप्रेतस्यवार्षिकी ॥१०४॥ पिण्डवर्ज्यमसंक्रान्तेसंक्रान्तेपिण्ड संयुतम् ॥ प्रतिसंवत्सरंश्राद्धमेवंमासद्वयेपिच ॥ १०५ ॥ एवंसंवत्सरेपूर्णेवार्षिकंश्राद्धमाचरेत् ॥ तस्मिन्नपिवि शेषेणभोजनीयाद्विजातयः ॥ १०६ ॥ कुर्यात्संवत्सरादूर्ध्वंश्राद्धपिंडत्रयंसदा॥ एकोद्दिष्टंनकर्तव्यंतेनस्यात्पि तृघातकः ॥ १०७॥ तीर्थश्राद्धंगयाश्राद्धंगजच्छायंचपैतृकम्॥अब्दमध्येनकुर्वीतग्रहणेनयुगादिषु ॥ १०८॥

करना चाहिय ॥१०५॥इस प्रकार संवत्सरके पूरा होनेपर वार्षिक श्राद्ध करे, उसमें भी विशेष कर ब्राह्मण भोजन करना योग्य है ॥१०६॥ संवत्सरके उपरान्त श्राद्ध पिण्ड सदा करने चाहिये, एकोद्दिष्ट न करे, उसके करनेसे पितृघातक होता है ॥१०७॥ तीर्थ श्राद्ध, गया श्राद्ध,गजच्छाय,पितृ सम्बन्धी कार्य वर्षके मध्यमें नहीं करने चाहिये,न ग्रहणमें और न युगादिमें करने चाहिये॥१०८॥

हे गरुड़ ! जब पुत्रको गया श्राद्ध करना हो तो संवत्सरके उपरान्त पितृभक्तिसे करना चाहिये ॥१०९॥ गयाश्राद्ध करनेसे पितर भव सागरसे छूट जाते हैं, गदाधरके अनुग्रहसे वे परम गतिको प्राप्त होते हैं॥११०॥तुलसीकी मञ्जरियोंसे भगवान् विष्णुकी पादुका-ओंका पूजन करे और उनके अलवादि तीर्थोंमें यथाक्रम पिण्डदान करे ॥१११॥ जो गयाके शिरमें शमीपत्रके प्रमाणसे पिण्ड

यदापुत्रेणवैकार्यंगयाश्राद्धंखगेश्वर॥तदासंवत्सरादूर्ध्वंकर्तव्यंपितृभक्तितः ॥ १०९ ॥ गयाश्राद्धात्प्रमुच्यन्ते पितरोभवसागरात् ॥ गदाधरानुग्रहेणतेयान्तिपरमांगतिम् ॥११०॥तुलसीमञ्जरीभिश्चपूजयेद्विष्णुपादुकाम् तस्यालवादितीर्थेषुपिण्डान्दद्याद्यथाक्रमम् ॥ १११ ॥ उद्धरेत्सप्तगोत्राणिकुलमेकोत्तरंशतम् ॥ शमीपत्र प्रमाणेनपिंडंदद्याद्गयाशिरे ॥११२॥ गयामुपेत्ययः श्राद्धं करोतिकुलनन्दनः ॥सफलंतस्यतज्जन्मजायतेपि तृतुष्टिदम् ॥ ११३ ॥ श्रूयतेचापिपितृभिर्गीतागाथाखगेश्वर॥इक्ष्वाकोर्मनुपुत्रस्यकलापोपवनेसुरैः ॥११४॥

देवे वह सात गोत्र और एक सौ एक कुलोंका उद्धार करे ॥११२॥ कुलको आनन्द देनेवाला जो पुरुष गयामें जाकर पिण्ड दान करता है पितरोंको संतोष देनेवाला वह उसका जन्म सफल होता है ॥११३॥ हे खगेश्वर ! हिमालयके समीप वर्तमान कलाप नामक ग्रामके उपवनमें मनुके पुत्र इक्ष्वाकुकी पितरों द्वारा गाई हुई गाथा सुनी जाती है ॥ ११४ ॥

हमारे कुलमें वे सन्मार्गशील होंगे जो गया में जाकर हमको आदर से पिण्ड देंगे॥११५॥हे गरुड ! इस प्रकार जो पुत्र आमुष्मिकी (इस लोककी) क्रिया को करता है वह सुखी और मुक्त होजाता है जैसे कौशिक के पुत्र ॥११६॥ हे गरुड ! भरद्वाज के सात पुत्र जन्म की परम्परा भोगकर गौका वध करके भी पितरों के प्रताप से मुक्त होगये ॥११७॥ दशार्ण देशों में सप्त व्याध, कालि

अपिनस्तेभविष्यन्तिकुलेसन्मार्गशीलिनः ॥ गयामुपेत्ययेपिण्डान्दास्यन्त्यस्माकमादरात् ॥ ११५ ॥ एवमामुष्मिकींताक्ष्र्ययःकरोति क्रियांसुतः॥ स स्यात्सुखीभवेन्मुक्तःकौशिकस्यात्मजायथा ॥११६ ॥ भरद्वाजात्मजाःसप्तभुक्त्वाजन्मपरंपराम् ॥ कृत्वापिगोवधंताक्ष्र्यमुक्तापितृप्रसादतः ॥ ११७ ॥ सप्तव्याधादशार्णेषुमृगाःकालिंजरेगिरौ ॥ चक्रवाकाः शरद्वीपेहंसाःसरसिमानसे ॥ ११८ ॥ तेपिजाताःकुरुक्षेत्रेब्राह्मणावेदपारगाः ॥ पितृभक्त्याचतेसर्वेगतामुक्तिंद्विजात्मजाः॥ ११९ ॥ तस्मात्सर्वप्रयत्नेनपितृभक्तोभवेन्नरः ॥ इहलोकेपरेवापिपितृभक्त्यासुखीभवेत् ॥ १२० ॥

ञ्जर पर्वत में मृग, शरद्वीप में चक्रवाक और मानसरोवर में हंस ॥ ११८ ॥ वे ही कुरुक्षेत्र में वेदके पारगामी ब्राह्मण हुये, वे ब्राह्मणों के पुत्र पितृभक्ति से मुक्ति को प्राप्त हुये ॥ ११९ ॥ अतः सब प्रयत्न से मनुष्य पितृभक्त हो, इस लोक तथा पर लोक में पितृभक्ति से सुखी होता है ॥ १२० ॥

हे गरुड ! मैंने यह सब औध्वंदैहिक कहा, यह पुत्रकी वाञ्छा को देनेवाला पवित्र और मुक्ति देनेवाला है ॥ १२१ ॥ निर्धन भी जो कोई मनुष्य इस कथा को सुनेगा वह पापों से छूटकर दान के फल को प्राप्त होता है ॥ १२२ ॥ जो कोई मेरा कहा हुआ श्राद्ध और दान करेगा, गरुड़पुराण को सुनेगा, उसका भी फल सुनो ॥ १२३ ॥ पिता सत्पुत्रों को देता है और पिता

एतत्ताक्ष्यंमयाख्यातंसर्वमेवौर्ध्वदेहिकम् ॥ पुत्रवाञ्छाप्रदंपुण्यंपितुर्मुक्तिप्रदायकम् ॥ १२१ ॥ निर्धनोपिनरः कश्चिद्यः शृणोतिकथामिमाम् ॥ सोपिपापविनिर्मुक्तोदानस्यफलमाप्नुयात् ॥१२२॥ विधिनाकुरुतेयस्तुश्राद्धंदानंमयोदितम् ॥ शृणुयाद्गारुडंचापिशृणुतस्यापियत्फलम् ॥१२३॥ पितादादातिसत्पुत्रान्गोधन ।निपितामहः॥धनदाताभवेत्सोपियस्तस्य प्रपितामहः॥१२४॥दद्याद्विपुलमन्नाद्यंवृद्धस्तुप्रपितामहः ॥ तृप्ताः श्राद्धेनतेसर्वेदत्त्वापुत्रस्यवाञ्छितम् ॥ १२५ ॥ गच्छन्तिधर्ममार्गैश्चधर्मराजस्यमन्दिरम् ॥ तत्रधर्मसभायांतेतिष्ठन्तिपरमादरात् ॥ १२६ ॥

मह गोधन, धन दाता प्रपितामह होता है ॥ १२४ ॥ वृद्ध प्रपितामह बहुत से अन्न आदिको देता है और श्राद्ध द्वारा तृप्त हुये वे सब पुत्र को वाञ्छित देकर ॥ १२५ ॥ धर्म के मार्गों से होकर धर्मराज के मन्दिर को जाते हैं वहां वे धर्म सभामें बडे आदर से स्थित होते हैं ॥ १२६ ॥

सूत बोलेः-इस प्रकार श्री विष्णु द्वारा कहा हुआ औध्र्व देहिक दान का महात्म्य है,उसको सुनकर गरुड बहुत आनन्द को प्राप्त हुये थी॥१२७॥गरुड पुराण सारोद्धार हिन्दी टीकामें तेरहवां अध्याय समाप्त हुआ॥१३॥गरुड बोलेः--यमलोक कितना है,कैसा है,किसने उसको बनाया है,उसकी सभा कैसी है,उस सभामें धर्मराज किसके साथ रहते हैं॥१॥जो धार्मिक जिन धर्ममार्गों से धर्म के मन्दिर को

सूतउवाच ॥ एवंश्रीविष्णुनाप्रोक्तमौर्ध्वदानसमुद्भवम् ॥ श्रुत्वामाहात्म्यमतुलंगरुडोहर्षमागतः ॥ १२७ ॥ इति श्रीगरुडपुराणसारोद्धारेसपिंडनादिसर्वकर्मनिरूपणंनामत्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥ गरुड वाच॥यम लोकःकियन्मात्रःकीदृशःकेननिर्मितः ॥ सभाचकीदृशीतस्यांधर्मआस्तेचकैःसह ॥१॥ येधर्मम गच्छन्ति धार्मिकाधर्ममन्दिरम् ॥ तान्धर्मानपिमार्गांश्चममाख्याहिदयानिधे ॥ २ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ शृणुतार्क्ष्य प्रवक्ष्यामियद्गम्यंनारदादिभिः ॥ तद्धर्मनगरं दिव्यंमहापुण्यैरवाप्यते ॥ ३ ॥ याम्यनैऋतयोर्मध्येपुरंवैवस्व तस्ययत् ॥ सर्ववज्रमयं दिव्यमभेद्यंतत्सुरासुरैः ॥ ४ ॥

जाते हैं, हे दया निधे ! उन धर्मों को और मार्गों को मुझको कहिये॥२॥श्री भगवान् बोलेः--हे गरुड ! जो नारद आदि देवर्षियों द्वारा जाने योग्य है वह दिव्य धर्मनगर बडे पुण्यों से मिलता है ॥३॥ याम्य और नैऋत्य के बीच में जो वैवस्वत का पुर है वह सम्पूर्ण वज्रमय है, दिव्य है, वह सुर और असुरों द्वारा भेदन करने योग्य नहीं है अर्थात् उसको देवता और असुर कोई

नहीं तोड सकता है ॥ ४ ॥ चारकोणका है, उसके चार द्वार हैं और ऊँचे परकोटे से घिरा है और चार हजार कोस का उसके विस्तार का प्रमाण कहा जाता है ॥ ५ ॥ उस पुर में बहुत सुन्दर चित्रगुप्त का मन्दिर है जो सौ कोस लम्बा चौड़ा है ॥ ६ ॥ दश योजन ऊँचा है, बडा दिव्य है और लोहे के परकोटे से घिरा हुआ है, उसमें संचार के लिये

चतुरस्रंचतुर्द्वारमुच्चप्राकारवेष्टितम् ॥ योजनानांसहस्रंहिप्रमाणेनतदुच्यते ॥५॥ तस्मिन्पुरेऽस्तिसुभगंचित्रगुप्तस्यमन्दिरम्॥पञ्चविंशतिसंख्याकैर्योजनैर्विस्तृतायतम्॥६॥ दशोच्छ्रितंमहादिव्यंलोहप्राकारवेष्टितम् ॥ प्रतोलीशतसंचारंपताकाध्वजभूषितम्॥७॥विमानगणसंकीर्णंगीतवादित्रनादितम् ॥ चित्रितंचित्रकुशलैर्निर्मितंदेवशिल्पिभिः ॥८॥ उद्यानोपवनैरम्यंनानाविहगकूजितम्॥गन्धर्वैरप्सरोभिश्चसमन्तात्परिवारितम्॥९॥

सैकडों गलियाँ हैं और पताका तथा ध्वजाओं से शोभित है ॥ ७ ॥ विमानों के समूह से भरा हुआ है, चतुर चित्रकारों द्वारा जिसमें चित्र बनाये गये हैं, और देवशिल्पियों द्वारा बनाया गया है ॥८॥ बाग और फुलवारी से मनोहर होरहा है, अनेक प्रकार के पक्षी उनमें बोल रहे हैं, गन्धर्व और अप्सराओं द्वारा चारों ओर से शोभायमान है ॥ ९ ॥

उस सभामें चित्रगुप्त अपने आसन पर बैठे हुये मनुष्यों की यथार्थ आयु की गणना करते हैं ॥ १० ॥ वे चित्रगुप्त पाप तथा पुण्य में कभी नहीं भूलते हैं, जिसने जो शुभ अथवा अशुभ कार्य इकट्ठा किया है ॥ ११ ॥ वह सब जहाँ चित्रगुप्त की आज्ञा से भोगता है, चित्रगुप्त के घर से पूर्व दिशा में ज्वर का बड़ा भारी घर है ॥ १२ ॥ दक्षिण में शूल का और लूता तथा विस्फो

तत्सभायांचित्रगुप्तःस्वासनेपरमाद्भुते ॥ संस्थितोगणयेदायुर्मानुषाणांयथातथम् ॥ १० ॥ नमुह्यतिकथंचित्ससुकृतेदुष्कृतेपिवा ॥ यद्येनोपार्जितंकर्मशुभंवायदिवाशुभम् ॥ ११ ॥ तत्सर्वंभुञ्जतेयत्रचित्रगुप्तस्यशासनात्॥चित्रगुप्तालयात्प्राच्यांज्वरस्यास्तिमहागृहम् ॥ १२ ॥ दक्षिणस्यांचशूलस्यलूताविस्फोटयोस्तथा ॥ पश्चिमेकालपाशस्यचाजीर्णस्यारुचेस्तथा ॥ १३ ॥ ऊदीच्यांराजरोगोस्तिपाण्डुरोगस्तथैवच ॥ ऐशान्यांतुशिरोर्तिःस्यादाग्नेय्यामस्तिमूर्च्छना ॥१४॥ अतिसारोनैर्ऋतेतुवायव्यांशीतदाहकौ ॥ एवमादिभिरन्यैश्च व्याधिभिःपरिवारितः ॥ १५ ॥

टका घर है, पश्चिम में कालपाशका, अजीर्ण का तथा अरुचि का घर है ॥ १३ ॥ उत्तर दिशा में राजरोग तथा पाण्डुरोग का घर है, ईशान दिशा में शिर की पीडा का और अग्निकोण में मूर्च्छा का घर है ॥ १४ ॥ नैऋत कोण में अतिसार का और वायव्य में शनि और दाह का घर है, इस तरह के अनेक रोगों से चित्रगुप्तका घर घिरा हुआ है ॥ १५ ॥

चित्रगुप्त मनुष्यों के शुभाशुभ कर्मों को लिखते हैं, चित्रगुप्त के घर के आगे बीस योजन पर ॥ १६ ॥ पुर के मध्य में भव्य दिव्य धर्मराज का रत्नमय मन्दिर है, बहुत दिव्य है,बिजली की ज्वाला और सूर्य के समान उसका तेज है ॥ १७ ॥ लम्बाई चौडाई में दो सौ योजन स्फुट है और पचास योजन के प्रमाण में ऊँचा है ॥ १८ ॥ हजारों खम्भों से धारण किया गया है वैदूर्य मणियों से भूषित है स्वर्ण से अलंकृत है, नाना प्रकार के हर्म्यों (धनीजनों के घर) और राजमहलों से भरा हुआ है

लिखतेचित्रगुप्तस्तुमानुषाणांशुभाशुभम् ॥ चित्रगुप्तालयादग्रेयोजनानांचविंशति ॥ १६ ॥ पुरमध्येमहादिव्यंधर्मराजस्यमन्दिरम् ॥ अस्तिरत्नमयंदिव्यंविद्युज्ज्वालार्कवर्चसम् ॥१७॥ द्विशतंयोजनानांचविस्तारायामतःस्फुटम्॥पञ्चाशच्चप्रमाणेनयोजनानांसमुच्छ्रितम्॥१८॥धृतंस्तम्भसहस्रैश्चवैडूर्यमणिमण्डितम् ॥ काञ्चनालंकृतंनानाहर्म्यप्रासादसंकुलम्॥१९॥शारदाभ्रनिभंरुक्मकलशैःसुमनोहरम् ॥चित्रस्फटिकसोपानंवज्रकुट्टिमशोभितम्॥२०॥ मुक्ताजालगवाक्षंचपताकाध्वजभूषितम्॥घंटानकनिनादाढ्यंहेमतोरणमण्डितम् २१॥

॥ १९ ॥ शरद काल के मेघ के समान है और स्वर्ण के कलशों से सुमनोहर है चित्रविचित्र स्फटिक सीढियाँ बनी हुई हैं और वज्र की कुट्टिम (फर्स) से शोभायमान है ॥ २० ॥ झरोखों में मोतियों की झालरें लटक रही हैं और पताका तथा ध्वजाओं से शोभित है, घण्टा और नगाड़ों के शब्द से युक्त है और स्वर्ण के तोरणों से सुशोभित है ॥ २१ ॥

नाना प्रकार के आश्चर्य रूप हैं, स्वर्ण के सैकड़ों किवाड़ों से भरा है, बिना कांटों के अनेक तरह के वृक्ष लता और गुल्मों से सुशोभित है ॥ २२ ॥ इत्यादिक तथा और भी भूषणों से सदा शोभित है और अपने योग के प्रभाव से विश्वकर्मा द्वारा बनाया गया है ॥ २३ ॥ उसमें सौ योजन की चौडी दिव्य सभा है जो सूर्य के समान प्रकाश वाली चमकीली और सब तरह से कामरूपिणी है ॥ २४ ॥ न तो बहुत गर्म है और न बहुत ठण्डी, मनको अत्यन्त आनन्द देनेवाली है, उसमें न तो शोक है

नानाश्चर्यमयंस्वर्णकपाटशतसंकुलम् ॥ नानाद्रुमलतागुल्मैर्निष्कण्टैःसुविराजितम् ॥ २२ ॥ एवमादिभिरन्यैश्चभूषणैर्भूषितंसदा ॥ आत्मयोगप्रभावैश्चनिर्मितं विश्वकर्मणा ॥ २३ ॥ तस्मिन्नस्तिसभादिव्याशतयोजनमायता॥अर्कप्रकाशाभ्राजिष्णुःसर्वतःकामरूपिणी ॥२४॥ नातिशीतानचात्युष्णामनसोत्यन्तहर्षिणी ॥ नशोकोनजरातस्यांक्षुत्पिपासेनचाप्रियम् ॥ २५ ॥ सर्वेकामाःस्थितायस्यांयेदिव्यायेचमानुषाः॥रसवच्चप्रभूतंचभक्ष्यंभोज्यंचसर्वशः ॥ २६ ॥ रसवन्तिचतोयानिशीतान्युष्णानिचैवहि ॥ पुण्याः शब्दादयस्तस्यां नित्यंकामफलद्रुमाः ॥ २७ ॥

और न बुढापा है, भूख प्यास तथा अप्रिय नहीं है ॥ २५ ॥ दिव्य तथा मानुष सब काम उसमें स्थित हैं, अत्यन्त स्वादिष्ट और बहुत सा भोजन सर्वत्र है ॥ २६ ॥ बहुत मीठे स्वादिष्ट शीतल और उष्ण दोनों प्रकार के जल, पवित्र शब्दादि विषय और सदा कामना के देने वाले वृक्ष उस सभामें वर्तमान हैं ॥ २७॥

हे गरुड ! वह सभा संकडी नहीं, विस्तीर्ण है, मनोहर है और कामना की देने वाली है, बहुत काल तक तप करके विश्वकर्मा ने बनाई है ॥ २८ ॥ उसमें उग्र तप करने वाले जाते हैं और सुन्दर व्रत करने वाले तथा सत्य बोलने वाले, शान्त स्वभाव वाले सन्यासी और सिद्ध, पवित्र कर्मों से पवित्र जन उस सभा में जाते हैं ॥ २९ ॥ वे सब तेजोमय देहधारी, निर्मल वस्त्रों से अलङ्कत पुरुष अपने किये हुये कर्मों से अलंकृत होकर उसमें स्थित रहते हैं ॥ ३० ॥ उस सभामें वह भगवान् धर्म अनु

असंबाधाचसाताक्ष्यर्यरम्याकामागमासभा॥दीर्घकालंतपस्तप्त्वानिर्मिताविश्वकर्मणा ॥२८॥ तामुग्रतपसोया न्तिसुव्रताःसत्यवादिनः ॥ शान्ताः संन्यासिनःसिद्धा पूताः पूतेन कर्मणा॥२९॥सर्वेभास्वरदेहास्तेऽलंकृताविर जोम्बराः ॥ स्वकृतैःकर्मभिःपुण्यैस्तत्रतिष्ठन्तिभूषिताः॥३०॥ तस्यांसधर्मोभगवानासनेऽनुपमेशुभे॥दशयोज नविस्तीर्णेसर्वरत्नैःसुमण्डिते॥३१॥उपविष्टःसतांश्रेष्ठश्छत्रशोभितमस्तकः॥कुण्डलालंकृतःश्रीमान्महामुकुट मंडितः ॥ ३२ ॥ सर्वालङ्कारसंयुक्तोनीलमेघसमप्रभः ॥ वालव्यजनहस्ताभिरप्सरोभिश्चवीजितः ॥ ३३ ॥

पमेय, सुन्दर, दश योजन विस्तार वाले सब रत्नों से जड़े हुये आसन पर ॥ ३१ ॥ बैठे हुये सज्जनों में श्रेष्ठ, जिनका मस्तक छत्र से शोभित है, कुण्डलों से अलङ्कत और बडे मुकुट से शोभित है ॥ ३२ ॥ सब तरह के अलङ्कारों से युक्त, नीले मेघ के समान कान्ति वाले, हाथों में चामर ली हुई अप्सराओं से पवन किये जा रहे हैं ॥ ३३ ॥

गन्धर्वों के समूह और अप्सरा गण गाने बजाने से चारों ओर से जिनकी सेवा कर रहे हैं ॥ ३४ ॥ हाथ में पाश धारण किये मृत्यु और बलवान् काल, चित्र रूप वाले चित्रगुप्त और कृतान्त द्वारा सेवित ॥३५॥ पाश तथा दण्ड धारण किये हुये, उग्र रूप धारी, अपने तुल्य बल वाले नाना प्रकार के सुन्दर योद्धाओं से वेष्टित ॥ ३६ ॥ हे गरुड़ ! अग्निष्वात्त पितर और जो

गन्धर्वाणांसमूहाश्चसंघशश्चाप्सरोगणाः ॥ गीतवादित्रनृत्याद्यैः परितः सेवयन्ति तम् ॥ ३४ ॥ मृत्युनापाश हस्तेनकालेनचबलीयसा ॥ चित्रगुप्तेनचित्रेण कृतान्तेननिषेवितः ॥३५॥ पाशदण्डधरैरुग्रैर्निदेशवशवर्ति भिः ॥ आत्मतुल्यबलैर्नानासुभटैःपरिवारितः ॥ ३६ ॥ अग्निष्वात्ताश्चपितरःसोमपाश्चोष्मपाश्चये॥स्वधाव न्तोबर्हिषदोमूर्ताऽमूर्ताश्चयेखग ॥३७॥ अर्यमाद्याः पितृगणामूर्तिमन्तस्तथापरे॥ सर्वेतेमुनिभिःसार्धंधर्मराज मुपासते ॥ ३८ ॥ अत्रिर्वसिष्ठःपुलहोदक्षः क्रतुरथाङ्गिराः ॥जामदग्न्योभृगुश्चैवपुलस्त्यागस्त्यनारदाः॥३९॥

सोमपा तथा उष्मपा हैं और स्वधावन्त तथा बर्हिषद मूर्तिमान् और जो अमूर्तिमान् ॥ ३७ ॥ अर्यमा आदि पितृ गण हैं तथा और मूर्तिमान हैं वे सब मुनियों समेत धर्मराज की उपासना करते हैं ॥ ३८ ॥ अत्रि, वशिष्ठ, पुलह, दक्ष, क्रतु, अंगिरा, जाम दग्न्य, भृगु, पुलस्त्य, अगस्त्य और नारद ॥ ३९ ॥

ये तथा और बहुत से पितृराज के सभासद हैं उनकी नामों से तथा कर्मों से संख्या नहीं होसकती है ॥ ४० ॥ धर्मशास्त्र की व्याख्याओं से यथार्थ निर्णय करने वाले वे सब परमेष्ठी की आज्ञा से धर्मराज की सेवा करते हैं ॥ ४१ ॥ सूर्यवंशी तथा चन्द्र वंशी धर्मज्ञ नृपतिगण सभा में धर्मराजकी सेवा करते हैं ॥ ४२ ॥ मनु, दिलीप, मान्धाता, सगर, भगीरथ, अम्बरीष, अनरण्य,

एतेचान्येचबहवःपितृराजसभासदः॥ नशक्याःपरिसंख्यातुंनामभिःकर्मभिस्तथा ॥ ४० ॥ व्याख्याभिर्धर्मशास्त्राणांनिर्णेतारोयथातथम् ॥ सेवन्तेधर्मराजंतेशासनात्परमेष्ठिनः ॥ ४१ ॥ राजानः सूर्यवंशीयाः सोमवंश्यास्तथापरे ॥ सभायांधर्मराजंतेधर्मज्ञाः पर्युपासते ॥ ४२ ॥ मनुर्दिलीपोमान्धातासगरश्चभगीरथः ॥ अम्बरीषोनरण्यश्चमुचुकुन्दोनिमिः पृथुः ॥ ४३ ॥ ययातिर्नहुषः पूरुर्दुष्यन्तश्चशिबिनलः ॥ भरतः शंतनुः पांडुः सहस्रार्जुनएवच ॥ ४४ ॥ एतेराजर्षयः पुण्याः कीर्तिमन्तो बहुश्रुताः ॥ इष्ट्वाश्वमेधैर्बहुभिर्जाता धर्मसभासदः ॥ ४५ ॥ सभायां धर्मराजस्यधर्मएवप्रवर्तते ॥ नतत्रपक्षपातोहिनानृतंनचमत्सरः ॥ ४६ ॥

मुचुकुन्द, निमि और पृथु ॥ ४३ ॥ ययाति, नहुष, पुरु, दुष्यन्त, शिबि, नल, भरत, शन्तनु, पाण्डु और सहस्रार्जुन ॥ ४४ ॥ पवित्र कीर्तिमान् और बहुश्रुत ये राजा बहुत से अश्वमेधों से यजन करके धर्म के सभासद हुये ॥ ४५ ॥ धर्मराज की सभा में धर्म ही प्रवृत्त होता है, वहाँ पक्षपात नहीं है, न झूंठ है और न मत्सर है ॥ ४६ ॥

सभा के सभी सदस्य शास्त्र के ज्ञाता और धर्मपरायण हैं, उस सभा में सदा धर्मराज की उपासना करते हैं ॥ ४७ ॥ हे गरुड़ ! महात्मा धर्मराज की ऐसी सभा है, उसको जो पापी दक्षिण मार्ग से जाते हैं वे नहीं देख पाते हैं ॥ ४८ ॥ धर्मराज के पुर में जाने के लिये चार मार्ग होते हैं, पापियों के जाने में पहला वह तो तुमको कह दिया है ॥ ४९ ॥ पूर्व आदि तीन मार्गोंसे जो धर्म

सभ्याः सर्वे शास्त्रविदः सर्वे धर्मपरायणाः ॥ तस्यां सभायांसततंवैवस्वतमुपासते ॥४७॥ ईदृशीसासभाता क्ष्र्यधर्मराजमहात्मनः ॥ नतांपश्यन्तियेपापादक्षिणेनपथागताः॥४८॥ धर्मराजपुरेगन्तुंचतुर्मार्गाभवन्तिच॥ पापिनांगमनेपूर्वंसतुतेपरिकीर्तितः ॥४९॥ पूर्वादिभिस्त्रिभिर्मार्गैर्येगताधर्ममन्दिरे॥तेहि सुकृतिनः पुण्यैस्त स्यांगच्छन्तितान्छृणु ॥ ५० ॥ पूर्वमार्गस्तुतत्रैकः सर्वभोगसमन्वितः ॥ पारिजाततरुच्छायाच्छादितो रत्नमण्डितः ॥ ५१ ॥ विमानगणसङ्कीर्णोहंसावलिविराजितः ॥ विद्रुमारामसंकीर्णपीयूषद्रवसंयुतः ॥५२॥

के मन्दिर में गये हैं वे पुण्यात्मा पुण्यों से उसमें जाते हैं उनको सुनो ॥ ५० ॥ वहाँ एक पूर्व का मार्ग है, वह सब भोगों से युक्त है तथा पातरिजात (देवतरु) की छाया से आच्छादित और रत्नों से शोभित है ॥ ५१ ॥ विमानों के समूह से भरा हुआ है, हंसों की पंक्तियों से शोभायमान, विद्रुम(मूंगा) के बगीचों से भरा हुआ, अमृत रूपी जल से त्त्युु है ॥ ५२ ॥

उस मार्ग से पवित्र ब्रह्मर्षि और निर्मल राजर्षि जाते हैं और उसी मार्ग से अप्सराओं के गण, गन्धर्व, विद्याधर और नागराज जाते हैं ॥ ५३ ॥ देवताओं की आराधना करने वाले, शिवकी भक्ति में तत्पर, ग्रीष्मऋतु में जल की प्याऊ लगाने वाले, माघ के महीने में शीत से बचाव के लिये लकड़ी देने वाले ॥ ५४ ॥ वर्षाऋतु में विरक्तों को दान और मान से आश्रय देने

तेनब्रह्मर्षयोयान्तिपुण्याराजर्षयोमलाः ॥ अप्सरोगणगन्धर्वविद्याधरमहोरगाः॥ ५३ ॥ देवताराधकाश्चान्ये शिवभक्तिपरायणाः॥ ग्रीष्मेप्रपादानरतामाघेकाष्ठप्रदायिनः ॥ ५४ ॥ विश्रामयन्तिवर्षासुविरक्तान्दानमानतः ॥ दुखितस्यामृतंब्रूतेददतेह्याश्रमंतुये ॥ ५५ ॥ सत्यधर्मरतायेचक्रोधलोभविवर्जिताः ॥ पितृमातृषुयेभक्तागुरुशुश्रूषणेरताः ॥ ५६ ॥ भूमिदागृहदागोदाविद्यादानप्रदायकाः ॥ पुराणवक्तृश्रोतारः पारायणपरायणाः ॥ ५७॥ एतेसुकृतिनश्चान्येपूर्वद्वारेविशन्तिच ॥ यान्तिधर्मसभायांतेसुशीलाः शुद्धबुद्धयः ॥ ५८॥

वाले, दुःखियों को अमृत के समान बचन बोलने वाले और आश्रय देने वाले ॥ ५५ ॥ सत्य धर्म में रत, क्रोध लोभ से रहित, माता पिता के भक्त, गुरु की सेवामें रत ॥ ५६ ॥ भूमि. गौ और विद्या दान देने वाले, पुराणों के वक्ता, श्रोता और पारायण में तत्पर ॥ ५७ ॥ ये पुण्यात्मा तथा अन्य पूर्व के द्वार से प्रवेश करते हैं सुशील और शुद्ध बुद्धि वे धर्म सभा में जाते हैं ॥ ५८ ॥

दूसरा उत्तर का मार्ग सैकडों महारथों से और पालकियों से युक्त है, हरि चन्दन (देवतरु) से भूषित है ॥ ५९ ॥ हंस और सारसों से भरा हुआ है, चक्रवाकों से शोभित है, अमृत रूप जल से भरा हुआ सरोवर वहाँ शोभायमान है ॥ ६० ॥ इस मार्ग से वैदिक (वेदका पठन पाठन करने वाले) और अभ्यागतों की पूजा करने वाले जाते हैं, दुर्गा तथा सूर्य के भक्त और पर्वों में

द्वितीयस्तूत्तरोमार्गोमहारथशतैर्वृतः ॥ नरयानसमायुक्तोहरिचन्दनमण्डितः ॥५९॥ हंससारससंकीर्णश्चक्रवाकोपशोभितः ॥ अमृतद्रवसंपूर्णस्तत्रभातिसरोवरः ॥ ६० ॥ अनेनवैदिकायान्तितथाभ्यागतपूजकाः ॥ दुर्गाभान्वोश्चयेभक्तास्तीर्थस्नाताश्चपर्वसु ॥६१॥येमृताधर्मसंग्रामेऽनशनेनमृताश्चये॥वाराणस्यांगोग्रहेचतीर्थतोयेमृताविधेः ॥ ६२ ॥ ब्राह्मणार्थेस्वामिकार्येतीर्थक्षेत्रेषुयेमृताः ॥ येमृतादेवविध्वंसेयोगाभ्यासेनयेमृताः ॥ ६३ ॥ सत्पात्रपूजकानित्यं महादानरताश्चये ॥ प्रविश्यन्त्युत्तरेद्वारेयान्तिधर्मसभांचते ॥ ६४ ॥

तीर्थ स्नान करने वाले जाते हैं ॥ ६१ ॥ जो धर्म युद्ध में मारे गये हैं और जो अनशन से मरे हैं, काशी में, गौओं के घर में और तीर्थ के जल में जो मरते हैं ॥६२॥ ब्राह्मण के लिये; स्वामी के कार्य में तथा क्षेत्र में जो मरते हैं, जो देवता के विध्वंस में और योगाभ्यास में मरते हैं ॥६३॥ जो सत्पात्र को पूजने वाले हैं, जो महादान में रत रहते हैं ये सब उत्तर के द्वार में प्रवेश करके धर्म सभा में जाते हैं॥६४॥

तीसरा पश्चिम का मार्ग है वह रत्नों के बने हुये मन्दिर से शोभित है और सदा अमृतरूप जल से भरी हुई बावडियों से शोभायमान है ॥ ६५ ॥ और ऐरावत के कुल में उत्पन्न मत्त हाथियों से भरा हुआ है, उच्चैःश्रवा से उत्पन्न अश्वरत्नों से युक्त है ॥ ६६ ॥ इस मार्ग से आत्मपरायण, उत्तम शास्त्र का चिन्तन करने वाले, अनन्य विष्णु भक्त और गायत्री मन्त्र को जपने वाले जाते हैं॥६७॥

तृतीयः पश्चिमोमार्गोरत्नमन्दिरमंडितः॥सुधारससदापूर्णःदीर्घिकाभिर्विराजितः ॥ ६५ ॥ ऐरावतकुलोद्भूतमत्तमातङ्गसंकुलः ॥ उच्चैःश्रवःसमुत्पन्नहयरत्नसमन्वितः ॥ ६६ ॥ एतेनात्मपराःयान्तिसच्छास्त्रपरिचिन्तकाः ॥ अनन्यविष्णुभक्ताश्चगायत्रीमन्त्रजापकाः ॥ ६७ ॥ परहिंसापरद्रव्यपरवादपराङ्मुखाः ॥ स्वदारनिरताःसन्तःसाग्निकाःवेदपाठकाः॥६८॥ब्रह्मचर्यव्रतधराःवानप्रस्थास्तपस्विनः॥श्रीपादसंन्यासपराः समलोष्टाश्मकाञ्चनाः ॥६९॥ ज्ञानवैराग्यसंपन्नाः सर्वभूतहितेरताः ॥ शिवविष्णुव्रतकराः कर्मब्रह्मसमर्पकाः ॥७०॥

पर हिंसा, पर द्रव्य, और पर वाद से पराङ्मुख, अपनीस्त्रीमें आसक्त,सज्जन, अग्नि होम करने वाले, वेद पाठी ॥६८॥ ब्रह्मचर्य व्रत को धारण करने वाले, वानप्रस्थ तथा तपस्वी, सन्यास में लगे हुये, कंकड पत्थर और स्वर्ण में समान दृष्टि वाले॥ ६९ ॥ ज्ञान और वैराग्य से सम्पन्न सब प्राणियों के हित में लगे हुये, शिव तथा विष्णु के व्रतों को करने वाले कर्मों को ब्रह्म में समर्पण करनेवाले ॥ ७० ॥

तीनों ऋणुओंसे छूंटे हुये और सदा पञ्च यज्ञमें रत पितरोंको श्राद्ध देनेवाले, समय पर संध्योपासन करनेवाले ॥७१॥ नीचोंकी संगतिसे बचे हुये और सत्संगतिमें लगे हुये, ये सब अप्सरा गणोंसे युक्त, श्रेष्ठ विमानोंमें बैठे हुये ॥७२॥ अमृत पान करते हुये धर्ममन्दिर में प्रवेश करते हैं, पश्चिमके द्वारमें होकर प्रविष्ट होते हैं और धर्म सभाके मध्यमें जाते हैं ॥७३॥ यम उनको आये

ऋणैस्त्रिभिर्विनिर्मुक्ता पञ्चयज्ञरताः सदा ॥ पितॄणांश्राद्धदातारःकालेसंध्यामुपासकाः ॥ ७१ ॥ नीचसंगवि
निर्मुक्ताः सत्संगतिपरायणाः ॥ एतेप्सरोगणैर्युक्तःाविमानवरसंस्थिताः॥ ७२ ॥ सुधापानंप्रकुर्वन्तोयान्तितेध
र्ममंदिरम् ॥ विशन्तिपश्चिमद्वारेयान्तिधर्मसभान्तरे ॥ ७३ ॥ यमस्तानागतान्दृष्ट्वास्वागतंवदतेमुहुः ॥ समु
त्थानंचकुरुतेतेषांगच्छतिसंमुखम् ॥ ७४ ॥ तदाचतुर्भुजोभूत्वाशंखचक्रगदासिभृत्॥पुण्यकर्मरतानांचस्नेहा
न्मित्रवदाचरेत् ॥७५॥ सिंहासनंचददतेनमस्कारं करोति च॥पाद्यार्घंकुरुतेपश्चात्पूजतेचन्दनादिभिः ॥७६॥

हुये देखकर बारम्बार स्वागत करते हैं और सन्मुख आनेपर यम अभ्युत्थान करते हैं ॥७४॥ उस समयचतुर्भुज होकर शंख, चक्र गदा, और खड्ग धारण किये हुये यम पुण्य कर्ममें रत जनोंके साथ स्नेहसे मित्रवत् आचरण करते हैं ॥ ७५ ॥ सिंहासन देते हैं और नमस्कार करते हैं पाद्यार्घ देनेके बाद चन्दन आदिसे पूजन करते हैं ॥ ७६ ॥

हे सभाके लोगो ! ज्ञानीको बड़े आदरसे नमस्कार करो, यह मेरे मण्डलको भेदकर ब्रह्म लोकको जायगा ॥७७॥ हे बुद्धिमानोंमें श्रेष्ठ और नरकके क्लेशों से डरने वालो, आपने पुण्य कर्मोंसे सुख देनेवाला देवत्व सिद्ध किया है ॥७८॥ दुर्लभ मनुष्य शरीरको पाकर जो नित्य साधन नहीं करता है वह घोर नरकमें जाता है, उससे अधिक मूर्ख और कौन है ? अर्थात् कोई नहीं ॥७९॥ अस्थिर

नमस्कुर्वन्तुभोःसभ्याज्ञानिनंपरमादरात् ॥ एषःमेमण्डलंभित्त्वाब्रह्मलोकंप्रयास्यति॥ ७७ ॥ भोभोबुद्धिमतांश्रेष्ठाःनरकक्लेशभीरवः ॥ भवद्भिःसाधितंपुण्यैर्देवत्वंसुखदायकम् ॥ ७८ ॥ मानुषंदुर्लभंप्राप्यनित्यंयस्तुन साधयेत् ॥ सयातिनरकंघोरंकोन्यस्तस्मादचेतनः ॥ ७९ ॥ अस्थिरेणशरीरेणयोऽस्थिरैश्चधनादिभिः ॥ संचिनोतिस्थिरंधर्मंसएकोबुद्धिमान्नरः ॥ ८० ॥ तस्मात्सर्वप्रयत्नेनकर्तव्योधर्मसंचयः ॥ गच्छध्वंपुण्यवत्स्थानंसर्वभोगसमन्वितम् ॥ ८१ ॥ इतिधर्मवचः श्रुत्वा तं प्रणम्य सभांचताम् ॥ अमरैः पूज्यमानास्तेस्तूयमाना मुनीश्वरैः ॥ ८२ ॥

शरीर और अस्थिर धनादिकोंसे जो पुरुष स्थिर धर्मको इकट्ठा करता है वही एक बुद्धिमान् है ॥८०॥ अतः सब यत्नोंसे धर्मका संग्रह करना चाहिये, सब भोगोंसे युक्त पुण्य स्थानको जाइये ॥ ८१ ॥ इस प्रकार धर्मके वचनोंको सुनकर वे उनको तथा उस सभाको प्रणाम कर देवताओं द्वारा पूजा किये हुये और मुनीश्वरों द्वारा स्तुति किये गये ॥ ८२ ॥

विमानोंके समूहसे घिरे हुये परम पदको जाते हैं और कई बडे आदरसे धर्म सभामें स्थित रहते हैं ॥८३॥ वहाँ कल्पके अन्ततक रहकर और दिव्य भोगोंको भोगकर पुण्य शेष होने से पुण्यदर्शन मनुष्य लोकको प्राप्त होता है ॥८४॥ महाधनी, सर्वज्ञ, सब शास्त्रोंमें चतुर, वह जीव फिर अपनी आत्माके विचारसे उसके बाद मोक्षको प्राप्त होता है ॥८५॥ तुम्हारे द्वारा पूछे गये यमालय

विमानगणसंकीर्णाः प्रयान्तिपरमंपदम् ॥ केचिद्धर्मसभायांहितिष्ठन्तिपरमादरात् ॥ ८३ ॥ उषित्वातत्रकल्पांतंभुक्त्वाभोगानमानुषान्॥प्राप्नोतिपुण्यशेषेणमानुष्यंपुण्यदर्शनम् ॥ ८४ ॥ महाधनीचसर्वज्ञः सर्वशास्त्रविशारदः॥पुनःस्वात्मविचारेणततोयातिपरांगतिम्॥८५॥एतत्तेकथितंसर्वंत्वयापृष्टंयमालयम्॥इदंशृण्वन्नरोभक्त्याधर्मराजसभांव्रजेत्॥८६॥इतिश्रीसारोद्धारेगरुडपुराणेधर्मराजनगरनिरूपणोनामचतुर्दशोऽध्यायः॥१४

गरुडउवाच ॥ धर्मात्मास्वर्गतिंभुक्त्वाजायतेविमलेकुले ॥ अतस्तस्यसमुत्पत्तिजननीजठरेवद ॥ १ ॥

का वर्णन मैंने तुमको सब कहा है, इसको भक्ति पूर्वक सुनता हुआ मनुष्य धर्मराजकी सभामें जाता है ॥८६॥ श्री गरुडपुराण सारोद्धार हिन्दी टीकामें चौदहवां अध्याय समाप्त हुआ ॥ १४ ॥ गरुड बोलेः-धर्मात्मा स्वर्गकी गतिको छोड़कर निर्मल कुल में उत्पन्न होता है अतः माताके पेटमें उसकी उत्पत्ति कहिये ॥ १ ॥

सुकृती मनुष्य इस देहमें जिस तरह विचार करता है वैसे मैं सुनना चाहता हूँ, हे करुणानिधे ! मुझको कहिये ॥२॥ श्री भगवान् बोलेः-हे गरुड ! तुमने उत्तम प्रश्न किया है मैं तुमको कहता हूँ, जिसके जानने मात्रसे ही सर्वज्ञपन हो जाताहै ॥३॥ और शरीरका पारमार्थिक स्वरूप कहूँगा जो कि ब्रह्माण्डके गुणोंसे सम्पन्न है और योगियोंकी धारणा का आस्पद है ॥४॥ योगी जैसे इसमें षट्

यथाविचारंकुरुतेदेहेऽस्मिन्सुकृतीजनः ॥ तथाहंश्रोतुमिच्छामिवदमेकरुणानिधे ॥२॥ श्रीभगवानुवाच ॥ साधु पृष्टंत्वयाताक्ष्र्यपरंगोप्यंवदामिते ॥ यस्यविज्ञानमात्रेणसर्वज्ञत्वंप्रजायते ॥ ३ ॥ वक्ष्यामिचशरीरस्यस्वरूपं पारमार्थिकम् ॥ ब्रह्मांडगुणसंपन्नंयोगिनांधारणास्पदम् ॥ ४ ॥ षट्चक्रचिन्तनंयस्मिन्यथाकुर्वंतियोगिनः॥ ब्रह्मरन्ध्रेचिदानन्दरूपध्यानन्तथाशृणु ॥ ५ ॥ शुचीनांश्रीमतांगेहेजायतेसुकृतीयथा॥ तथाविधानंनियमंत त्पित्रोः कथयामिते ॥६॥ ऋतुकालेतुनारीणांत्यजेद्दिनचतुष्टयम्॥तावन्नालोकयेद्वक्त्रंपापंवपुषिसंभवेत्॥७॥

चक्रका चिन्तवन करता है और ब्रह्मरन्ध्रमें चिदानन्द रूपका जैसे ध्यान करता है, वह सुनो॥५॥ जैसे सुकृती शुद्ध और श्रीमन्तोंके घरमें उत्पन्न होता है, वैसा विधान और नियम उनके माता पिताका कहूँगा ॥ ६ ॥ ऋतु कालमें स्त्रियोंके चार दिन त्यागकर जबतक शरीरमें पाप (इन्द्रकी ब्रह्म हत्यासे उत्पन्न) रहे, तबतक स्त्रियोंका मुख न देखे ॥ ७ ॥

वह स्त्री वस्त्रों सहित स्नान करके चौथे दिन शुद्ध होती है और सात दिन बाद पितृ और देवताओंके व्रत पूजनके योग्य होती है ॥ ८ ॥ सात दिनके अन्दर जो गर्भ होता है वह मलिनाशय होता है, यहाँ बहुधा पुत्र आठ दिनके मध्यमें होता है ॥ ९ ॥ युग्म रात्रियोंमें पुत्र उत्पन्न होता है अतः पहले के सात दिन छोड़कर युग्म रात्रियोंमें स्त्री गमन करे ॥ १० ॥ सोलह ऋतुकी

स्नात्वासचैलंसानारी चतुर्थेहनिशुध्यति ॥सप्ताहात्पितृदेवानांभवेद्योग्याव्रतार्चने ॥८॥ सप्ताहमध्येयोगर्भः संभवेन्मलिनाशयः॥प्रायशःसंभवन्त्यत्रपुत्रास्त्वष्टाहमध्यतः ॥ ९ ॥ युग्मासुपुत्राजायन्तेस्त्रियोऽयुग्मासुरात्रिषु ॥पूर्वसप्तकमुत्सृज्यतस्माद्युग्मासुसंविशेत् ॥ १० ॥ षोडशर्तुनिशाःस्त्रीणांसामान्याः समुदाहृताः॥यावैचतुर्दशीरात्रिर्गर्भस्तिष्ठतितत्रवै ॥ ११ ॥ गुणभाग्यनिधिः पुत्रस्तदाजायेतधार्मिकः॥सानिशाप्राकृतैर्जीवैर्नलभ्येतकदाचन ॥१२॥ पञ्चमेहनिनारीणांकार्यंमधुरभोजनम्॥कटुक्षारंचतीक्ष्णंचत्याज्यमुष्णंचदूरतः॥१३॥

रातें स्त्रियोंकी सामान्यसे कही गई है और निश्चय करके जो चौदहवीं रात्रि है उसमें गर्भकी स्थिति होती है ॥११॥ तब गुण और भाग्यका स्थान धर्मात्मा पुत्र उत्पन्न होता है, वह रात्रि साधारण जीवोंको कभी नहीं मिलती है ॥ १२ ॥ पांचवें दिन स्त्रियोंको मधुर भोजन करना चाहिये और कडुवे, खारे तीक्ष्ण और उष्ण भोजनको दूरसे त्यागना चाहिये ॥ १३ ॥

वह क्षेत्र औषधियोंका पात्र है और बीज अमृत है स्वामी नर उस अमृत बीजको उस क्षेत्रमें वपन (बो)कर धर्मात्मा पुत्र रूप फलको प्राप्त होता है ॥१४॥ पान खाये हुये, फूल तथा चंदन धारण किये हुये और शुद्ध वस्त्र पहिने हुये पुरुष मनमें धर्मको धारणकर उत्तम शय्यापर सोवे ॥१५॥ रति कालमें चित्तकी जैसी कल्पना होती है वैसे ही स्वभावका जीव कुक्षि (कोख) में प्रवेश करता है

तत्क्षेत्रमोषधीपात्रंबीजंचाप्यमृतायनम् ॥ तस्मिन्नुप्त्वानरः स्वामीसम्यक्फलमवाप्नुयात् ॥१४॥ ताम्बूल पुष्पश्रीखण्डैः संयुक्तःशुचिवस्त्रभृत् ॥ धर्ममादायमनसिसुतल्पंसंविशेत्पुमान् ॥१५॥ निषेकसमयेयादृङ्नर चित्तविकल्पना ॥ तादृक्स्वभावसंभूतिर्जन्तुर्विशतिकुक्षिगः ॥ १६ ॥ चैतन्यंबीजभूतंहिनित्यंशुक्रेप्यवस्थि तम् ॥ कामश्चित्तंचशुक्रंचयदाह्येकत्वमाप्नुयात् ॥१७॥ तदाद्रावमवाप्नोतियोषिद्गर्भाशयेनरः॥शुक्रशोणि तसंयोगात्पिण्डोत्पत्तिःप्रजायते॥१८॥ परमानन्ददःपुत्रोभवेद्गर्भगतःकृती ॥ भवन्तितस्यनिखिलाःक्रियाः पुंसवनादिकाः॥१९॥जन्मप्राप्नोतिपुण्यात्माग्रहेषूच्चगतेषु च॥तज्जन्मसमयेविप्राःप्राप्नुवन्तिधनं बहु॥२०॥

॥१६॥ बीजरूप हुआ चैतन्य सदा वीर्यमें स्थित रहता है,काम,चित्त और शुक्र जब एकताको प्राप्त होता है ॥१७॥ तब मनुष्य स्त्री के गर्भाशयमें द्रावको प्राप्त होता है और शुक्र तथा शोणितके संयोगसे पिंडकी उत्पत्ति होती है ॥१८॥ गर्भमें प्राप्त पुण्यात्मा पुत्र परम आनन्दको देनेवाला होता है उसकी पुंसवनादिक सम्पूर्ण क्रियाएँ होती हैं ॥१९॥ उच्च स्थानोंमें प्राप्त ग्रहोंमें पुण्यात्मा जन्म

पाता है उसके जन्म समयमें ब्राह्मण बहुतसा धन पाते हैं ॥२०॥ विद्या और विनयसे संपन्न वह पिताके घरमें बढता है और सज्जनों के संगसे वह सब शास्त्रोंमें चतुर होता है ॥२१॥ पूर्वजन्ममें किये जप, तीर्थ और महापुण्यके फलके उदय होनेसे युवा अवस्थामें दिव्य अङ्गनादिको भोगनेवाला होता है॥ २२॥ उसके बाद आत्मा और अनात्माके विचारमें सदा यत्न करता है और अध्यारोप तथा अपवादसे ब्रह्मका चिन्तन करता है ॥२३॥ अन्वय करनेवाले भी इस ब्रह्मके असङ्ग यह पुरुष संग रहित है, इस बातको

विद्याविनयसंपन्नोवर्धतेपितृवेश्मनि॥सतांसङ्गेनसभवेत्सर्वागमविशारदः ॥ २१ ॥ दिव्याङ्गनादिभोक्तास्यात्तारुण्येदानवान्धनी ॥ पूर्वकृततपस्तीर्थमहापुण्यफलोदयात्॥२२॥ततश्चयततेनित्यमात्मानात्मविचारणे ॥ अध्यारोपापवादाभ्यांकुरुतेब्रह्मचिन्तनम् ॥२३॥ अस्यासंगावबोधायब्रह्मणोन्वयकारिणः॥ क्षित्याद्यनात्मवर्गस्य गुणांस्तेकथयाम्यहम् ॥२४॥ क्षितिर्वारिहविर्भोक्तावायुराकाशवएच ॥ स्थूलभूताइमेप्रोक्ताःपिण्डोयंपाञ्चभौतिकः ॥२५॥ त्वगस्थिनाड्योरोमाणिमांसञ्चैवखगेश्वर॥एतेपञ्चगुणाभूमेर्मयातेपरिकीर्तिताः ॥२६॥

जाननेके लिये पृथ्वी आदि जो अनात्मवर्ग पञ्चभूत हैं उनके गुणोंको मैं तुमको कहता हूं ॥२४॥ पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश ये पांचों स्थूल भूत कहे गये हैं, यह देह पिण्ड इन पांच भूतोंसे बना है ॥ २५ ॥ हे गरुड ! त्वचा, हड्डी, नाडी, रोम और मांस ये पांच गुण भूमिके मैंने तुमको कहे ॥ २६ ॥

लार, मूत्र, वीर्य, मज्जा, और पांचवां रक्त ये पांच गुण जलके कहे गये हैं,अब तेजके भी सुनो ॥२७॥ हे गरुड़ ! भूख, प्यास, आलस्य, निद्रा और कांति ये पांच तेजके गुण योगीश्वरोंने कहे हैं ॥२८॥ सिकोड़ना, दौड़ना,लांघना, फैलाना और चेष्टित ये पांच गुण वायुके कहे गये हैं ॥२९॥ शब्द, चिन्ता, शून्यता,मोह और सन्देह ये पांच गुण आकाशके हैं, वे प्रयत्नसे जानने योग्य

लालामूत्रंतथाशुक्रंमज्जारक्तंचपञ्चमम् ॥ अपांपञ्चगुणाः प्रोक्तास्तेजसोपिनिशामय ॥२७॥ क्षुधातृषातथालस्यंनिद्राकान्तिस्तथैवच॥ तेजः पञ्चगुणंताक्ष्यंप्रोक्तंसर्वत्रयोगिभिः॥२८॥आकुञ्चनंधावनञ्चलंघनञ्चप्रसारणम्॥चेष्टितञ्चेतिपञ्चैवगुणावायोःप्रकीर्तिताः॥२९॥ घोषश्चिन्ताचशून्यत्वंमोहश्चिन्ताचसंशयः ॥ आकाशस्यगुणाः पञ्च ज्ञातव्यस्तेप्रयात्नतः ॥ ३० ॥ मनोबुद्धिरहंकारश्चित्तंचेतिचतुष्टयम्॥अन्तःकरणमुद्दिष्टंपूर्वकर्माधिवासितम् ॥ ३१ ॥ श्रोत्रंत्वक्चक्षुषीजिह्वाघ्राणंज्ञानेंद्रियाणिच ॥ वाक्पाणिपादपायूपस्थानिकर्मेन्द्रियाणिच ॥३२॥ दिग्वातार्कप्रचेतोश्विवह्नीन्द्रोपेन्द्रमित्रकाः॥ज्ञानकर्मेन्द्रियाणांचदेवताः परिकीर्तिताः॥३३॥

हैं ॥३०॥ मन, बुद्धि, अहङ्कार और चित्त ये चार अन्तः करणके कहे गये हैं, वह अन्तः करण पूर्व जन्मके कर्मोंसे वासना युक्त होता है ॥३१॥ कान, त्वचा, आंखें, जीभ, नाक, ज्ञानेन्द्रियां हैं और वाणी, पाणि (हाथ) पाद (पैर) गुदा और लिङ्ग ये कर्मेंद्रियां हैं ॥३२॥ दिशा, वायु अर्क, प्रचेता, अश्विनी कुमार, वह्नि, इन्द्र, उपेन्द्र और मित्र ये ज्ञानेन्द्रियोंके देवता कहे गये हैं ॥ ३३ ॥

इडा, पिङ्गला, तीसरी सुषुम्ना, गान्धारी, गजजिह्वा, पूषा, यशस्विनी ॥ ३४ ॥ अलम्बुषा, कुहू तथा दशवीं शङ्खिनी ये प्रधान दशनाडियाँ पिण्डके मध्यमें स्थित हैं ॥ ३५ ॥ प्राण, अपान, समान, उदान, व्यान, नाग, कूर्म, कृकल, देवदत्त और धनञ्जय ॥ ३६ ॥ हृदयमें प्राण, गुदामें अपान, नाभि मण्डलमें समान, कण्ठदेशमें उदान और व्यान सब शरीरमें स्थित है

इडाचपिङ्गलाचैवसुषुम्नाख्यातृतीयकाः ॥ गान्धारीगजजिह्वाचपूषाचैवयशस्विनी ॥३४॥ अलम्बुषाकुहूश्चापिशंखिनीदशमीतथा॥पिंडमध्येस्थिताह्येताःप्रधाना दशनाडिकाः ॥ ३५ ॥ प्राणोपानःसमानाख्यउदानोव्यानएवच ॥ नागःकूर्मश्चकृकलोदेवदत्तोधनञ्जयः ॥३६ ॥ हृदिप्राणोगुदेऽपानःसमानोनाभिमंडले ॥ उदानः कंठदेशेस्याद्व्यानः सर्वशरीरगः॥३७॥उद्गारेनागआख्यातःकूर्मउन्मीलनेस्मृतः॥ कृकलःक्षुत्करोज्ञेयोदेवदत्तोविजृम्भणे ॥ ३८ ॥ नजहातिमृतंवापिसर्वव्यापीधनञ्जयः ॥ कवलैर्भुक्तमन्नंहिपुष्टिदंसर्वदेहिनाम्॥३९॥

॥ ३७ ॥ उद्गारमें नाग और उन्मीलनमें कूर्म कहा गया है, कृकल भूख पैदा करनेवाला जानना चाहिये और विजृम्भणमें देवदत्त समझो ॥ ३८ ॥ सर्वव्यापी धनञ्जय वायु मरे हुयेको भी नहीं छोड़ता है कवलोंसे खाया अन्न सब देह धारियों को पुष्टि देनेवाला है ॥ ३९ ॥

व्यानवायु सारांशको सब नाडियोंमें पहुँचा देती है, भुक्त मात्र आहारके वायु दो भाग कर देती है ॥४०॥ ठीक तरहसे गुदामें प्रवेश करके अन्नको पृथक् और जलको पृथक् कर देती है अग्निके ऊपर जलको करके और अन्नको जलके ऊपर करके ॥४१॥ स्वयम् प्राणवायु अग्निके नीचे स्थित होकर धीरे धीरे धौंकता है, वायु द्वारा धौंकी गई अग्नि रसको तथा मलको पृथक् कर देती है

नयतेव्यानकोवायुः सारांशंसर्वनाडिषु ॥ आहारोभुक्तमात्रोहिवायुनाक्रियतेद्विधा ॥ ४० ॥ संप्रविश्यगुदेसम्यक्पृथगन्नंपृथग्जलम् ॥ ऊर्ध्वमग्नेर्जलंकृत्वाकृत्वान्नंचजलोपरि ॥ ४१ ॥ अग्नेश्चाधः स्वयंप्राणः स्थित्वाग्निधमतेशनैः ॥ वायुनाध्मायमानोग्निःपृथक्किट्टंपृथग्रसम् ॥ ४२ ॥ कुरुतेव्यानकोवायुर्विष्वक्संप्रापयेद्रसम् ॥ द्वारैर्द्वादशभिर्भिन्नंकिट्टंदेहाद्बहिःस्रवेत् ॥ ४३ ॥ कर्णाक्षिनासिकाजिह्वादन्तानाभिर्नखागुदम् ॥ गुह्यंशिरावपुर्लोममलस्थानानिचक्षते ॥ ४४ ॥ एवंसर्वेप्रवर्तन्तेस्वस्वकर्माणिवायवः ॥ उपलभ्यात्मनः सत्तां सूर्यालोकंयथाजनाः ॥ ४५ ॥

॥ ४२ ॥ व्यान वायु शरीरमें सब तरफ रसको पहुँचाती है, बारह द्वारों द्वारा भिन्न किये हुये मलको बाहर निकालती है ॥४३॥ कान, आंखें, नाक, जीभ, दांत नाभि, नख, गुदा, लिङ्ग, शिरा, वपु, और लोम, इनको मल स्थान कहते हैं ॥ ४४ ॥ इस प्रकार सब वायु अपने २ कर्मोंको प्रवर्त होते हैं जैसे सूर्यके प्रकाशको प्राप्त करजन अपनी सत्ताको प्रवर्त होते हैं ॥ ४५ ॥

हे खग ! नरदेहके दो रूप सुनो, एक व्यावहारिक है और दूसरा पारमार्थिक है ॥४६॥ व्यावहारिक शरीरमें साढे तीन करोड़ रोम हैं, सातलाख केश और बीस नख कहे गये हैं ॥४७॥ हे गरुड़ ! सामान्यतया बत्तीस दांत कहे गये हैं, मांस हजार पल और रक्त सौ पल है ॥४८॥ दश पल मेदा और सत्तर पल त्वचा है बारह पल मज्जा और तीन पल महारक्त है ॥४९॥ दो कुडव शुक्र और

इदानींनरदेहस्यशृणुरूपद्वयंखग ॥ व्यावहारिकमेकंचद्वितीयंपारमार्थिकम् ॥ ४६ ॥ तिस्रः कोटयोर्धकोटीचरोमाणिव्यावहारिके ॥ सप्तलक्षाणिकेशाःस्युर्नखाःप्रोक्तास्तुविंशतिः ॥ ४७ ॥ द्वात्रिंशद्दशनाः प्रोक्ताः सामान्याद्विनतासुत ॥ मांसंपलसहस्रंतुरक्तंपलशतंस्मृतम् ॥४८॥ पलानिदशमेदस्तुत्वक्पलानिचसप्ततिः॥ पलद्वादशकंमज्जामहारक्तपलत्रयम् ॥ ४९ ॥ शुक्रंद्विकुडवंज्ञेयंकुडवंशोणितंस्मृतम् ॥ षष्ट्युत्तरंचत्रिशतमस्थ्नांदेहेप्रकीर्तितम् ॥५०॥ नाड्यःस्थूलाश्चसूक्ष्माश्चकोटिशःपरिकीर्तिताः॥ पित्तंपलानिपञ्चाशत्तदर्धंश्लेष्मणस्तथा ॥ ५१ ॥ सततंजायमानंतुविण्मूत्रंचाप्रमाणतः ॥ एतद्गुणसमायुक्तंशरीरंव्यावहारिकम् ॥५२॥

एक कुडव शोणित कहा है, और देहमें तीन सौ साठ हड्डियाँ कही गई हैं ॥५०॥ स्थूल तथा सूक्ष्म नाड़ियाँ करोड़ों कही गई हैं, पित्त पचास पल और उसका आधा अर्थात् पचीस पल कफ है ॥५१॥ सदा उत्पन्न होनेवाली विष्ठा और मूत्र अप्रमाण है, इन

गुणोंसे युक्त व्यावहारिक शरीर है ॥५२॥ सब भुवन और पर्वत, द्वीप, सागर और आदित्य आदि ग्रह पारमार्थिक शरीरमें हैं ॥५३॥ पारमार्थिक देहमें निश्चय छः चक्र होते हैं, जो गुणब्रह्माण्डमें कहे हैं वे सब इसमें स्थित हैं ॥५४॥ योगियोंकी धारणाके आस्पद गुणोंको मैं तुमको कहूँगा, जिनकी भावनासे जीव विराट् रूपको भजनेवाला होता है ॥५५॥ विराट् रूपको कहते हैं, पांवोंके नीचे

भुवनानिचसर्वाणिपर्वतद्वीपसागराः ॥ आदित्याद्याग्रहाःसन्तिशरीरेपारमार्थिके ॥ ५३ ॥ पारमार्थिकदेहेहि षट्चक्राणिभवन्तिच ॥ ब्रह्माण्डेयेगुणाः प्रोक्तास्तेप्यस्मिन्नेवसंस्थिताः॥५४॥तानहंतेप्रवक्ष्यामियोगिनांधारणास्पदान् ॥ येषांभावनयाजन्तुर्भवेद्वैराजरूपभाक् ॥५५॥ पादाधस्तात्तलंज्ञेयंपादोर्ध्वंवितलंतथा॥जानुनोः सुतलंविद्धिसक्थिदेशेमहातलम्॥५६॥तलातलंसक्थिमूलेगुह्यदेशेरसातलम् ॥पातालंकटिसंस्थंचसप्तलोकाः प्रकीर्तिताः ॥ ५७ ॥ भूर्लोकंनाभिमध्येतुभुवर्लोकंतदूर्ध्वके ॥ स्वर्लोकंहृदयेविद्यात्कण्ठदेशेमहस्तथा ॥५८॥

तल और पांवोंके ऊपर वितल जानना चाहिये, घुटनोंमें सुतल और सक्थि देशमें महातल समझो ॥५६॥ सक्थिके मूलमें तलातल, गुह्यदेशमें रसातल और कटिमें पाताल समझो ये सात लोक कहे हैं ॥ ५७ ॥ नाभिके मध्यमें भूलोक, उससे ऊपर भुवर्लोक और हृदयमें स्वर्लोक तथा कण्ठ देशमें महर्लोक समझना चाहिये ॥ ५८ ॥

मुखमें जनलोक, ललाटमें तपलोक और ब्रह्मरन्ध्रमें सत्यलोक जानो, ये चौदह भुवन हुये ॥५९॥ त्रिकोणमें मेरु स्थित है, नीचेके कोणमें मन्दराचल, दक्षिण रेखामें कैलास और वायव्य कोणमें हिमाचल है ॥६०॥ ऊर्ध्व रेखामें निषेध पर्वत, दक्षिण रेखामें गन्ध मादन, और वाम रेखामें रमणाचल, ये सात कुल पर्वत कहे हैं ॥६१॥ हड्डियोंके स्थानमें जम्बूद्वीप, मज्जामें शाकद्वीप, मांसमें

जनलोकंवक्त्रदेशेतपोलोकंललाटके ॥ सत्यलोकंब्रह्मरन्ध्रेभुवनानिचतुर्दश ॥ ५९ ॥ त्रिकोणेसंस्थितोमेरु रधःकोणेचमन्दरः ॥ दक्षकोणेचकैलासोवामकोणेहिमाचलः ॥ ६० ॥ निषधश्चोर्ध्वरेखायांदक्षायांगन्धमा दनः ॥ रमणोवामरेखायांसप्तैतेकुलपर्वताः॥६१॥अस्थिस्थानेभवेज्जम्बूःशाकोमज्जासुसंस्थितः ॥कुशद्वीप स्थितोमांसेक्रौञ्चद्वीपःशिरासुच ॥६२॥ त्वचायांशाल्मलीद्वीपोगोमेदोरोमसञ्चये॥नखस्थंपुष्करंविद्यात्साग रास्तदनंतरम्॥६३॥क्षारोदोहिभवेन्मूत्रेक्षीरेक्षीरोदसागरः॥सुरोदधिःश्लेष्मसंस्थोमज्जायांघृतसागरः ॥६४॥

कुशद्वीप और शिराओंमें क्रौञ्चद्वीप स्थित है ॥६२॥ त्वचामें शाल्मली द्वीप और रोम समूहमें गोमेदद्वीप, नखमें पुष्करको स्थित समझो, उसके बाद सागरोंको सुनो ॥ ६३ ॥ खारी समुद्र मूत्रमें स्थित है, दूधमें दूधका समुद्र और मदिराका समुद्र श्लेष्मा में स्थित है, मज्जामें घी का समुद्र स्थित है ॥ ६४ ॥

रसमें रसका समुद्र और रुधिरमें दहीका समुद्र जानिये, हे विनताके पुत्र ! स्वादिष्ट जल लम्बिका (कण्ठके भीतर) के स्थानमें जानिये ॥६५॥ नादचक्रमें सूर्य, बिन्दुचक्रमें चन्द्रमा, नेत्रोंमें मङ्गल, और हृदयमें बुध स्थित हैं ॥६६॥ विष्णु स्थान (नाभिगोल) में गुरुको स्थित जानिये, शुक्रमें शुक्र स्थित है, नाभिके स्थानमें शनैश्चर और मुखमें राहु स्थित है ॥६७॥ वायुके स्थानमें

रसोदधिरसेविद्याच्छोणितेदधिसागरः॥स्वादूदोलंबिकास्थाने जानीयाद्विनतासुत ॥६५॥ नादचक्रेस्थितःसूर्योबिन्दुचक्रेचचन्द्रमाः॥लोचनस्थःकुजोज्ञेयोहृदयेज्ञःप्रकीर्तितः ॥६६॥विष्णुस्थानेगुरुंविद्याच्छुक्रेशुक्रोऽव्यवस्थितः॥नाभिस्थानेस्थितोमन्दोमुखेराहुःप्रकीर्तितः ॥६७॥ वायुस्थानेस्थितःकेतुःशरीरेग्रहमण्डलम्॥एवंसर्वस्वरूपेणचिन्तयेदात्मनस्तनुम् ॥ ६८॥ सदाप्रभातसमयेबद्धपद्मासनस्थितः॥ षट्चक्रंचिन्तनंकुर्याद्यथोक्तमजपाक्रमम् ॥६९॥ अजपानामगायत्रीमुनीनांमोक्षदायिनी ॥ अस्याःसङ्कल्पमात्रेणसर्वपापैःप्रमुच्यते ॥७०॥

केतु स्थित है इस तरह शरीरमें ग्रह मण्डल है, इस प्रकार सर्व स्वरूपसे अपने शरीरका चिन्तन करे ॥ ६८ ॥ सदैव प्रभात के समय बांधे हुये पद्मासनमें स्थित होकर षट् चक्रोंका चिन्तन करे और कहे हुये अजपाके क्रमका चिन्तन करे ॥ ६९ ॥ मुनियोंको मोक्ष देनेवाली अजपानाम गायत्रीके संकल्प मात्रसे मनुष्य सब पापोंसे छूट जाता है ॥ ७० ॥

हे गरुड ! सुनो, मैं अजपाका उत्तम क्रम कहता हूँ, जिसको करके जीव जीवभावको छोड देता है ॥७१॥ मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपूर, अनाहत, विशुद्धाख्य, आज्ञा यह षट्चक्र कहा जाता है ॥७२॥ मूलाधारमें लिङ्ग देशमें नाभिमें हृदयमें कण्ठमें भौंहोंके

शृणुताक्ष्यंप्रवक्ष्येहमजपाक्रममुत्तमम् ॥ यंकृत्वासर्वदाजीवोजीवभावंविमुञ्चति ॥ ७१ ॥ मूलाधारः स्वधिष्ठानंमणिपूरकमेवच ॥ अनाहतंविशुद्धाख्यमाज्ञाषट्चक्रमुच्यते ॥ ७२ ॥ मूलाधारेलिङ्गदेशेना भ्यांहृदिचकण्ठगे ॥ भ्रुवोर्मध्येब्रह्मरन्ध्रेक्रमाच्चक्राणिचिन्तयेत् ॥ ७३ ॥ आधारंतुचतुर्दलानलसमंवा सान्तवर्णाश्रयं, स्वाधिष्ठानमपिप्रभाकरसमंबालान्तषट्पत्रकम् ॥ रक्ताभंमणिपूरकंदशदलंडाद्यंफकारान्त पत्रैर्द्वादशभिरनाहतपुरंहैमंकठान्तावृतम् ॥ ७४ ॥ पत्रैःसस्वरषोडशैःशशधरज्योतिर्विशुद्धाम्बुजंहंसेत्यक्षकं रयुग्मकंद्वयदलंरक्ताभमात्राम्बुजम् ॥ तस्मादूर्ध्वगतंप्रभासितमिदंपद्मंसहस्रच्छदंसत्यानंदमयंसदाशिवम यंज्योतिर्मयंशाश्वतम् ॥ ७५ ॥ गणेशंचविधिंविष्णुंशिवंजीवंगुरुंततः ॥ व्यापकंचपरंब्रह्मक्रमाच्चक्रेषुचिन्तये त् ॥ ७६ ॥ एकविंशत्सहस्राणिषट्शतान्यधिकानिच ॥ अहोरात्रेणश्वासस्यगतिःसूक्ष्मास्मृताबुधैः ॥७७॥

मध्यमें और ब्रह्मरन्ध्रमें क्रमसे चक्रोंका चिन्तन करे ॥ ७३ ॥ ७४ ॥ ७५ ॥ ७६ ॥ रात दिनमें पण्डितोंने श्वासकी गति इक्कीस हजार छः सौ कही है ॥ ७७ ॥

हकारसे श्वास बाहर आता है और सकारसे फिर भीतर प्रवेश करता है, "हंसो हंस" इस मन्त्रसे जीव तत्वसे जपता है ॥ ७८ ॥ छः सौ गणेशके लिये और छः हजार ब्रह्माके लिये और छः हजार हरिके लिये और छः हजार हरके लिये ॥७९॥ जीवात्माके लिये एक हजार, गुरुके लिये एक हजार और चैतन्य रूप आत्माके लिये एक हजार, इस प्रकार जपकी संख्या को निवेदन करे ॥ ८० ॥ सत्सम्प्रदायको जाननेवाले अरुणादिक मुनीश्वर चक्रमें स्थित ब्रह्मकी अमर किरणोंका चिन्तन

हकारेणबहिर्यातिसकारेणविशेत्पुनः ॥ हंसोहंसेतिमन्त्रेणजीवोजपतितत्त्वतः ॥ ७८ ॥ षट्शतंगणनाथाय षट्सहस्रंतुवेधसे ॥ षट्सहस्रंचहरयेषट्सहस्रंहरायच ॥ ७९ ॥ जीवात्मनेसहस्रंचसहस्रंगुरवेतथा ॥ चिदात्मनेसहस्रंचजपसंख्यांनिवेदयेत् ॥ ८० ॥ एतांश्चक्रगतान्ब्रह्ममयूखान्मुनयोमरान् ॥ सत्संप्रदायवेत्तारश्चिन्तयन्त्यरुणादयः ॥८१॥शुकादयोपिमुनयः शिष्यानुपदिशन्तिच॥अतःप्रवृत्तिमहतांध्यात्वाध्यायेत्सदा बुधः ॥ ८२ ॥ कृत्वाचमानसींपूजांसर्वचक्रेष्वनन्यधीः ॥ ततोगुरूपदेशेनगायत्रीमजपांजपेत् ॥ ८३ ॥

करते हैं ॥ ८१ ॥ शुक आदि मुनीश्वर भी शिष्योंको उपदेश करते हैं, अतः ज्ञानी जनको बडोंकी प्रवृत्तिका ध्यान करके फिर ध्यान करना चाहिये ॥ ८२ ॥ एकाग्रचित्त होकर सब चक्रोंमें मानसी पूजन करनेके बाद गुरुके उपदेशसे अजपानाम गायत्री का जप करना चाहिये ॥ ८३ ॥

नीचेकी ओर मुखवाले हजार दलके छिद्र युक्त कमलमें हंस पर चढे हुये और वर अभय जिनके हाथोंमें हैं ऐसे गुरूका ध्यान करे ॥ ८४ ॥ उन गुरूके चरणामृतकी धारासे अपनी देहको धोवे और पंचोपचारोंसे पूजन कर उनके स्तोत्रसे प्रणाम करे ॥८५॥ छहोंचक्रोंमें संचार करनेवाली और साढे तीन वलयवाली कुण्डलिनीका आरोह और अवरोहके क्रमसे स्थित ध्यान करे ॥ ८६ ॥ ब्रह्म रन्ध्रसे बाहर गये हुये सुषुम्ना नाम धामका ध्यान करे, उस मार्गमें होकर गये हुये जीव उन विष्णुके

अधोमुखेततोरन्ध्रेसहस्रदलपङ्कजे ॥ हंसगंश्रीगुरुंध्यायेद्वराभयकराम्बुजम् ॥ ८४ ॥ क्षालितंचिन्तयेद्देहंत त्पादामृतधारया ॥ पञ्चोपचारैः संपूज्यप्रणमेत्तत्स्तवेनच ॥८५॥ ततः कुण्डलिनींध्यायेदारोहादवरोहतः ॥ षट्चक्रकृतसंचारांसार्धत्रिवलयांस्थिताम् ॥ ८६ ॥ ततोध्यायेत्सुषुम्नाख्यंधामरन्ध्राद्बहिर्गतम् ॥ पथातेन गतायान्तितद्विष्णोः परमंपदम् ॥८७॥ ततोमच्चिन्तितंरूपंस्वयंज्योतिः सनातनम् ॥ सदानन्दंसदाध्याये न्मुहूर्तेब्राह्मसंज्ञके ॥ ८८ ॥ एवंगुरूपदेशेनमनोनिश्चलतांनयेत् ॥ नतुस्वेनप्रयत्नेनतद्विनापतनंभवेत् ॥८९॥

परम पदको प्राप्त होते हैं ॥ ८७ ॥ उसके बाद मेरे द्वारा चिन्तित स्वयंज्योति सनातन रूप सदा आनन्द मयका ब्राह्म मुहूर्तमें सदा ध्यान करे ॥ ८८ ॥ ऐसे गुरुके उपदेशसे मनको निश्चल करे, अपने प्रयत्नसे न करे, गुरुके उपदेश बिना संसारमें फिर जन्म होता है ॥ ८९ ॥

इस प्रकार अन्तर्याग करके बहिर्याग आरम्भ करे, संध्यादिक करके हरिहरका पूजन करे ॥९०॥ देहके अभिमानी पुरुषकी अन्त मुंखी वृत्ति नहीं होती है, अतः उनको मेरी भक्ति सहज और मोक्षको देने वाली है ॥९१॥ यद्यपि तप योग आदिक मोक्षके मार्ग हैं तथापि इस संसारमें आने जाने वाले पुरुषोंको मेरी भक्तिके मार्ग समीचीन हैं ॥ ९२ ॥ सर्वज्ञ ब्रह्मादिकने यही निश्चय

अन्तर्यागंविधायैवंबाहिर्यागंसमाचरेत् ॥ स्नानसंध्यादिकंकृत्वाकुर्याद्धरिहशार्चनम् ॥ ९० ॥ देहाभिमानिना मन्तर्मुखीवृत्तिर्नजायते ॥ अतस्तेषांतुतद्भक्तिः सुकरामोक्षदायिनी ॥ ९१ ॥ तपोयोगादयामोक्षमार्गाः सन्तितथापिच ॥ समीचीनस्तुमद्भक्तिमार्गः संसरतामिह ॥ ९२ ॥ ब्रह्मादिभिश्चसर्वज्ञैरयमेवविनिश्चितः ॥ त्रिवारंवेदशास्त्राणिविचार्यचपुनः पुनः ॥९३॥ यज्ञादयोपिसद्धर्माश्चित्तशोधनकारकाः ॥ फलरूपाचमद्भक्ति स्तांलब्ध्वानावसीदति ॥ ९४ ॥

किया है तीन बार वेदशास्त्रका बारबार विचार करके ॥ ९३ ॥ यज्ञादिक सद्धर्म भी चित्तका शोधन करनेवाले हैं, और फल रूपा मेरी भक्तिको प्राप्त कर मनुष्य कभी दुःखी नहीं होता है ॥ ९४ ॥

हे गरुड़ ! पुण्यात्मा जन इस प्रकारके आचरणको करते हैं और मेरी भक्तिके संयोगसे सनातन मोक्षको प्राप्त होते हैं ॥ ९५ ॥ श्रीगरुड़ पुराण सारोद्धार हिन्दी टीकामें पन्द्रहवां अध्याय समाप्त हुआ ॥ १५ ॥ गरुड़ बोले ॥ हे दयासिन्धो ! अज्ञानसे जीवका संसार सुना, अब मैं सनातन मोक्षके उपायको सुनना चाहता हूँ ॥ १ ॥ हे भगवन् ! हे देव ! हे ईश ! हे शरणागत

एवमाचरणंताक्ष्र्यकरोतिसुकृतीनरः ॥ संयोगेनचमद्भक्त्यामोक्षंयातिसनातनम् ॥९५॥ इति श्रीगरु०सा० सुकृतिजनजन्माचरणनिरूपणंनामपञ्चदशोऽध्यायः ॥ १५ ॥ गरुडउवाच ॥ श्रुतामयादयासिन्धोह्यज्ञाना' ज्जीवसंसृतिः॥अधुनाश्रोतुमिच्छामिमोक्षोपायंसनातनम् ॥१॥ भगवन्देवदेवेशशरणागतवत्सलः ॥ असारे घोरसंसारेसर्वदुःखमलीमसे ॥ २ ॥ नानाविधशरीरस्थाह्यनन्ताजीवराशयः ॥ जायन्तेचम्रियन्तेचतेषाम न्तोनविद्यते ॥ ३ ॥ सदादुःखातुराएवनसुखीविद्यते क्वचित ॥ केनोपायेनमोक्षेशमुच्यन्तेवदमेप्रभो ॥४॥

वत्सल ! सब दुःखोंसे अति मैले इस असार घोर संसारमें ॥ २ ॥ अनेक प्रकारके शरीरोंमें स्थित अनन्त जीवोंके समूह उत्पन्न होते हैं और मरते हैं, उनका अन्त नहीं है ॥ ३ ॥ सदा दुःखमें ही व्याकुल रहते हैं कभी सुखी नहीं होते हैं, वे कौन से उपायसे इस संसारसे छूटते हैं, हे प्रभो ! वह मुझको कहिये ॥ ४ ॥

श्रीभगवान् बोले ॥ हे गरुड़ ! सुनो,जो तुम मुझको पूछते हो उसे मैं तुमको कहूँगा,जिसके सुनने मात्रसे मनुष्य संसारसे छूट जाता है ॥५॥ परब्रह्म स्वरूप, काल रहित, सर्वज्ञ सबके कर्ता, सबके स्वामी, निर्मल अद्वय शिव हैं ॥६॥ स्वयंज्योति और आदि अन्त रहित, विकार रहित, परसे पर, निर्गुण, सत् चित आनन्द रूप परमेश्वर हैं, उनके अंश जीव नामक हैं ॥७॥ अनादि विद्या उप

श्रीभगवानुवाच ॥ शृणुताक्ष्यप्रवक्ष्यामियन्मांत्वंपरिपृच्छसि॥ यस्य श्रवणमात्रेणसंसारान्मुच्यते नरः ॥५॥ अस्तिदेवःपरब्रह्मस्वरूपीनिष्कलःशिवः ॥ सर्वज्ञः सर्वकर्ताचसर्वेशोनिर्मलोऽद्वयः ॥ ६ ॥ स्वयंज्योतिरनाद्यन्तोनिर्विकारःपरात्परः ॥ निर्गुणः सच्चिदानन्दस्तदंशाजीवसंज्ञकाः ॥७॥ अनाद्यविद्योपहतायथाग्नौविस्फुलिङ्गकाः ॥ देहाद्युपाधिसंभिन्नास्तेकर्मभिरनादिभिः ॥ ८ ॥ सुखदुःखप्रदैःपुण्यपापरूपैर्नियन्त्रिताः ॥ तत्तज्जातियुतंदेहमायुर्भोगंचकर्मजम् ॥ ९ ॥ प्रतिजन्मप्रपद्यन्तेतेषामपिपरंपुनः ॥ ससूक्ष्मलिंगशारीरमामोक्षादक्षरंखग ॥ १० ॥

हत होनेपर जैसे अग्निमें चिनगारी उठती है ऐसे ही वे जीव अनादि कर्मोंसे देह आदि उपाधिसे भिन्न होते हैं ॥८॥ सुख तथा दुःख कोदेनेवाले पुण्य तथा पाप रूप कर्मोंसे बंधे हुये उस जातिसे युक्त देहको वायुको और कर्मसे प्राप्त भोगकोप्राप्त होते हैं ॥ ९ ॥ हे गरुड़ ! फिर उनके भी परे मोक्षतक प्रत्येक जन्ममें अविनाशी सूक्ष्म लिङ्ग शरीरको प्राप्त होता है ॥ १० ॥

स्थावर(वृक्ष आदिक), कीड़े मकौड़े, पक्षी, पशु, मनुष्य, धर्म करनेवाले देवता ये क्रमसे मोक्ष पाने वाले होते हैं॥११॥ हजारों बार चार प्रकारके शरीरोंको धारण करके तथा छोड़कर, सुकृतसे मनुष्य होकर यदि ज्ञानी हो तो मोक्षको प्राप्त करे ॥१२॥ देह धारियोंके चौरासी लाख शरीरोंमें मनुष्य शरीरके बिना किसी शरीरमें तत्वज्ञान नहीं होता है और तत्वज्ञानके बिना मुक्ति नहीं

स्थावराःकृमयश्चाजाः पक्षिणः पशवो नरा ॥ धार्मिकास्त्रिदशास्तद्वन्मोक्षिणश्चयथाक्रमम् ॥ ११ ॥ चतुर्विधशरीराणिधृत्वामुक्त्वासहस्रशः ॥ सुकृतान्मानवोभूत्वाज्ञानीचेन्मोक्षमाप्नुयात् ॥१२॥ चतुरशीतिलक्षेषुशरीरेषुशरीरिणाम् ॥ नमानुषंविनान्यत्रतत्त्वज्ञानंतुलभ्यते ॥१३॥ अत्रजन्मसहस्राणांसहस्रैरपिकोटिभिः॥ कदाचिल्लभतेजन्तुर्मानुष्यंपुण्यसञ्चयात् ॥ १४ ॥ सोपानभूतंमोक्षस्यमानुष्यंप्राप्यदुर्लभम् ॥ यस्तारयतिनात्मानंतस्मात्पापतरोत्रकः ॥ १५ ॥ नरः प्राप्योत्तरंजन्मलब्ध्वाचेन्द्रियसौष्ठवम् ॥ नवेत्त्यात्महितंयस्तुसभवेद्ब्रह्मघातकः ॥ १६ ॥

होती है ॥ १३ ॥ यहाँ हजारों जन्म के हजारों करोड़ों में कभी जीव पुण्योंके संचय से मनुष्य योनिको प्राप्त होता है॥१४॥मोक्षकी सीढी रूप इस दुर्लभ मनुष्य देह को प्राप्तकर जो अपना उद्धार नहीं करता है उससे अधिक पापी कौन है? अर्थात् कोई नहीं ॥१५॥ सबसे अधिक नरदेह और इन्द्रियों की सुन्दरता को प्राप्त कर जो मनुष्य अपना हित नहीं जानता है वह ब्रह्म हत्यारा होता है ॥१६॥

देह के बिना किसी का पुरुषार्थ नहीं होता है अतः देह और धन की रक्षा कर पुण्य कर्मों के साधन करे ॥ १७॥ सर्वदा अपनी रक्षा करनी चाहिये, आत्मा सबका पात्र है, अतः अत्मा की रक्षा में यत्न करे, क्योंकि जीवन रहेगा तो अनेक कल्याणों को देखेगा ॥ १८॥ फिर ग्राम, क्षेत्र, धन, घर, शुभ अशुभ कर्म बार बार होते हैं किन्तु शरीर बार बार नहीं होता है ॥ १९ ॥ पण्डितों द्वारा

विनादेहेनकस्यापिपुरुषार्थोनविद्यते ॥ तस्माद्देहंधनंरक्षेत्पुण्यकर्माणिसाधयेत् ॥ १७ ॥ रक्षयेत्सर्वदात्मानमात्मासर्वस्यभाजनम् ॥ रक्षणेयत्नमातिष्ठेज्जीवन्भद्राणिपश्यति ॥१८॥ पुनर्ग्रामः पुनः क्षेत्रंपुनर्वित्तंपुनर्गृहम् ॥ पुनः शुभाशुभंकर्मनशरीरंपुनः पुनः ॥१९॥ शरीररक्षणोपायाः क्रियन्तेसर्वदाबुधैः॥नेच्छन्तिचपुनस्त्यागमपिकुष्ठादिरोगिणः॥२०॥ तद्गोपितंस्याद्धर्मार्थंधर्मोज्ञानार्थमेवच ॥ ज्ञानंतुध्यानयोगार्थमचिरात्प्रविमुच्यते ॥२१॥ आत्मैवयदिनात्मानमहितेभ्योनिवारयेत्॥कोन्योहितकरस्तस्मादात्मानंकारयिष्यति॥२२॥

शरीर की रक्षा के उपाय किये जाते हैं और कोढी आदमी इस शरीर के त्याग की इच्छा नहीं करते हैं ॥ २० ॥ इस कारण से रक्षा किया गया यह शरीर धर्म के लिये होता है, धर्म ज्ञान के लिये और ज्ञान ध्यान और योग के लिये होता है, और शीघ्र ही मुक्त होजाता है ॥२१॥ यदि आत्मा ही आत्मा को अहित से न बचावे तो उससे और कौन हित करने वाला आत्मा को बचावेगा ॥२२॥

जो यहीं नरक रूप रोग की चिकित्सा नहीं करता है तो निरौषध देशमें रोगी जाकर क्या करेगा ? ॥ २३ ॥ व्याघ्री के समान तो जरा है और फूटे हुये घड़े में से पानी के समान आयु घटती है शत्रु के समान रोग चोट देते हैं अतः कल्याण देने वाली वार्ता का अभ्यास करना चाहिये ॥ २४ ॥ जब तक दुःख अपना आश्रय न करे और जब तक आपत्ति न आजावे, जब तक इन्द्रियाँ न बिगडें, तब

इहैवनरकव्याधेश्चिकित्सांनकरोतियः ॥ गत्वानिरौषधंदेशंव्याधिस्थः किंकरिष्यति ॥ २३ ॥ व्याघ्रीवास्ते जराचायुर्यातिभिन्नघटाम्बुवत् ॥ निघ्नन्तिरिपुवद्रोगास्तस्माच्छ्रेयः समभ्यसेत् ॥ २४ ॥ यावन्नाश्रयतेदुःखंयावन्नायान्तिचापदः ॥ यावन्नेन्द्रियवैकल्यंतावच्छ्रेयःसमभ्यसेत् ॥ २५ ॥ यावत्तिष्ठतिदेहोयंतावत्तत्त्वं समभ्यसेत्॥सन्दीप्तकोणभवनेकूपंखनतिदुर्मतिः ॥ २६ ॥ कालोनज्ञायतेनानाकार्यैःसंसारसम्भवैः॥सुखंदुःखंजनोहंतनवेत्तिहितमात्मनः ॥ २७ ॥ जातानार्तान्मृतानापद्ग्रस्तान्दृष्ट्वाचदुःखितान्॥लोकोमोहसुरांपीत्वानबिभेतिकदाचन ॥ २८ ॥

तक तत्व का अभ्यास करना चाहिये ॥ २५ ॥ जब तक यह देह रहे अभ्यास करे, घर के कोने में अग्नि लगने पर दुर्बुद्धि कुआं खोदने का उपाय करता है ॥ २६ ॥ संसार में उत्पन्न हुये कार्यों से काल नहीं जाना जाता है, बडे खेद की बात है कि मनुष्यसुख दुःख को तथा अपने हित को नहीं जानता है ॥ २७ ॥ उत्पन्न हुये दुःखी हुये मरे हुये आपत्ति से घेरे हुये और दुःखितों को देख कर

यह लोक मोहरूपी मदिरा को पीकर कभी भय नहीं मानता है ॥ २८ ॥ सम्पत्तियां स्वप्न के समान हैं और यौवन फूल के समान है, आयुष्य बिजली के समान चंचल है, इस बात को जानते हुये किस पुरुष को धीरज होवे ॥ २९ ॥ सौ वर्ष का जीवन ही बहुत थोडा है, उसका आधा निद्रा और आलस्य में जाता है और बालक अवस्था तथा रोग वृद्धावस्था के दुःखों से कुछ अल्प हुआ वह निरर्थक है ॥ ३० ॥ जो मोक्ष का उपाय प्रारम्भ करने योग्य है उसमें उद्योग रहित, जागने योग्य ब्रह्म का चिन्तन है उसमें सोता

सम्पदःस्वप्नसंकाशायौवनंकुसुमोपमम् ॥ तडिच्चपलमायुष्यंकस्यस्याज्जानतोधृतिः ॥ २९ ॥ शतंजीवित मत्यल्पंनिद्रालस्यैस्तदर्धकम् ॥ बाल्यरोगजरादुःखैरल्पंतदपिनिष्फलम् ॥ ३० ॥ प्रारब्धव्येनिरुद्योगो जागर्तव्येप्रसुप्तकः ॥ विश्वस्तव्योभयस्थानेहानरः कोनहन्यते ॥ ३१ ॥ तोयफेनसमेदेहेजीवेनाक्रम्यसंस्थिते ॥ अनित्यप्रियसंवासेकथंतिष्ठतिनिर्भयः ॥ ३२ ॥ अहितेहितसंज्ञः स्यादध्रुवेध्रुवसंज्ञकः ॥ अनर्थे चार्थविज्ञानः स्वमर्थंयोनवेत्तिसः ॥ ३३ ॥

हुआ, यमके स्थान संसार में विश्वास करने वाला, कौन मनुष्य यमद्वारा नहीं मारा जाता है ? अर्थात् मारा ही जाता है ॥ ३१ ॥ जल के फेन के समान देह में जीव को दबाकर स्थित होने पर जो सदा न रहेगा ऐसे प्रिय संवास में निर्भय कैसे रहता है ॥ ३२ ॥ अहित अर्थात् परिणाम में विषके समान विषयों को जो इष्टलाभ जानता है और अध्रुव (देह आदि) को ध्रुव जानता है अनर्थों

(दम्भ झूठ आदि) के मूल धन में जो प्रयोजन को सिद्ध मानता है, ऐसा मनुष्य मुक्ति को देनेवाले आत्म ज्ञान रूप अपने प्रयोजन को नहीं जानता है ॥ ३३ ॥ देखता हुआ भी (आत्म ज्ञान से मोक्ष होता है इस बात को जानता हुआ भी) मोक्ष मार्ग से भ्रष्ट होजाता है और पढते हुये भी नहीं जानता है ॥ ३४ ॥ यह जगत् मरण आदि ग्रहों से गम्भीर काल सागर में डूबता हुआ भी नहीं जाना जाता है ॥ ३५ ॥ क्षण क्षण में क्षीण होता हुआ यह काल नहीं जाना जाता है, जल में स्थित कच्चे घडे के समान बिखरता हुआ

पश्यन्नपिप्रस्खलतिशृण्वन्नपिनबुध्यति ॥ पठन्नपिनजानातिदेवमायाविमोहितः ॥ ३४ ॥ तन्निमज्जज्जगदिदंगंभीरेकालसागरे ॥ मृत्युरोगजराग्राहैर्नकश्चिदपिबुध्यते ॥ ३५ ॥ प्रतिक्षणमयंकालः क्षीयमाणोनलक्ष्यते ॥ आमकुम्भइवाम्भःस्थोविशीर्णोनविभाव्यते ॥ ३६ ॥ युज्यतेवेष्टनंवायोराकाशस्यचखण्डनम् ॥ ग्रथनंचतरङ्गाणामास्थानायुषियुज्यते ॥ ३७ ॥ पृथिवीदह्यतेयेनमेरुश्चापिविशीर्यते ॥ शुष्यतेसागरजलंशरीरस्यचकाकथा ॥ ३८ ॥

नहीं लक्षित होता है ॥ ३६ ॥ पवन को बाँधा जासकता है, आकाश का खण्डन हो सकता है, तरंगों को गूंथा जासकता है, परन्तु आयुष्य में आस्था नहीं है ॥ ३७ ॥ जिस काल द्वारा पृथ्वी जलाई जाती है और जिससे सुमेरु पर्वत बिखर जाता है, जिसके द्वारा समुद्रका जल सूख जाता है, तो शरीर की क्या बात है ? ॥ ३८ ॥

मेरी संतति है मेरी स्त्री है मेरे भाई बन्धु हैं ऐसे कहते हुये मनुष्य रूपी बकरे को कालरूपी भेडिया बल पूर्वक मारता है ॥ ३९ ॥ यह किया है यह करना है यह किया बिन किया है ऐसी चेष्टा से युक्त पुरुष को कृतान्त वश में कर लेता है ॥ ४० ॥ कल के कार्य को आज करे, दोपहर के बाद को दोपहर में ही करे, मृत्यु किये बिना किये की प्रतीक्षा नहीं करती है ॥ ४१ ॥ बुढापे द्वारा जिसका

अपत्यंमेकलत्रंमेधनंमेबान्धवाश्चमे ॥ जल्पन्तमितिमर्त्याजंहन्तिकालवृकोबलात् ॥ ३९ ॥ इदंकृतमिदंकार्यमिदमन्यत्कृताकृतम् ॥ एवमीहासमायुक्तंकृतान्तः कुरुतेवशम् ॥४०॥ श्वःकार्यमद्यकुर्वीतपूर्वाह्णेचापराह्णिकम् ॥ नहिमृत्युःप्रतीक्षेतकृतंवाप्यथवाकृतम् ॥४१॥ जरादर्शितपन्थानंप्रचण्डंव्याधिसैनिकम् ॥ मृत्युशत्रुमधिष्ठोसित्रातारंकिंनपश्यसि ॥ ४२ ॥ तृष्णासूचीविनिर्भिन्नंसिक्तंविषयसर्पिषा ॥ रागद्वेषानलेपक्वंमृत्युरश्नातिमानवम् ॥४३॥बालांश्चयौवनस्थांश्चवृद्धान्गर्भगतानपि॥सर्वानाविशतेमृत्युरेवंभूतमिदंजगत् ॥४४॥

मार्ग दिखाया गया है, प्रचण्ड रोग जिसके सेना वाले हैं, ऐसे मृत्यु रूपी सामन्त द्वारा दबाया गया तू रक्षक परमेश्वर को क्यों नहीं देखता है ॥ ४२ ॥ तृष्णा रूपी सूइयों से छेदेगये, विषय रूपी पानी से सींचेगये, राग द्वेष रूपी अग्नि में पकाये गये मनुष्यों को मौत खाती है ॥ ४३ ॥ बालकों में तरुणों में वृद्धों में और गर्भ में जो स्थित हैं उनमें मृत्यु अवश्य आती है यह जगत् ऐसा है ॥ ४४ ॥

यह जीव अपनी देहको भी छोड़कर यमके घरको जाता है, स्त्री माता पिता पुत्र आदिके सम्बन्धकी तो बात ही क्या है ॥४५॥ दुःखोंका कारण यह संसार जिसके है वही दुःखी है,उस संसारका जिसने त्याग किया वही सुखी है दूसरा नहीं ॥४६॥ सब दुखोंको उत्पन्न करनेवाले, सब आपत्तियोंके घर और सब पापोंके आश्रय इस संसारको तत्काल छोड़ दे ॥४७॥ लोहा और लकड़ीसे बने

स्वदेहमपिजीवोयंमुक्त्वा याति यमालयम् ॥ स्त्रीमातृपितृपुत्रादिसंबन्धः केनहेतुना ॥ ४५ ॥ दुःखमूलंहिसंसारः स यस्यास्ति स दुःखितः ॥ तस्यत्यागःकृतोयेनससुखीनापरः कचित् ॥ ४६ ॥ प्रभवंसर्वदुःखानामालयंसकलापदाम् ॥ आश्रयंसर्वपापानांसंसारंवजयेत्क्षणात् ॥ ४७ ॥ लोहदारुमयैः पाशैः पुमान्बद्धोविमुच्यते ॥ पुत्रदारमयैः पाशैर्मुच्यतेनकदाचन ॥ ४८ ॥ यावतःकुरुतेजन्तुःसंबन्धान्मानसः प्रियान् ॥ तावन्तोस्यनिखन्यन्तेहृदयेशोकशङ्कवः ॥४९॥ वञ्चिताशेषवित्तैस्तैर्नित्यंलोकोविनाशितः ॥ हाहन्तविषयाहारैर्देहस्थेन्द्रियतस्करैः ॥ ५० ॥

हुये पाशों (बंधनों)से बंधा हुआ मनुष्य छूटता है, किन्तु पुत्र स्त्री रूपी बंधनोंसे बंधा हुआ कभी नहीं छूटता है ॥४८॥ जीव जितने मनके प्यारे सम्बन्धोंको करता है उतनी ही शोकरूपी कीलें उसके हृदयमें गाड़ी जाती हैं ॥ ४९ ॥ खेद है, छले हैं संपूर्ण धन जिन्होंने ऐसे विषय रूप आहार करनेवाले, देहमें स्थित इन्द्रिय रूपी चोरों द्वारा यह लोक सदा नष्ट किया गया है ॥५०॥

जैसे मांसका लोभी मत्स्य लोहेकी कीलको नही देखता है, वैसे ही सुखका लोभी देही यमकी बाधाको नहीं देखता है ॥ ५१ ॥ हे गरुड़ ! हित और अहितको नहीं जाननेवाले, सदा कुमार्गमें चलनेवाले और पेट भरनेमें ही लगे रहने वाले मनुष्य नरकगामी होते हैं ॥५२॥ निद्रा मैथुन आहार आदि सब प्राणियोंके समान होते हैं,ज्ञानवान् मनुष्य कहा जाता है और ज्ञानहीन पशु कहा जाता है

मांसलुब्धोयथामत्स्योलोहशंकुंनपश्यति ॥ सुखलुब्धस्तथादेहीयमबाधांनपश्यति ॥ ५१॥ हिताहितेनजानन्तोनित्यमुन्मार्गगामिनः ॥ कुक्षिपूरणनिष्ठायेतेनराःनारकाः खग ॥ ५२ ॥ निद्रादिमैथुनाहाराः सर्वेषांप्राणिनांसमाः ॥ ज्ञानवान्मानवः प्रोक्तोज्ञानहीनःपशुः स्मृतः ॥ ५३ ॥ प्रभाते मलमूत्राभ्यांक्षुत्तृड्भ्यांमध्यगेरवौ ॥ रात्रौ मदननिद्राभ्यांबाध्यन्तेमूढमानवाः ॥५४॥ स्वदेहधनदारादिनिरताः सर्वजन्तवः ॥ जायन्तेच म्रियन्तेचहाहन्ताज्ञानमोहिताः ॥ ५५ ॥ तस्मात्सङ्गः सदात्याज्यः सर्वस्त्यक्तुंनशक्यते ॥ महद्भिः सहकर्तव्यःसन्त सङ्गस्यभेषजम् ॥ ५६ ॥

॥५३॥ प्रभात समयमें मल और मूत्र द्वारा, मध्याह्नमें भूख प्यास द्वारा और रात्रिमें मदन (काम) और निद्रा द्वारा मनुष्य पीड़ित होते हैं ॥५४॥ खेद है, अपनी देह धन और स्त्री आदिमें लगे हुये सब जीव अज्ञानसे मोहित होकर उत्पन्न होते हैं और मरते हैं ॥५५॥ अतः सङ्ग (आसक्ति) सदा त्यागने योग्य है, यदि परम हंसकी तरह सर्वस्व नहीं छोड़ा जा सके तो महान् पुरुषोंका सङ्ग

करना चाहिये, सज्जन सङ्गकी औषध है ॥५६॥ सत्सङ्ग और विवेक ये दो निर्मलनेत्र हैं, जिसके ये दोनों नहीं है वह अन्धा कुमार्ग गामी कैसे न हो ? ॥५७॥ अपने अपने वर्णाश्रम और आचारमें तत्पर सब मनुष्य दूसरे धर्मको नहीं जानते हैं, दम्भी पुरुष वृथा नष्ट होते हैं ॥५८॥ कर्मोंमें श्रम करनेवाले और व्रतचर्याओंमें भूख प्याससे पीड़ित, जिनके अज्ञानसे चित्त घिरे हैं ऐसे वञ्चक ही

सत्सङ्गश्चविवेकश्चनिर्मलंनयनद्वयम् ॥ यस्यनास्तिनरःसोऽन्धः कथंनस्यादमार्गगः ॥ ५७ ॥ स्वस्ववर्णाश्रमाचारनिरताः सर्वमानवाः ॥ नजानन्तिपरंधर्मंवृथानश्यन्तिदाम्भिकाः ॥५८॥ क्रियायासपराःकेचिद्व्रतचर्यादिसंयुताः ॥ अज्ञानसंवृतात्मानःसंचरन्तिप्रतारकाः ॥ ५९ ॥ नाममात्रेणसन्तुष्टाःकर्मकाण्डरतानराः॥ मन्त्रोच्चारणहोमाद्यैर्भ्रामिताः क्रतुविस्तरैः ॥ ६० ॥ एकभुक्तोपवासाद्यैर्नियमःकायशोषणैः॥मूढाःपरोक्षमिच्छन्तिममभायाविमोहिताः ॥ ६१ ॥ देहदण्डनमात्रेणकामुक्तिरविवेकिनाम् ॥ वल्मीकताडनादेवमृतः कुत्रमहोरगः ॥ ६२ ॥

विचरते हैं ॥५९॥ नाम मात्रसे सन्तुष्ट, कर्मकाण्डमें रत और मन्त्रोच्चारण होम आदि तथा यज्ञोंके विस्तारसे भ्रमित॥६०॥एकबार भोजन करने आदि उपवासादि तथा शरीरको सुखानेवाले नियमोंद्वारा मेरी मायासे मोहित मूढ मनुष्य परोक्ष (मोक्ष) की इच्छा करते हैं ॥६१॥ देहको दण्ड देने मात्रसे ही अविवेकियोंकी क्या मुक्ति होगी ? बाँबीको पीटने मात्रसे ही कहीं बडा सर्प मरता

है ! ॥६२॥ जटाओंके भार और मृगचर्मसे युक्त वेष धारण करनेवाले दम्भी ज्ञानीके समान लोकमें भ्रमण करते हैं और अन्य जनोंको भी भ्रमित करते हैं ॥६३॥ संसारसे उत्पन्न सुखोंमें आसक्त "मैं ब्रह्मज्ञ हूँ" ऐसे कहने वाले और कर्म तथा ब्रह्म दोनोंसे भ्रष्ट पुरुषका अन्त्यजके समान त्याग कर देना चाहिये ॥६४॥ घर और वन जिनके एक जैसा है और जो लोकमें निर्लज्ज होकर

जटाभाराजिनैर्युक्तादाम्भिकावेषधारिणः॥भ्रमन्तिज्ञानिवल्लोकेभ्रामयन्तिजनानपि ॥ ६३ ॥ संसारजसुखासक्तंब्रह्मज्ञोस्मीतिवादिनम्॥कर्मब्रह्मोभयभ्रष्टंतंत्यजेदन्त्यजंयथा ॥ ६४ ॥ गृहारण्यसमालोकेव्रतव्रीडादिगम्बराः ॥ चरन्तिगर्दभाद्याश्चविरक्तास्तेभवन्तिकिम् ॥६५॥ मृद्भस्मोद्धूलनादेवमुक्ताःस्युर्यदिमानवाः॥मृद्भस्मवासीनित्यंश्वासकिंमुक्तोभविष्यति ॥ ६६ ॥ तृणपर्णोदकाहाराःसततंवनवासिनः ॥ जम्बूकाखुमृगाद्याश्चतापसास्तेभवन्तिकिम् ॥ ६७ ॥ आजन्ममरणान्तंचगङ्गादितटिनीस्थिताः॥मण्डूकमत्स्यप्रमुखायोगिनस्तेभवंतिकिम् ॥ ६८ ॥

विचरते हैं वे गर्दभ आदि क्या विरक्त होते हैं ? ॥६५॥ यदि मनुष्य मिट्टी भस्म आदिको देहमेंलगाने ही से मुक्त हो तो नित्य मिट्टी और भस्समें रहनेवाला कुत्ता क्या मुक्त होगा ? ॥६६॥ घास पत्ते और जलका आहार करनेवाले और सदा वनमें रहनेवाले जम्बूक, चूहे, मृग आदि क्या तपस्वी होते हैं ? ॥६७॥ जन्मसे लेकर मरण पर्यन्त गंगा आदि नदियोंमें रहनेवाले मेढक, मछली आदि

क्या योगी होते हैं ? ॥६८॥ पारावत (कपोत) शिलाहारी होते हैं और पपीहे भूमिमें गिरा हुआ जल कभी नहीं पीते हैं तो क्या वे व्रती हो जाते हैं ? ॥६९॥ अतः ये सब कर्म लोक रञ्जनके लिये हैं, हे गरुड ! मोक्षका कारण तो साक्षात् तत्वज्ञान है ॥७०॥ हे गरुड ! षट्दर्शनरूपी महाकूपमें गिरे हुये पशु परमार्थको नहीं जानते हैं और वे पशुओंके बंधनमें बँधे हुये हैं ॥ ७१ ॥ हे गरुड ! वेद शास्त्ररूपी घोर समुद्रमें इधर उधर अर्थात् एक ग्रन्थके पढनेपर दूसरे ग्रन्थके पढने द्वारा व्याकुल किये गये छहों उर्मियोंको (काम

पारावताः शिलाहाराः कदाचिदपिचातकाः ॥ नपिबन्तिमहीतोयंव्रतिनस्तेभवंतिकिम् ॥६९॥तस्मादित्यादिकंकर्मलोकरंजनकारकम् ॥मोक्षस्यकारणंसाक्षात्तत्त्वज्ञानंखगेश्वर ॥ ७० ॥ षड्दर्शनमहाकूपे पतिताः पशवः खग ॥ परमार्थंनजानन्तिपशुपाशनियन्त्रिताः ॥ ७१ ॥ वेदशास्त्रार्णवेघोरेऊह्यमानाइतस्ततः ॥षडूर्मिनिग्रहग्रस्तास्तिष्ठन्तिहिकुतार्किकाः ॥ ७२ ॥ वेदागमपुराणज्ञः परमार्थंनवेत्तियः ॥ विडम्बकस्यतस्यैवतत्सर्वंकाकभाषितम् ॥७३॥इदंज्ञानमिदंज्ञेयमितिचिन्तासमाकुलाः॥पठन्त्यहर्निशंशास्त्रंपरतत्त्वपराङ्मुखाः७४॥

क्रोधादिको) रोकनेसे व्यग्र कुतार्किक कुतर्क केवलसे अद्वैत ज्ञानमें रहते ही हैं उसको जानते नहीं हैं ॥७२॥ वेद शास्त्र और पुराणोंको जाननेवाला जो पुरुष परमार्थको नहीं जानता है उस विडम्बकका वह सब बोलना कौएके काँव काँव करनेके समान व्यर्थ है ॥७३॥ यह ज्ञान है और यह जानने योग्य है, इस चिंतासे व्याकुल और परतत्वसे पराङ्मुख वे रात दिन शास्त्रको पढते हैं ॥७४॥

काव्य अलङ्कारसे शोभित, वाक्य और छन्दोंके निबन्धसे उत्पन्न हुई चिंतासे दुःखी मूढ पुरुष व्याकुलेन्द्रिय (जिसकी इंद्रियाँ व्याकुल हैं) रहता है ॥७५॥ परमतत्व तो अन्यथा है ("तत्त्वमसि" इस गुरूके उपदेशसे जानने योग्य है) और मनुष्य अन्यथा प्रकारसे (कुतर्क बलसे, शास्त्रके पठनसे) उसको जाननेका क्लेश करता है, शास्त्रका सद्भाव तो कुछ और है और व्याख्या कुछ और करता है ॥७६॥ कई उपदेशादिवर्जित स्वानुभवके बिनाही उपशम मुद्रासे ब्रह्म परत्व कहते हैं, अहङ्कारमें लीन वे गुरूपदेश

वाक्यच्छन्दोनिबन्धेनकाव्यालङ्कारशोभिताः ॥ चिन्तयादुःखितामूढास्तिष्ठन्तिव्याकुलेन्द्रियाः ॥७५॥ अन्यथापरमंतत्त्वंजनाः क्लिश्यन्तिचान्यथा ॥ अन्यथाशास्त्रसद्भावोव्याख्यांकुर्वन्तिचान्यथा ॥७६॥ कथयन्त्युन्मनीभावंस्वयंनानुभवन्तिच ॥ अहंकाररताः केचिदुपदेशादिवर्जिताः ॥७७॥ पठन्तिवेदशास्त्राणिबोधयन्तिपरस्परम् ॥ नजानन्तिपरंतत्त्वंदर्वीपाकरसंयथा ॥७८॥ शिरोवहतिपुष्पाणिगंधंजानातिनासिका ॥ पठन्तिवेदशास्त्राणिदुर्लभोभावबोधकः ॥ ७९ ॥

ग्रहण करके स्वयम् अनुभव नहीं करते हैं ॥७७॥ वेद और शास्त्रोंको पढते हैं और परस्पर बोध कराते हैं परन्तु परमतत्वको नहीं जानते हैं जैसे कलछी पाकके रसको नहीं जानती है ॥ ७८ ॥ शिर फूलोंको धारण करता है और गंध नासिका जानती है, वेद और शास्त्रोंको बहुतसे पढते हैं परन्तु भावका बोध करनेवाला दुर्लभ है ॥ ७९ ॥

अपने शरीरमें स्थित तत्वको नहीं जानकर मूर्ख शास्त्रोंमें मोहित होता है,जैसे दुष्टमति गोप बकरेके कोखमें स्थित होते हुये भी कूएमें खोजता है॥८०॥ संसारका मोह नष्ट करनेके लिये शब्द बोध समर्थ नहीं है जैसे दीपककी बात करनेसे अन्धकार नहीं जाता है ॥ ८१ ॥ श्रेष्ठ बुद्धिसे रहित मनुष्यका शास्त्र पढना ऐसे ही है जैसे अन्धेके लिये दर्पण,अतः प्रज्ञावानोंके लिये शास्त्र तत्वज्ञान

तत्त्वमात्मस्थमज्ञात्वामूढःशास्त्रेषुमुह्यति ॥ गोपःकुक्षिगतेछागेकूपेपश्यतिदुर्मतिः॥८०॥ संसारमोहनाशाय शब्दबोधोनहिक्षमः ॥ ननिवर्तेततिमिरंकदाचिद्दीपवार्तया ॥८१॥ प्रज्ञाहीनस्यपठनंयथान्धस्यचदर्पणम् ॥ अतःप्रज्ञावतांशास्त्रंतत्त्वज्ञानस्यलक्षणम् ॥८२ ॥ इदंज्ञानमिदंज्ञेयंसर्वंतु श्रोतुमिच्छति ॥ दिव्यवर्षसहस्रायुः शास्त्रान्तंनैवगच्छति॥८३॥अनेकानिचशास्त्राणिस्वल्पायुर्विघ्नकोटयः ॥तस्मात्सारंविजानीयात्क्षीरंहंसइवाम्भसि ॥८४॥ अभ्यस्यवेदशास्त्राणितत्त्वंज्ञात्वाथबुद्धिमान्॥पललमिवधान्यार्थीसर्वशास्त्राणिसंत्यजेत्॥८५॥

का लक्षण है॥८२॥ यह ज्ञान है और यह जानने योग्य है इन सबकी सुननेकी इच्छा करता है हजार दिव्य वर्षोंकी आयु हो तो भी शास्त्रके अन्तको नहीं प्राप्त होता है ॥८३॥ शास्त्र अनेक हैं और आयु स्वल्प है, उसमें भी करोड़ों विघ्न हैं अतः सारको समझना चाहिये जैसे हंस जलमें से दूधको जान लेता है॥८४॥ बुद्धिमान् पुरुष वेद शास्त्रोंका अभ्यास करके तत्वको जानकर सब शास्त्रोंको

ऐसे छोड दे जैसे धानको चाहनेवाला पुलावको छोड देता है ॥८५॥ जैसे अमृतसे तृप्त पुरुषको आहारसे कोई प्रयोजन नहीं है, हे गरुड ! उसी तरह तत्वज्ञानीको शास्त्रसे कुछ प्रयोजन नहीं है॥८६॥ न वेदोंके अध्ययनसे मुक्ति होती है और नशास्त्र पढनेसे, हे गरुड ! ज्ञानसे ही मुक्ति होती है अन्यथा नहीं होती है ॥८७॥ आश्रम मुक्तिका कारण नहीं है, न दर्शन कारण है और न कर्म, केवल ज्ञानही मुक्तिका कारण है ॥ ८८ ॥ केवल गुरुकी वाणी ही मुक्ति देनेवाली है और सब विद्या विडम्बना करनेवाली हैं,

यथामृतेनतृप्तस्यनाहारेणप्रयोजनम् ॥ तत्त्वज्ञस्यतथाताक्ष्यर्नशास्त्रेणप्रयोजनम् ॥८६॥ नवेदाध्ययनान्मुक्तिर्नशास्त्रपठनादपि ॥ ज्ञानादेवहिकैवल्यंनान्यथाविनतात्मज ॥८७॥ नाश्रमःकारणंमुक्तेर्दर्शनानिनकारणम् ॥ तथैवसर्वकर्माणिज्ञानमेवहिकारणम् ॥ ८८ ॥ मुक्तिदागुरुवागेकाविद्यासर्वाविडम्बिका॥काष्ठभारसहस्रेषुह्येयंसंजीवनंपरम् ॥ ८९ ॥ अद्वैतंहिशिवंप्रोक्तंक्रियायासविवर्जितम् ॥ गुरुवक्त्रेणलभ्येतनाधीतागमकोटिभिः ॥ ९० ॥ आगमोक्तंविवेकोत्थंद्विधाज्ञानंप्रचक्षते ॥ शब्दब्रह्मागममयंपरब्रह्मविवेकजम् ॥ ९१ ॥

काष्ठके हजारों गट्ठोंमें संजीवन काष्ठ एक ही श्रेष्ठ है ॥ ८९ ॥ क्रियामें श्रम रहित अद्वैत शिव कहा है वह गुरुके मुखसे मिलता है, पढे हुये करोडों शास्त्रोंसे भी नहीं मिलता है ॥ ९० ॥ ज्ञान दो प्रकारका कहा जाता है, एक आगममें कहा हुआ और दूसरा विवेकसे उत्पन्न, आगमोक्त तो शब्द ब्रह्म है, तथा विवेकसे उत्पन्न परब्रह्म रूप है ॥ ९१ ॥

कोई अद्वैतकी इच्छा करते हैं और दूसरे द्वैतकी इच्छा करते हैं, द्वैत और अद्वैतसे रहित समतत्वको नहीं जानते हैं॥९२॥ "मेरा नहीं और मेरा है" ये दो पद बंध और मोक्षके लिये हैं, "मेरा" इससे प्राणी बंध जाता है और "मेरा नही" इससे छूट जाता है ॥९३॥ जो बन्धनके लिये न हो वह कर्म है, और जो मुक्तिको देनेवाली हो वह विद्या है, जो कर्म बन्धनके लिये हो वह खेदके लिये ही

अद्वैतंकेचिदिच्छन्तिद्वैतमिच्छन्तिचापरे ॥ समंतत्त्वंनजानन्तिद्वैताद्वैतविवर्जितम् ॥ ९२ ॥ द्वेपदेबन्धमोक्षायनममेतिममेतिच ॥ ममेतिबध्यतेजन्तुर्नममेतिप्रमुच्यते ॥ ९३ ॥ तत्कर्मयन्नबन्धायसाविद्यायाविमुक्तिदा ॥ आयासायापरंकर्मविद्यान्याशिल्पनैपुणम् ॥ ९४ ॥ यावत्कर्माणिदीयन्तेयावत्संसारवासना ॥ यावदिन्द्रियचापल्यंतावत्तत्त्वकथाकुतः ॥९५॥ यावद्देहाभिमानश्चममतायावादेवहि॥यावत्प्रयत्नवेगोऽस्ति यावत्संकल्पकल्पना ॥ ९६ ॥

होता है और अध्यात्म विद्याके अतिरिक्त विद्या शिल्प नैपुण्य हर्म्य आदिके बनानेकी चतुराईकी तरह होती है॥९४॥जब तक कर्म दिये जाते हैं और जबतक इंद्रियोंकी चपलता रहती है तबतक तत्वकी कथा कहाँ ? अर्थात् कहीं नहीं ॥९५॥ जबतक देहका अभिमान है जबतक ममता है और संसारकी वासना रहती है और जबतक प्रयत्नका वेग है और जब तक संकल्पकी कल्पना है ॥९६॥

जबतक मनकी स्थिरता नहीं है तबतक शास्त्र चिंतन नहीं है, जबतक गुरुकी करुणा नहीं है तब तक तत्वकी कथा कहाँ ? ॥९७॥ तप, व्रत, तीर्थ, जप, होम और पूजन आदि वेद शास्त्र और आगम कथा तबतक ही हैं जब तक कि तत्वको प्राप्त नहीं होते हैं ॥ ९८ ॥ अतः हे गरुड ! यदि अपना मोक्ष चाहे तो प्राणीको सब प्रयत्नसे सब अवस्थाओंमें तत्वनिष्ठ होना चाहिये ॥ ९९ ॥ आध्यात्मिक, आधिदैविक, और आधिभौतिक इन तीनों तापोंसे संतप्त मनुष्य, धर्मज्ञान हैं फूल जिसके और

यावन्नोमनसः स्थैर्यंनयावच्छास्त्रचिन्तनम्॥यावन्नगुरुकारुण्यंतावत्तत्त्वकथाकुतः ॥९७॥ तावत्तपोव्रततीर्थंजपहोमार्चनादिकम् ॥ वेदशास्त्रागमकथायावत्तत्त्वंनविन्दति ॥ ९८ ॥ तस्मात्सर्वप्रयत्नेनसर्वावस्थासुसर्वदा ॥ तत्त्वनिष्ठोभवेत्ताक्ष्र्ययदीच्छेन्मोक्षमात्मनः ॥ ९९ ॥ कर्मज्ञानप्रसूनस्यस्वर्गमोक्षफलस्यच॥तापत्रयादिसंतप्तश्छायांमोक्षतरोःश्रयेत् ॥१००॥ तस्माज्ज्ञानेनात्मतत्त्वंविज्ञेयंश्रीगुरोर्मुखात्॥सुखेनमुच्यतेजन्तुर्घोरसंसारबन्धनात्॥१॥तत्त्वज्ञस्यान्तिमंकृत्यंशृणुवक्ष्यामितेऽधुना॥येनमोक्षमवाप्नोतिब्रह्मनिर्वाणसंज्ञकम्॥२॥

स्वर्ग तथा मोक्ष है फल जिसके ऐसे मोक्ष रूपी वृक्षकी छाया का आश्रय लेवे ॥ १०० ॥ अतः ज्ञानके द्वारा भी गुरुके मुख से आत्मतत्व जानना चाहिये, इससे जीव घोर संसार बंधनसे छूट जाता है ॥१०१॥ तत्वज्ञके अन्तिम कृत्यको सुनो मैं तुमको कहता हूँ, जिसके द्वारा मोक्ष तथा निर्वाण संज्ञक ब्रह्मको प्राप्त होता है ॥ १०२ ॥

पुरुष अन्तकाल आनेपर मृत्युके भयसे शून्य होकर असंग रूपी शास्त्रके द्वारा देहमें जो स्पृहा है उसको काटे और देहके अनुगामी जो पुत्र कलत्र आदि हैं उनमें राग रहित होवे ॥३॥ घरसे निकला धीर पुरुष पुण्यतीर्थोंके जलमें स्नान किया हुआ शुद्ध और एकान्त स्थानमें विधिपूर्वक बनाये हुये कुश मृगचर्म और वस्त्रोंसे क्रमसे बनाये आसनपर स्थित होकर ॥४॥ शुद्ध त्रिवृत् अर्थात् आकार उकार और मकार रूप जो पर ब्रह्माक्षर "ॐ कार" है उसका मनसे अभ्यास करे,और श्वाससे जीतकर

अन्तकालेतुपुरुषआगतेगतसाध्वसः ॥ छिन्द्यादसङ्गशस्त्रेणस्पृहांदेहेनुयेचतम् ॥ ३ ॥ गृहात्प्रव्रजितोधीरः पुण्यतीर्थजलाप्लुतः॥ शुचौविविक्तआसीनोविधिवत्कल्पितासने ॥४॥ अभ्यसेन्मनसाशुद्धंत्रिवृद्ब्रह्माक्षरंपरम् ॥ मनोयच्छेज्जितश्वासोब्रह्मबीजमविस्मरन् ॥ ५ ॥ नियच्छेद्विषयेभ्योक्षान्मनसाबुद्धिसारथिः ॥ मनः कर्मभिराक्षिप्तंशुभार्थेधारयेद्धिया ॥ ६ ॥ अहंब्रह्मपरंधामब्रह्माहंपरमंपदम् ॥ एवंसमीक्ष्यचात्मानमात्मन्याधायनिष्कले ॥ ७ ॥

ब्रह्मबीजका स्मरण करता हुआ मनको रोके ॥५॥ बुद्धि है सारथी जिसके ऐसा ही वह प्राणी मनके द्वारा इन्द्रियोंसे रोके और कर्मोंसे प्रेरित मनको बुद्धिसे शुभमें धारण करे ॥ ६ ॥ परम धाम रूप ब्रह्म मैं हूँ और परपद रूप ब्रह्म मै ही हूँ, ऐसे देखकर निरुपाधि आत्मामें अपने को मनसे स्थापित करके ॥ ७ ॥

" ॐ " इस एकाक्षर ब्रह्मका उच्चारण करता हुआ और मेरा स्मरण करता हुआ देहको छोडता पुरुष प्रकर्षसे जाता है अर्थात् अर्चिरादि मार्गोंसे गमन करता है वह परमगतिको प्राप्त होता है ॥ ८ ॥ जहाँ ज्ञान और वैराग्यसे वर्जित दम्भ दिखानेवाले नहीं जाते हैं, ज्ञानी पुरुष जिस गतिको प्राप्त होता है उनको मैं तुमको कहता हूँ॥९॥मान और मोहसे रहित जिन्होंने संगदोष

ओमित्येकाक्षरंब्रह्मव्याहरन्मामनुस्मरन् ॥ यःप्रयातित्यजन्देहंसयातिपरमांगतिम् ॥ ८ ॥ नयत्रदाम्भिकाः यान्तिज्ञानवैराग्यवर्जिताः॥सुधियस्तांगतिंयान्तितामहंकथयामिते ॥ ९ ॥ निर्मानमोहाजितसङ्गदोषाअध्यात्मनित्याःविनिवृत्तकामाः॥ द्वन्द्वैर्विमुक्ताःसुखदुःखसंज्ञैर्गच्छन्त्यमूढाःपदमव्ययंतत् ॥ ११० ॥ ज्ञानह्रदे सत्यजलेरागद्वेषमलापहे ॥ यःस्नातिमानसेतीर्थेसवैमोक्षमवाप्नुयात् ॥ ११ ॥

जीत लिया है ऐसे, आत्मज्ञानमें परिनिष्ठित और विशेष रूपसे दूर हुई है अभिलाषा जिनकी ऐसे और सुखदुःख नाम वाले द्वन्द्वोंसे छोड़े गये ज्ञानी मनुष्य उस अव्यय अविनाशी पदको प्राप्त होते हैं ॥११०॥ ज्ञानरूपी कुण्डमें सत्यरूपी जल है जो राग तथा द्वेषरूपी मलको दूर करनेवाला है ऐसे मानस तीर्थमें जो स्नान करता है वह मोक्षको प्राप्त होता है ॥ ११॥

प्रौढ वैराग्य में स्थित होकर अन्य को न भजता हुआ जो मुझको भजता है, पूर्णदृष्टि प्रसन्नात्मा वह निश्चय मोक्षको प्राप्त होता है ॥ १२ ॥ जो मरने में उत्कण्ठित हो घर को छोडकर तीर्थ में वास करता है, और मुक्तिको देनेवाले क्षेत्रों में मरता है वह मोक्षको प्राप्त होता है ॥ १३ ॥ अयोध्या १ मथुरा २ गया ३ काशी ४ कांची ५ अवन्तिका ६ पुरी ७ ये सात पुरियाँ मोक्ष

प्रौढवैराग्यमास्थायभजतेमामनन्यभाक् ॥ पूर्णदृष्टिःप्रसन्नात्मासवैमोक्षमवाप्नुयात् ॥ १२ ॥ त्यक्त्वागृहंच यस्तीर्थेनिवसेन्मरणोत्सुकः ॥ म्रियतेमुक्तिक्षेत्रेषुसवैमोक्षमवाप्नुयात् ॥ १३ ॥ अयोध्यामथुरामायाकाशी काञ्चीह्यवन्तिकाः॥पुरीद्वारावतीज्ञेयासप्तैतामोक्षदायिकाः ॥१४॥ इतितेकथितस्तार्क्ष्यमोक्षधर्मःसनातनः ॥ ज्ञानवैराग्यसहितोयंश्रुत्वामोक्षमाप्नुयात् ॥ १५ ॥ मोक्षंगच्छन्तितत्त्वज्ञाधार्मिकाःस्वर्गतिंनराः ॥ पापिनोदुर्गतियान्तिसंसरन्तिखगादयः ॥ १६ ॥ इत्येवंसर्वशास्त्राणांसारोद्धारोनिरूपितः ॥ मयातेषोडशाध्यायैः किंभूयः श्रोतुमिच्छसि ॥ १७ ॥

को देनेवाली हैं ॥ १४ ॥ हे गरुड़ ! मैंने तुमसे इस तरह सनातन मोक्षधर्म कहा, ज्ञान और वैराग्य समेत इसको सुनकर मोक्ष को प्राप्त होवे ॥ १५ ॥ तत्व को जाननेवाले मोक्षको प्राप्त होते हैं और धर्म करने वाले नर स्वर्ग को जाते हैं, पापी दुर्गतिको प्राप्त होते हैं और पक्षी आदि यहाँ उत्पन्न होते हैं और यहीं मरते हैं ॥ १६ ॥ इस प्रकार सब शास्त्रोंका सारोद्धार मैंने तुमको सोलह अध्यायों

में निरूपित किया है, अब और क्या सुनना चाहते हो ॥ १७ ॥ सूतजी बोले ॥ हे राजन् ! भगवान् के मुखसे इस प्रकार वचन सुनकर गरुड उनको बार बार प्रणाम कर हाथ जोड़कर यह बोले ॥ १८ ॥ हे भगवन् ! हे देव देवेश ! हे प्रभो ! आपने मुझे अमृत रूपी वचन सुनाकर भवसागर से पार किया ॥१९॥ अब मैं सन्देह रहित स्थित हूँ और कृतार्थ हूँ इसमें सन्देह नहीं है, ऐसे कहकर

सूतउवाच॥एवंश्रुत्वावचोराजन्गरुडोभगवन्मुखात् ॥ कृताञ्जलिरुवाचेदंतंप्रणम्यमुहुर्मुहुः ॥ १८ ॥ भगवन्देवदेवेशश्रावयित्वावचोऽमृतम् ॥ तारितोहंत्वयानाथभवसागरतः प्रभो॥१९॥ स्थितोस्मिगतसन्देहः कृतार्थोस्मिनसंशयः ॥ इत्युक्त्वागरुडस्तूष्णींस्थित्वाध्यानपरोऽभवत् ॥१२०॥ स्मरणाद्दुर्गतिहर्तापूजनयज्ञेनसद्गतेर्दाता ॥ यः परयानिजभक्त्याददातिमुक्तिसमांहरिः पातु ॥१२१॥ इति श्रीगरुडपुराणेसारोद्धारेभगवद्गरुडसंवादेमोक्षधर्मनिरूपणोनामषोडशोऽध्यायः ॥ १६ ॥

गरुड चुपचाप बैठकर ध्यान में तत्पर हुये ॥ १२० ॥ स्मरण मात्रसे दुर्गति को हरने वाले और पूजन रूपी यज्ञ से उत्तम गति को देने वाले और अपनी परम भक्ति से मुक्ति को देने वाले भगवान् हरि मेरी रक्षा करें ॥ १२१ ॥ इति श्री गरुड पुराण सारोद्धार हिन्दीटीका में सोलहवां अध्याय समाप्त हुआ ॥ १६ ॥

श्री गणेशायनमः ॥ श्री भगवान् बोलेः--हे गरुड ! मैंने तुमको सब और्ध्व देहिक (मरने के बाद के कर्म) कहे, जिनको दश दिनके अन्दर सुनकर मनुष्य सब पापों से छूट जाता है ॥ १ ॥ यह आमुष्मिक कर्म पितरों को मुक्ति देने वाला है और पुत्र वाञ्छित कामना को देनेवाला है परलोक तथा इस लोक में सुख को देनेवाला है ॥ २ ॥ जो नास्तिक अधम नर इस कर्म को नहीं करते हैं

श्रीभगवानुवाच ॥ इत्याख्यातंमयाताक्ष्यसर्वमेवौर्ध्वदेहिकम् ॥ दशाहाभ्यन्तरेश्रुत्वा सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥ १ ॥ इदंचामुष्मिकंकर्मपितृमुक्तिप्रदायकम् ॥ पुत्रवांछितदंचैवपरत्रेहसुखप्रदम् ॥ २॥ इदंकर्मनकुर्वन्ति येनास्तिकनराधमाः ॥ तेषांजलमपेयंस्यात्सुरातुल्यंनसंशयः ॥ ३ ॥ देवतापितरश्चैवनैवपश्यन्तितद्गृहम् ॥ भवन्तितेषांकोपेनपुत्राःपौत्राश्चदुर्गताः ॥४ ॥ ब्राह्मणाःक्षत्रियावैश्याःशूद्राश्चैवेतरेपिच ॥ तेचांडालसमाज्ञेयाः सर्वेप्रेतक्रियांविना॥५॥प्रेतकल्पमिदंपुण्यंशृणोतिश्रावयेच्चयः ॥ उभौतौपापनिर्मुक्तौदुर्गतिंनैवगच्छतः॥६॥

उनका जल सुरा के तुल्य नहीं पीने योग्य है, इसमें सन्देह नहीं ॥ ३ ॥ देवता तथा पितर उसके घर को नहीं देखते हैं उनके कोप से पुत्र पौत्र सब दरिद्री होते हैं ॥ ४ ॥ ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र तथा अन्य भी सब प्रेत क्रियाके विना चाण्डाल के समान जानने चाहिये ॥ ५ ॥ इस पवित्र प्रेतकल्प को जो सुनता है तथा सुनाता है वे दोनों पाप से छूटकर दुर्गतिको नहीं प्राप्त होते हैं ॥ ६ ॥

हे गरुड ! माता पिता के मरने पर जो इसको सुनता है उसके माता पिता मुक्ति को प्राप्त होते हैं और वह पुत्र संतति वाला होताहै ॥ ७ ॥ जिसने न गरुडपुराण सुना, न गया श्राद्ध किया, न वृषोत्सर्ग किया और न मासिक तथा वार्षिक श्राद्ध किया ॥ ८ ॥ वह कैसे पुत्र कहा जाय और तीनों प्रकार के ऋण से कैसे छूटे और माता पिता को तारने में कैसे समर्थ हो ? ॥ ९ ॥ अतः सब प्रयत्नों

मातापित्रोश्चमरणेसौपर्णशृणुतेतुयः॥पितरौमुक्तिमापन्नौ सुतःसन्ततिमान्भवेत् ॥ ७ ॥ नश्रुतंगारुडंयेनगया श्राद्धंचनोकृतम् ॥ वृषोत्सर्गःकृतोनैवनचमासिकवार्षिके ॥ ८ ॥ सकथंकथ्यतेपुत्रः कथंमुच्येदृणत्रयात् ॥ मातरंपितरंचैवकथंतारयितुंक्षमः ॥ ९ ॥ तस्मात्सर्वप्रयत्नेनश्रोतव्यंगारुडंकिल ॥ धर्मार्थकाममोक्षाणांदा यकंदुःखनाशनम् ॥ १० ॥ पुराणंगारुडंपुण्यंपवित्रंपापनाशनम् ॥ शृण्वतांकामनापूरंश्रोतव्यंसर्वदैवहि ॥ ११ ॥ ब्राह्मणोलभतेविद्यांक्षत्रियःपृथिवीं लभेत् ॥ वैश्योधनिकतामेतिशूद्रः शुध्यतिपातकात् ॥ १२ ॥

से गरुड पुराण निश्चय सुनना योग्य है, यह धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष को देने वाला है और दुःख का नाश करने वाला है ॥ १० ॥ यह गरुडपुराण पवित्र करने वाला और पापों का नाश करने वाला है, सुनने वालों की कामना को पूर्ण करता है, अतः सदा सुनना चाहिये ॥ ११ ॥ ब्राह्मण विद्या को प्राप्त करे, क्षत्रिय पृथ्वी को प्राप्त करे, वैश्य धनवान् हो और शूद्र पातक से शुद्ध हो जाता है ॥ १२ ॥

सुनकर बाँचनेवालेको सब दान देना चाहिये और पहिले कहे हुये शय्यादान आदि देने चाहिये, अन्यथा सफल नहीं होता है। ॥१३॥ पहले पुराणकी पूजा करे, उसके बाद कथा कहने वालेकी वस्त्र, अलङ्कार, गोदान और दक्षिणासे आदर पूर्वक पूजाकरे ॥१४॥ अन्न, स्वर्णका दान, और बहुतसे भूमिदानसे बहुतसे फलकी प्राप्तिके लिये भक्तिसे बाँचने वालेकी पूजा करे ॥ १५ ॥

श्रुत्वादानानिदेयानिवाचकायाखिलानिच ॥ पूर्वोक्तशयनादीनिनान्यथासफलंभवेत् ॥ १३ ॥ पुराणंपूजयेत्पूर्वंवाचकंतदनंतरम् ॥ वस्त्रालंकारगोदानैर्दक्षिणाभिश्चसादरम् ॥ १४ ॥ अन्नैश्चहेमदानैश्चभूमिदानैश्चभूरिभिः ॥ पूजयेद्वाचकंभक्त्याबहुपुण्यफलाप्तये ॥ १५ ॥ वाचकस्यार्चनेचैवपूजितोहंनसंशयः ॥ सन्तुष्टेतुष्टतांयामिवाचकेनात्रसंशयः ॥ १६ ॥ इति श्रीगरुडपुराणश्रवणफलम् ॥

बांचने वालेकी पूजा करनेसे मैं पूजित होता हूँ इसमें सन्देह नहीं है, बांचने वालेके सन्तुष्ट होनेपर मैं सन्तुष्ट होता हूँ इसमें भी सन्देह नहीं है ॥ १६ ॥

॥ इति श्री गरुडपुराणश्रवणफल समाप्त हुआ ॥

श्रीः ॥ आसीद्वक्तापुराणस्य श्रीशार्दूलमहीपतेः ॥ झुंझुणूनगरस्यापिमिश्रः श्रीसुखलालजी ॥१॥तस्यश्रीहरिनारायणात्मजस्तत्सुतेन तु ॥ मा (म) या नौनिधिरामेण कृतोयंसारसंग्रहः ॥२॥ प्राचीनैर्यत्कृतःपूर्वंगारुडःसारसंग्रहः॥ सतुनो बुद्धिदौर्बल्याज्ज्ञातस्तस्मादयं कृतः ॥३॥ पुनरुक्तिपरित्यज्यक्रमेणायंमयाकृतः॥बालानांसुखबोधायनतुपांडित्यगर्वतः ॥४॥ अत्राप्रमाणयत्किंचित्प्रमादाल्लिखितं मया॥विद्वद्भिःसुविचार्यैव शोधनीयोनसूयिभिः॥५॥सारोद्धारोमया मूलैर्बहुग्रन्थैर्यथाकृतः ॥ तथैवानेकटीकाभिरुद्धृतः सारसंग्रहः॥ ॥६॥ महाखेदान्मयातत्रयथास्थानंनियोजितः ॥ प्राज्ञंविनाप्रयासंमेकोज्ञास्यतिविमूढधीः ॥ ७ ॥ विद्वानेवहिजानातिविद्वज्जनपरिश्रमम् ॥ नहिवन्ध्याविजानातिगुर्वीप्रसववेदनाम्॥८॥ये पूर्वसंग्रहेमूढानैवजानंतियोग्यताम् ॥ ते कथंहिभविष्यन्तिहर्षिताःपठनेऽस्य च ॥९॥सारोद्धारमिमंमिश्राःपठन्तुनपठन्तु वा ॥मयातुस्वीयबोधायकृतमेतन्नसंशयः ॥१०॥ मङ्गलंभगवान्विष्णुर्मङ्गलंगरुडध्वजः॥ मंगलंपुण्डरीकाक्षोमंगलायतनोहरिः ॥११॥ लाभस्तेषांजयस्तेषांकुतस्तेषांपराजयः ॥ येषामिन्दीवरश्यामोहृदयस्थोजनार्दनः॥१२॥ राजानःपरिपालयन्तुवसुधांधर्मेस्थिताःसर्वदापृथ्वीकामदुघाभवत्वविरलंवर्षन्तुकालेघनाः॥ईर्ष्यांमुञ्झतुदुर्जनःपरगुणेष्वासज्जतांसज्जनः सत्काव्यामृतवर्षिणीकविमुखेवाणीचिरंनन्दतु॥१३॥ इति श्रीगरुडपुराणेस्वकृतश्लोकाः समाप्ताः॥प्रथमाध्यायेऐहिकामुष्मिकदुःख, निरूपणं श्लोकाश्च ॥६०॥द्वितीयेयममार्गनिरूपणम् ॥८६॥ तृतीयेयमयातनानिरूपणम्॥७१॥चतुर्थेनरकप्रदपापनिरूपणम्॥१०४॥ पञ्चमेपापचिह्ननिरूपणम्॥५८॥षष्ठेपापिनांजन्मादिदुःखनिरूपणम्॥४३॥ एवंषडध्यायैःपापगतिः॥सप्तमेबभ्रुवाहनप्रेतसंवादः॥६८॥ अष्टमेआतुरदानम् ॥११८॥ नवमेम्रियमाणकृत्यम् ॥४८॥ दशमेदाहास्थिसञ्चयकर्मनिरूपणम् ॥१०४॥ एकादशेदशगात्रविधिः

॥ ४२ ॥ द्वादशेएकादशाह विधिः ॥ ८० ॥ त्रयोदशेसपिण्डीशय्यापददाननिरूपणम् ॥ १२३ ॥ चतुर्दशेधर्मराजनगरनिरूपणम् ॥ ८६ ॥ पञ्चदशेसुकृतिजन्माचरणनिरूपणम् ॥ ९४ ॥ षोडशेध्यायेमोक्षनिरूपणमिति ॥ १२१ ॥ मूलसङ्ख्या ॥ १२८७ ॥ सटिका सा ॥ ३१०० ॥ फलम् ॥ ३२ ॥ इति श्रीगरुडपुराणं समाप्तम् ॥

अथ गरुड पुराणसारोद्धारस्यावतरणिका

पहले अध्यायमें ऐहिक आमुष्मिकदुःखका निरूपण श्लोक ६०, द्वितीय अध्यायमें यमके मार्गका निरूपण श्लोक ८६, तृतीय अध्यायमें यमकी यातनाका निरूपण श्लोक७१, चतुर्थ अध्यायमें नरकदेनेवाले पापोंका निरूपण श्लोक १०४, पंचममें पापके चिह्नकानिरूपण श्लोक५८,छठवेंमें पापियोंके जन्म आदिदुःखका निरूपण श्लोक४३,इस प्रकार छःअध्यायोंसे पापकी गति कही॥ सातवेंमेंबभ्रुवाहन प्रेतका संवाद श्लोक ६८, आठवेंमें आतुरका दान श्लोक११८,नवममें म्रियमाणके कृत्य श्लोक ४८, दशममें दाहअस्थिसंचयकर्मका निरूपण श्लोक १०४, ग्यारहवेंमें दशगात्रकी विधि श्लोक४२,बारहवेंमें एकादशाहकी विधि श्लोक ८९,तेरहवेंमें सपिंडी शय्या और पददानका निरूपण श्लोक १२३, चौदहवेंमें धर्मराजके नगरका निरूपण श्लोक ८६, पन्द्रहवेंमें सुकृतीके जन्म तथा आचरणका निरूपण श्लोक ९४ सोलहवेंमें मोक्षधर्मका निरूपण १२१, मूलसंख्या १२८७; सटीक ३१००, इति गरुडपुराणस्यावतरणिका ॥



इति गरुडपुराणं हिन्दीटीकासमेतं समाप्तम्

इदं पुस्तकं क्षेमराज-श्रीकृष्णदास श्रेष्ठिना मुम्बय्यां (खेतवाडी ७ वीं गल्ली खम्बाटा लेन) स्वकीये "श्रीवेङ्कटेश्वर" (स्टीम्) मुद्रणागारेऽङ्कयित्वा प्रकाशितम् ।

विदुषामभ्यर्थना।

अत्रास्माकं मुद्रणालये ऋगादयो वेदा उपनिषदो वेदान्तग्रन्था महाभारतादीतिहासाः श्रीमद्भागवतादिमहापुराणोपपुराणानि धर्मशास्त्र-कर्मकाण्ड-व्याकरण-न्याय-योग-सांख्य-मीमांसादिशास्त्रीयग्रन्थाः काव्य-नाटक-चम्पू-प्रभृतयो ग्रन्थाः सहस्रनामाद्यनेकस्तोत्रग्रन्था विविधभाषाग्रन्थाश्च सीसकोत्तममहल्लघ्वक्षरैर्मनोहरं मुद्रिता योग्यमूल्येन क्रय्याः सन्ति, तांश्च ग्राहका यथापुस्तकसूचीपत्रं मूल्यप्रेषणेन प्राप्नुयुः।

क्षेमराज-श्रीकृष्णदासः " श्रीवेङ्कटेश्वर " स्टीम्-मुद्रणालयाध्यक्षः, मुंबईस्थः।

मुद्रक एवं प्रकाशक:

खेमराज श्रीकृष्णदास,

अध्यक्ष : श्रीवेंकटेश्वर प्रेस,

खेमराज श्रीकृष्णदास मार्ग, मुंबई - ४०० ००४.

पुस्तकें मिलने के स्थान

१) खेमराज श्रीकृष्णदास,
श्रीवेंकटेश्वर स्टीम प्रेस,
खेमराज श्रीकृष्णदास मार्ग,
खेतवाडी, मुंबई - ४०० ००४.

२) खेमराज श्रीकृष्णदास,
६६, हडपसर इण्डस्ट्रिअल इस्टेट
पुणे - ४११ ०१३.

३) गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास
लक्ष्मीवेंकटेश्वर स्टीम प्रेस,
व बुक डिपो,
अहिल्याबाई चौक, कल्याण
(जि. ठाणे - महाराष्ट्र)

४) खेमराज श्रीकृष्णदास,
चौक - वाराणसी (उ.प्र.)

इति गरुडपुराणं हिन्दीटीकासमेतं समाप्तम्

हमारे प्रकाशनों की अधिक जानकारी व खरीद के लिये हमारे निजी स्थान

खेमराज श्रीकृष्णदास
अध्यक्ष : श्रीवेंकटेश्वर प्रेस,
९१/१०९, खेमराज श्रीकृष्णदास मार्ग,
७ वी खेतवाडी बॅक रोड कार्नर,
मुंबई - ४०० ००४.
दूरभाष/फैक्स-०२२-२३८५७४५६.

खेमराज श्रीकृष्णदास
६६, हडपसर इण्डस्ट्रियल इस्टेट,
पुणे - ४११ ०१३.
दूरभाष-०२०-२६८७१०२५.

गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास,
लक्ष्मी वेंकटेश्वर प्रेस व बुक डिपो
श्रीलक्ष्मीवेंकटेश्वर प्रेस बिल्डींग,
जूना छापाखाना गली, अहिल्याबाई चौक,
कल्याण, जि. ठाणे, महाराष्ट्र - ४२१ ३०१
दूरभाष - ०२५१-२२०९०६१.

खेमराज श्रीकृष्णदास
चौक, वाराणसी (उ.प्र.) २२१ ००१.
दूरभाष - ०५४२-२४२००७८

KHEMRAJ SHRIKRISHNADASS